## हमारे सुन्दर और उपयोगी प्रकाशन

| | | |
|---|---|---|
| शपथ (पुरस्कृत नाटक) | हरिकृष्ण 'प्रेमी' | २.५० |
| यशस्वी भोज (पुरस्कृत नाटक) | देवराज 'दिनेश' | २.०० |
| युगपुरुष राम (पुरस्कृत सचित्र) | अक्षयकुमार जैन | ५.०० |
| काली लड़की (उपन्यास) | रजनी पनिकर | ३.०० |
| अशू (उपन्यास) | अमृता प्रीतम | ३.०० |
| सिद्धार्थ (हरमन हेस) | अनु० महावीर अधिकारी | ३.०० |
| कदम-कदम बढ़ाये जा (वीररसपूर्ण खंड-काव्य) | गोपालप्रसाद व्यास | १.५० |
| दमयन्ती (महाकाव्य) | ताराचन्द्र हारीत | ८.०० |
| चन्देरी का जौहर (पुरस्कृत सचित्र खण्ड-काव्य) | आनन्द मिश्र | २.०० |
| धरती के बोल (सचित्र कविता संग्रह) | जयनाथ 'नलिन' | ३.५० |
| सागर के सीप (सचित्र कविता संग्रह) | भारत भूषण | ३.५० |
| राष्ट्रपति और राष्ट्रपति-भवन (सचित्र) | वाल्मीकि चौधरी | ६.०० |
| मुगल साम्राज्य की जीवन-सन्ध्या | राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह | ६.०० |
| मनोरम कश्मीर (सचित्र) | मोहनकृष्ण दर | ५.०० |
| क्रान्तिवाद | विश्वनाथराय | ५.०० |
| प्रेमचन्द घर में | शिवरानी देवी प्रेमचन्द | ७.५० |
| संसार के महान् युग-प्रवर्तक | प्रो० इन्द्र | ३.०० |
| हमारे राष्ट्रपिता | गोपालप्रसाद व्यास | २.०० |
| महान् भारतीय (सचित्र) | ब्रह्मवती नारंग | २.५० |
| रूसी क्रांति के अग्रदूत (सचित्र) | राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह | ४.०० |
| शिवालक की घाटियों में (पुरस्कृत सचित्र) | श्री निधि | ५.०० |
| वनराज के राज में (पुरस्कृत सचित्र) | विराज, एम. ए. | ४.०० |
| सचित्र गृह-विनोद (पुरस्कृत) | अरुण, एम. ए. | ८.०० |
| सचित्र व्यंग-विनोद | अरुण, एम. ए. | ७.०० |
| पृथ्वी-परिक्रमा (सचित्र) | सेठ गोविन्ददास | १२.०० |
| पारिवारिक-समस्याएं (पुरस्कृत सचित्र) | सावित्रीदेवी वर्मा | ७.५० |

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-६

२०२
जीजनी

५६९०

मंडल व हिन्दी का अन्य ... प्रचार होता है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:–हिन्दी ... मंदिर
उत्तम पुस्तकें हमारे यहां

अमर शहीद श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल'

आत्मकथा

# रामप्रसाद 'बिस्मिल'

२०२
जीवनी

सम्पादक
बनारसीदास चतुर्वेदी

५८२०

आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

... प्रचार होगा।
व हिन्दी की सभी उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
। पता:-हिन्दी ...

# प्रकाशकीय

अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' की आत्मकथा छापने का जो सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ है तदर्थ हम इस ग्रंथमाला के अवैतनिक सम्पादक श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के ऋणी तथा कृतज्ञ हैं। 'काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक की एक प्रति पंडित झावरमल्ल जी शर्मा के पुस्तकालय से मिल सकी और इसलिये उनको भी धन्यवाद देना हमारा कर्त्तव्य है।

सम्पादक महोदय का अनुरोध है कि इस पुस्तक की रायल्टी शहीदों के श्राद्धकार्य में ही व्यय की जाय और यह हमें सर्वथा मान्य है।

हमारा विश्वास है कि हिन्दी जनता द्वारा 'शहीद-ग्रन्थ-माला' का हार्दिक स्वागत होगा और इस महत्त्वपूर्ण पुस्तक के कई संस्करण हिन्दी में शीघ्र ही खप जायेंगे।

*—रामलाल पुरी, संचालक*

COPYRIGHT © ATMA RAM & SONS, DELHI-6

प्रकाशक

रामलाल पुरी, संचालक

आत्माराम एण्ड संस

काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

| | | |
|---|---|---|
| मूल्य | : | दो रुपये ५० नये पैसे |
| प्रथम संस्करण | : | जुलाई, १९५८ |
| आवरण | : | ना० मा० इंगोले |
| मुद्रक | : | मूर्वीr [illegible] |

## सम्पादकीय

### *हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ आत्मकथा*

आत्मचरित लिखना कोई आसान काम नहीं, क्योंकि पहले तो अपने-आप को पहचानना ही मुश्किल है और फिर पाठकों के सम्मुख अपनी जिन्दगी के किन अंशों को लाना उचित है और किन को न लाना, यह निर्णय करना कठिन है; और इन सब से अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या हमारे जीवन में कोई ऐसी विशेष बात है भी, जिसका वर्णन किया जाय ? वैसे तो यदि कोई निर्जीव व्यक्तित्व वाला भी ईमानदारी के साथ अपनी निर्जीवता का वर्णन कर सके और उसके कारण भी बतला सके तो वह एक मनोरंजक तथा उपदेशप्रद आत्मचरित लिख सकता है, पर दूसरों के जीवन में स्फूर्ति उत्पन्न करने वाला आत्मचरित लिखना किसी सजीव व्यक्तित्व वाले पुरुष का ही काम है ।

हिन्दी तथा अंग्रेजी के अनेक आत्मचरितों को पढ़ने का अवसर हमें मिला है और हम बिना किसी संकोच के कह सकते हैं कि रामप्रसाद 'बिस्मिल' का आत्मचरित हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ आत्मचरित है । जिन परिस्थितियों में वह लिखा गया था, उनके बीच में से गुजरने का मौका लाखों में एकाध को ही मिल सकता है । जरा इस वाक्य पर ध्यान दीजिए—

"आज १६ दिसम्बर, १९२७ को निम्नलिखित पंक्तियों का उल्लेख कर रहा हूँ, जब कि १९ दिसम्बर १९२७ ई० सोमवार (पौष कृष्ण ११ सम्वत् १९८४ वि०) को ६॥ बजे प्रातःकाल इस शरीर को फाँसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है । अतएव नियत समय पर इह-लीला संवरण करनी होगी ही ।"

और १९ दिसम्बर को वन्देमातरम् और भारत माता की जय कहते हुए वे फाँसी के तख्ते के निकट गये । चलते समय वह कह रहे थे—

"मालिक तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे,
बाकी न मैं रहूँ, न मेरी आरजू रहे ।

[illegible] व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां [illegible] होगा ।
है । बड़ा सूचीपत्र मंगावें । पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर अजमेर

जब तक कि तन में जान, रगों में लहू रहे,
तेरा ही ज़िक्र या तेरी ही जुस्तजू रहे।"

तत्पश्चात उन्हों ने कहा—

"I wish the downfall of the British Empire."

(मैं ब्रिटिश साम्राज्य का विनाश चाहता हूँ) फिर वह तख्ते पर चढ़े और 'विश्वानिदेव सवितुर्दुरितानि' मन्त्र का जाप करते हुए फन्दे से झूल गए !

वह शानदार मौत जो 'बिस्मिल' को प्राप्त हुई, शायद लाखों में दो-चार को ही मिल सकती है।

बिस्मिल का जन्म सन् १८९७ में हुआ था और सन् १९२७ में वह शहीद हुए, यानी कुल जमा उन्होंने तीस वर्ष की उम्र पाई, जिनमें ११ वर्ष क्रान्तिकारी जीवन में व्यतीत हुए।

क्या भाषा और क्या भाव, दोनों की दृष्टियों से बिस्मिल का आत्मचरित एक अद्भुत ग्रन्थ है। जब हमने पहले-पहल पुस्तक को समाप्त किया, तो हम स्तब्ध रह गए। सोचने लगे कि इतना महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ इतने वर्षों तक उपेक्षित क्यों पड़ा रह गया ? निस्सन्देह 'काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक को ब्रिटिश सरकार ने ज़ब्त कर लिया था, फिर भी स्वाधीनता प्राप्ति के बाद तो वह छप ही सकती थी। शायद उससे पहले भी छप जाती। बहुत कुछ सोचने के बाद हम इस परिणाम पर पहुँचे कि सारा दोष उस कृतघ्नतापूर्ण वातावरण का है, जो इस देश में वर्षों से व्याप्त है। क्या राजनीतिक और क्या साहित्यिक, दोनों ही क्षेत्रों में कृतज्ञता नामक गुण का लोप हो रहा है और उसकी जिम्मेदारी मुख्यतया लेखकों तथा समालोचकों पर है। पिछले वर्षों में सैकड़ों-सहस्रों ही वृथापुष्ट पोथे हिन्दी प्रकाशकों ने छापे होंगे, पर बिस्मिल के इस ओजस्वी आत्मचरित पर किसी की निगाह नहीं पड़ी ! क्या डेढ़ सौ पृष्ठ की किताब का छापना भी कोई असम्भव कार्य था ? पर रोडरबाज़ी में व्यस्त हिन्दी लेखकों तथा प्रकाशकों में इतनी कल्पना-शक्ति या जीवन-शक्ति कहाँ है, जो वे बिस्मिल के उज्ज्वल आत्मचरित की ओर देखते !

क्या हाथ देखता है मेरा छोड़ दे तबीब !
यां जान ही बदन में नहीं नब्ज़ क्या चले ?

जिस कृतघ्न हिन्दी-जगत में शहीद शिरोमणि गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा जेल में किया हुआ विक्टर ह्यूगो के 'लै मिजरेबिल' का अनुवाद २५।२६ वर्ष से पड़ा हुआ है, वहाँ बिस्मिल की आत्मकथा को कौन पूछता ? भला हो श्री रामलालजी पुरी का, जिन्होंने मेरे आग्रह पर इस ग्रन्थ को छापना स्वीकार कर लिया।

बिस्मिल ने अपने पूर्वजों का जो वृत्तान्त प्रारम्भिक पृष्ठों में दिया है, वह बड़ा आकर्षक है। वे लोग ग्वालियर राज्य के चम्बल के किनारे के ग्रामों के निवासी थे। बिस्मिल के बाबा गृह-कलह के कारण अपना गाँव छोड़कर शाहजहाँपुर आ बसे थे। यहाँ उनकी दादी को जो घोर कष्ट सहने पड़े उनकी कथा बड़ी हृदय-वेधक है। बिस्मिल ने जो कुछ लिखा है वह अपने हृदय के रक्त से लिखा है और कहीं-कहीं तो उनका गद्य अपनी भाषा तथा भाव के कारण उच्च कोटि के काव्य की सीमा तक पहुँच गया है। उदाहरण के लिए अशफाक पर लिखे गए उनके शब्द गद्य-काव्य कहे जा सकते हैं—

"मुझे यदि सन्तोष है तो यही कि तुमने संसार में मेरा मुख उज्ज्वल कर दिया। भारत के इतिहास में यह घटना भी उल्लेख योग्य हो गई कि अशफ़ाक उल्ला ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग दिया। जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर तथा आत्मा से उच्च सिद्ध हुए। इन सबके परिणाम-स्वरूप अदालत में तुमको मेरा सहकारी (लेफ्टीनेण्ट) ठहराया गया और जज ने हमारे मुकदमे का फैसला लिखते समय तुम्हारे गले में भी जयमाल (फाँसी की रस्सी) पहना दी। प्यारे भाई, तुम्हें यह समझ कर सन्तोष होगा कि जिसने अपने माता-पिता की धन-सम्पत्ति को देश-सेवा में अर्पण करके उन्हें भिखारी बना दिया, जिसने अपने सहोदर के भावी भाग्य को भी देश-सेवा की भेंट कर दिया, जिसने अपना तन-मन-धन सर्वस्व मातृ-सेवा में अर्पण करके अपना अन्तिम बलिदान भी दे दिया, उसने अपने प्रिय सखा अशफ़ाक को भी उसी मातृभूमि की भेंट चढ़ा दिया।

'असगर' रहीम इश्क में हस्ती ही जुर्म है,
रखना कभी न पाँव यहाँ सिर लिए हुए।

व-महल व दुन्या का अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहाँ ... अच्छा प्रचार होगा।
... बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर ...

यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि काकोरी-केस के अभियुक्तों में अशफ़ाक का चरित्र ही सर्वश्रेष्ठ रहा, अतः उनके बलिदान पर बिस्मिल का अभिमान सर्वथा स्वाभाविक था।

अपनी पूज्य माता जी के विषय में लिखते हुए भी बिस्मिल की कलम ने कमाल कर दिखाया है—

"इस संसार में मेरी किसी भी भोग-विलास तथा ऐश्वर्य की इच्छा नहीं। केवल एक तृष्णा है, वह यह कि एक बार श्रद्धापूर्वक तुम्हारे चरणों की सेवा करके अपने जीवन को सफल बना लेता। किन्तु यह इच्छा पूर्ण होती नहीं दिखाई देती और तुम्हें मेरी मृत्यु का दुःखपूर्ण संवाद सुनाया जाएगा। माँ, मुझे विश्वास है कि तुम यह समझकर धैर्य धारण करोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओं की माता—भारत माता—की सेवा में अपने जीवन को बलि-वेदी की भेंट कर गया और उसने तुम्हारी कुक्षि को कलंकित न किया। अपनी प्रतिज्ञा में दृढ़ रहा। जब स्वाधीन भारत का इतिहास लिखा जायगा, तब उस के किसी पृष्ठ पर उज्ज्वल अक्षरों में तुम्हारा भी नाम लिखा जायगा।"

बिस्मिल ने आगे चलकर लिखा था—

"जन्मदात्री! वर दो कि अन्तिम समय भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो और तुम्हारे चरण-कमलों को प्रणाम कर मैं परमात्मा का स्मरण करता हुआ शरीर त्याग करूँ।"

निस्सन्देह पूज्य माता के आशीर्वाद से बिस्मिल ने सर्वथा धैर्यपूर्वक अपने प्राणों का बलिदान किया। इस आत्मचरित की उपमा हम किसी महत्त्वपूर्ण नाटक से दे सकते हैं, जिसके दृश्य एक-से-एक बढ़कर रोमांचकारी हों। एक दृश्य के बाद दूसरा दृश्य आता है और हृदय पर अमिट छाप छोड़ जाता है। जहाँ बिस्मिल की निर्भयता, दृढ़ता और लगन तथा नेतृत्व का प्रभाव हमारे ऊपर पड़ता है, वहाँ उन के मनुष्यत्त्व की भी गहरी छाप पड़ती है। विश्वासघात करके वह आसानी से भाग सकते थे, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। भागने के कई मौक़े उन्होंने जान-बूझ कर छोड़ दिये।

पुस्तक में स्पष्टवादिता है, अपने संगठन की त्रुटियों का ज़िक्र है और साथी-संगियों की खरी आलोचना भी है। बन्धुवर श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने हमें बताया था कि पुस्तक के कुछ अंश इस कारण छोड़ दिये गए थे कि उनमें

जरूरत से ज्यादा स्पष्टवादिता थी। यह सम्भव है कि अपने साथी-संगियों प लिखे गए उनके विवरण में कुछ कठोरता प्रतीत हो, शायद वे भ्रमात्मक भी हो, पर हमें यह बात न भूलनी चाहिए कि बिस्मिल अत्यन्त असाधारण परिस्थिति में अपना आत्मचरित लिख-लिख कर जेल से बाहर भेज रहे थे। आश्चर्य इस बात का है कि उन्होंने अपने मस्तिष्क का सन्तुलन इतनी मात्रा में किस प्रकार क़ायम रखा। बिस्मिल लिखते हैं—

"अन्त में अधिकारियों ने यह इच्छा प्रकट की कि यदि मैं बंगाल का सम्बन्ध बताकर कुछ बोलशेविक सम्बन्ध के विषय में अपने बयान दे दूं, तो वह मुझे थोड़ी-सी सजा कर देंगे और थोड़े दिनों बाद ही जेल से निकाल कर इंग्लैण्ड भेज देंगे और पन्द्रह हजार रुपये पारितोषिक सरकार से दिला देंगे। मैं मन-ही-मन बहुत हँसता था। अन्त में एक दिन फिर मुझसे जेल में मिलने को गुप्तचर विभाग के कप्तान साहब आए। मैंने अपनी कोठरी से निकलने से ही इन्कार कर दिया। वह कोठरी में आकर बहुत-सी बातें करते रहे, अन्त में परेशान होकर चले गए।"

बिस्मिल यद्यपि कुल जमा तीस वर्ष के ही थे, पर उनकी बुद्धि परिपक्व हो चुकी थी। तत्कालीन परिस्थिति में वह सशस्त्र क्रान्ति की निरर्थकता को समझ गये थे और उन्होंने लिखा था—

/"नवयुवकों को मेरा अन्तिम सन्देश यही है कि वे रिवाल्वर या पिस्तौल को अपने पास रखने की इच्छा को त्याग कर सच्चे देश-सेवक बनें। पूर्ण स्वाधीनता उनका ध्येय हो और वे वास्तविक साम्यवादी बनने का प्रयत्न करते रहें।" /

बिस्मिल के इस आत्मचरित के मुकाबले का ग्रन्थ केवल हिन्दी साहित्य में ही नहीं, वरन् भारत की अन्य भाषाओं के साहित्य में भी मुश्किल से मिलेगा।

चेकोस्लोवाकिया के शहीद फूचिक ने भी ऐसी ही परिस्थिति में अपना चरित बिस्मिल के आत्मचरित के सोलह वर्ष बाद लिखा था और वह भारत की नौ भाषाओं में प्रकाशित हो चुका है! हमारे साम्यवादी भाई इस बात पर उचित अभिमान करते हैं पर बिस्मिल का आत्मचरित एक बार छप कर जब्त हुआ सो फिर दूसरी बार तीस वर्ष बाद छप रहा है!

[illegible]

हम लोगों में से प्राय: सभी खाट पर पड़ कर मरेंगे—कोई ज्वर से, तो कोई निमोनिया से और कोई अन्य बीमारी से और कितने ही जीवन में ही पिलपिले दिमाग के बनकर मृतावस्था को प्राप्त हो जाएँगे. पर बिस्मिल-जैसी शानदार मृत्यु शायद ही किसी को प्राप्त होगी।

बिस्मिल ने आत्मचरित का प्रारम्भ इन पंक्तियों में किया है—

"क्या ही लज्जत है कि रग रग से यह आती है सदा,
दम न ले तलवार जब तक जान बिस्मिल में रहे।"

और अन्त इन शब्दों से किया है—

"मरते 'बिस्मिल' 'रोशन' 'लहरी' 'अशफ़ाक' अत्याचार से
होंगे पैदा सैकड़ों इनके रुधिर की धार से"

ज्योतिष में हमारा विश्वास नहीं, भविष्यवाणी हम करते नहीं, पर इतना हम अवश्य कह सकते हैं कि आज नहीं तो कल बिस्मिल का यह आत्मचरित हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ चरित घोषित किया जायगा और केवल भारतीय भाषाओं में ही नहीं, बल्कि अंग्रेजी, रूसी तथा अन्य भाषाओं में भी इसके अनुवाद प्रकाशित होंगे।

६६, नार्थ ऐवेन्यू, नई दिल्ली। —बनारसीदास चतुर्वेदी

**पुनश्च :**

इस आत्मकथा के विषय में हमने एक लेख पत्रों में छपवाया था। जिसे पढ़कर बाबा राघवदास जी ने अपनी ग्रामदान पद-यात्रा से २७ दिसम्बर १९५७ को एक पत्र हमें भेजा था।

पत्रोत्तर पता — ता० २७-१२-५७
रुद्रप्रणय आश्रम — सत् आनन वर्ष
नरसिंहपुर (मध्य-प्रदेश) — ग्रामदान पद-यात्रा
बालघाट

श्रीमान् पण्डित जी,

प्रणाम !

आपका अमर शहीद श्री रामप्रसाद जी 'बिस्मिल' की आत्मकथा पर लेख पढ़ा, (२२-१२-५७ के साप्ताहिक हिन्दुस्तान में) और मुझे उससे बड़ी प्रेरणा

मिला। क्या उस पुस्तक को मैं पढ़ सकूंगा? मैंने शाहजहाँपुर पद-यात्रा में उनकी पूज्य माता जी के दर्शन किये थे। उनके योगाभ्यास के स्थान पर गया था। जब गोरखपुर में उनको फाँसी हो गई थी उस समय उनके पावन दर्शन करने का अवसर पा चुका हूँ। उनके अस्थि को ताम्र पात्र में मैंने रखकर (आश्रम बरहज देवरिया में) उस पर चबूतरा बनाया है। इस क्रान्तिकारी पुरुष को मैं कैसे भुला सकता हूँ? उनके साथी श्री चन्द्रशेखर आजाद भी साथ में रहे हैं। उनसे भी मेरा फ़रारी जीवन में कुछ सहयोग रहा है। इस आत्मकथा का परिचय देकर मेरे लिए तो आपने एक आवश्यक प्रेरणा दी है। मेरा पत्रोत्तर पता—श्री कटारे वकील, बालघाट, मध्य-प्रदेश। मैं इस समय मध्य-प्रदेश में ग्रामदान पद-यात्रा कर रहा हूँ।

—राघवदास

स्वर्गीय बाबा राघवदास का अपनी युवावस्था में क्रान्तिकारियों से घनिष्ठ सम्बन्ध था और उनके बारे में अधिकाधिक जानने के लिये वे अपने अन्तिम दिनों तक उत्सुक रहे। अपने स्वर्गवास के अठारह दिन पूर्व उन्होंने यह चिट्ठी मुझे भेजी थी। मैंने उन्हें उत्तर में लिख दिया था कि पुस्तक छपते ही उनकी सेवा में भेज दी जायगी। हमें इस बात का दुःख है, कि यह पुस्तक श्रद्धेय बाबा जी के जीवन काल में नहीं छप सकी।

अमर शहीद बिस्मिल की माता जी का एक शब्द चित्र, जिसे बन्धुवर श्री शिव वर्मा ने खींचा था, हमने परिशिष्ट में दे दिया है। वह उनकी सन् १९४६ की डायरी का एक पृष्ठ है। शायद उसके डेढ़ साल बाद उत्तर-प्रदेश की सरकार ने उन्हें साठ रुपये महीने की पेंशन दे दी थी, जो उन्हें अपने जीवन के अन्तिम दिनों तक मिलती रही। उनके स्वर्गवास की तिथि का पता हम नहीं लगा सके। शायद यह पेंशन उन्हें ७।८ वर्ष मिली होगी।

बिस्मिल के छोटे भाई का स्वर्गवास कभी का हो चुका था। अब उनकी एक मात्र बहन श्री शास्त्री देवी जीवित हैं। वे विधवा हैं। उनका पता है—कोसवाँ जिला मैनपुरी। मेरे अनुरोध पर श्री ओंकार नाथ पाण्डेय मिश्राना, मैनपुरी) उनसे मिलने गये थे। उन्होंने अपने पत्र में मुझे लिखा है—

"मैंने श्री शास्त्री देवी जी के दर्शन किये। वे बहुत वर्षों से विधवा हैं और उनका लड़का हरिश्चन्द्र सिंह पाँचवीं कक्षा तक पढ़ा हुआ है और वह इस

समय एक मोटर ट्रक पर काम करता है, श्रीमती शास्त्री देवी ने बतलाया कि उसके पास चालक का लाइसेंस नहीं है और वह बतौर क्लीनर के काम करता है। दशा दयनीय है। उनका मकान गली में एक कोठा है और उसके सामने एक आँगन, जिसकी चौड़ाई दो गज से अधिक न होगी। तीन चार बीघा खेत है। हरिश्चन्द्र की आयु २५।२६ वर्ष की होगी। अभी तक शाहजहाँपुर में दोनों रहते थे। वहाँ इनकी माँ को ६०) माहवार की पेंशन सन् ४७ से मिलती थी। उसी में इनका निर्वाह होता था। दो वर्ष हुए इनकी माता का देहान्त हो गया, अतः वहाँ का मकान पन्द्रह सौ रुपये में बेचकर यहाँ आ गईं। वे कहती थीं कि उस रुपये से कर्जा अदा किया गया। गत वर्ष हरिश्चन्द्र का विवाह भी हो गया है। इस समय इनके सामने तीन प्राणियों के निर्वाह का प्रश्न है। मेरी राय में इनको ५०) महावार की पेंशन मिल जाय तो इनका निर्वाह हो सकता है। हरिश्चन्द्र भी बिना किसी साधन के पढ़ने से रह गया और ऐसी दशा में अधिक अर्जन करने में असमर्थ है।"

उत्तर-प्रदेशीय सरकार से हमारी करबद्ध प्रार्थना है कि वह बिस्मिल की माँ की पेंशन उनकी बहन के नाम जारी कर दे। इस पुण्य कार्य से बिस्मिल की आत्मा को स्वर्ग में कुछ सन्तोष तो होगा ही। श्री सम्पूर्णानन्द जी तथा श्री कमलापति जी त्रिपाठी की सहृदयता पर हमें विश्वास है।

**—बनारसीदास चतुर्वेदी**

# भूमिका

परतन्त्र भारत की उत्पीड़क ब्रिटिश सरकार की अदालत ने पं० रामप्रसाद बिस्मिल को उत्तर-प्रदेश में सशस्त्र क्रान्तिकारी दल का मुख्य संगठनकर्त्ता और नेता घोषित किया और काकोरी षड्यन्त्र केस मे उन्हें प्राणदण्ड—सशस्त्र क्रान्तिकारी देशभक्ति का सर्वोच्च पुरस्कार—प्रदान किया। बिस्मिल जी ने देशवासियों से अपनी कुछ 'अन्तिम बात' के रूप मे यह आत्मकथा गोरखपुर जेल की फाँसी की कोठरी मे फाँसी पर झूलने के तीन दिन पहले तक अधिकारियों की नजर बचा कर लिखी थी। उन्ही के शब्दो मे सुनिये :

"· आज १६ दिसम्बर १६२७ ई० को निम्नलिखित पंक्तियों का उल्लेख कर रहा हूँ, जब कि १६ दिसम्बर १६२७ ई० सोमवार पौष कृष्ण ११ सम्वत् १९८४ वि० को ६॥ बजे प्रातःकाल इस शरीर को फाँसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है।"

और जिस मनोदशा मे और जिस भावना से यह आत्मकथा लिखी गई थी, उसे शहीद की इन पंक्तियों में ही देखिये :

".... · इसी कोठरी मे यह सुयोग प्राप्त हो गया कि अपनी कुछ अन्तिम बात लिख कर देशवासियो के अर्पण कर दूँ। सम्भव है कि मेरे जीवन के अध्ययन से किसी आत्मा का भला हो जाय। बड़ी कठिनता से यह शुभ अवसर प्राप्त हुआ।

महसूस हो रहे हैं बादे फ़ना के झोंके,
खुलने लगे हैं मुझ पर इसरार जिन्दगी के।
यदि देशहित मरना पड़े मुझ को अनेकों बार भी,
तो भी न मैं इस कष्ट को निज ध्यान में लाऊँ कभी।
हे ईश ! भारतवर्ष में शतबार मेरा जन्म हो,
कारण सदा ही मृत्यु का देशोपकारक कर्म हो।

---

बादे फना=नाश की हवा।
इसरार=आग्रह।

हास्य-महल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगायें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

क्या हिन्दी संसार में शहीद के स्वयं अपने रक्त से फाँसी की कोठरी में मृत्यु की छाया में लिखी कोई अन्य साहित्यिक कृति भी है ? श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने इसकी तुलना, इस सम्बन्ध में नाज़ी जर्मनी के गेस्टापो के अत्याचारों के शहीद वीर जूलियस फूचिक की पुस्तक से की है, जिसका अनुवाद नोट्स फ्राम दि गैलोज़ (Notes From The Gallows) के नाम से अंग्रेजी में हुआ है और जिसके अनेकों अनुवादों के कई संस्करण विभिन्न भाषाओं में सहस्त्रों की संख्या में निकल चुके हैं और वितरित हो चुके हैं। शहीद वीर जूलियस फूचिक ने भी अपने ये नोट्स अपनी काल-कोठरी में अधिकारियों की नज़र बचा कर कागज के टुकड़ों पर पेन्सिल से लिखे थे और उन्हें एक सहानुभूति रखने वाले जैक पहरेदार के द्वारा बाहर भेजा था। फूचिक ने यह जून १९४३ में किया था। उससे १६ वर्ष पूर्व श्री बिस्मिल ने भी अधिकारियों की नज़र बचाकर अपनी फाँसी की कोठरी में अपनी यह आत्मकथा रजिस्टर के आकार के कागज़ों पर पेन्सिल से लिखी थी। इन कागजों को उन्होंने एक सहृदय जेल के वार्डर के हाथ बाहर गोरखपुर के सुप्रसिद्ध काँग्रेसी नेता 'स्वदेश' के सम्पादक श्री दशरथप्रसाद द्विवेदी के पास भेजा था। पूरी आत्मकथा तीन खेपों में बाहर आई थी। अन्तिम खेप तो बिस्मिल जी के फाँसी पाने के एक दिन पहले ही आई थी। दल के सदस्य श्री शिव वर्मा को (जिन्हें बाद में लाहौर षड्यन्त्र केस में आजीवन कारावास का दण्ड मिला था) ये सब पूरे कागज श्री दशरथप्रसाद जी से प्राप्त हो गए थे। श्री शिव वर्मा ने बिस्मिल जी के फाँसी पाने के एक दिन पूर्व उनकी माता जी के साथ एक सम्बन्धी का छद्म बना कर जेल में बिस्मिल जी से अन्तिम मुलाक़ात भी की थी। अन्त में आत्मकथा के ये सब कागज अमर शहीद श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के पास पहुँचा दिए गए थे।

यहाँ यह उल्लेख कर देना ज़रूरी है कि बाहर क्रान्तिकारी दल में अत्यन्त व्यस्त श्री भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद आदि साथियों की राय यह हुई कि बिस्मिल जी के इस आत्मचरित में दल के लोगों में पारस्परिक अविश्वास, कटुता और अन्य प्रकार की वैयक्तिक कमजोरियों आदि पर यथार्थ लेकिन आवश्यक से अधिक जोर पड़ गया है, जब कि उसके सन्तुलन में उन बातों और साथियों के उन गुणों का बखान प्रायः उतना नहीं हुआ है, जितना कि उचित रूप में होना ... और जिनके कारण ही ये सब कमियां होते हुए भी ये संगठन चलते

रहे और उनके कार्य-कलाप में, आत्म-बलिदान, बन्धु-प्रेम, विश्वास, अनुशासन की भावना, सहन-शक्ति की पराकाष्ठा की अभीष्ट अभिव्यक्ति सर्वत्र मधुर मात्रा में होती रही। और यह बात तो है ही कि आत्मकथा में समग्र क्रान्तिकारी आन्दोलन के उस समय 'अन्त' के पहले की बात होने और क्रान्तिकारियों की मनोदशा 'नष्ट पंथियों' जैसी होने की बात, जो निराशा और अवसाद के स्वर में कही गई है, श्री भगतसिंह और चन्द्रशेखर आजाद आदि साथियों को, जो प्राण होम रहे थे और अन्ततः जिन्होंने होम भी दिए, भला कैसे रुचिकर हो सकती थी? हाँ, श्री अशफाकुल्ला के सम्बन्ध में बिस्मिल जी ने जो कुछ लिखा है उसे पढ़कर सब गद्गद् हो गये थे। वह वृत्तान्त बड़ा ही स्फूर्तिप्रद है और हिन्दू मुस्लिम ऐक्य की भावना को बढ़ाने वाला, इसे सब मुक्त कण्ठ से स्वीकार करते थे। फाँसी की कोठरी में लिखी गई इस आत्मकथा की प्रेरक शक्ति और मानमूल्य से भला कौन सहृदय व्यक्ति इन्कार कर सकता था? और एक शहीद की देश के लोगों के नाम वसीयत की गई इस धरोहर को कौन हजम कर सकता था? परन्तु दूसरी ओर उस समय उसका प्रकाशन भी तो कोई आसान काम नहीं था। नाज़ी जर्मनी के परास्त हो जाने के बाद फूचिक की अमर कृति 'नोट्स फ्राम दि गैलोज़' के प्रकाशन में तो कोई जोखिम रह ही नहीं गई थी। परन्तु ब्रिटिश सरकार के भारत में रहते हुए फाँसी की कोठरी में एक शहीद के द्वारा चोरी छिपे लिखी गई और बाहर भेजी गई इस आत्मकथा के प्रकाशन में महान् जोखिम स्पष्ट ही थी। और यह बड़े श्रेय की बात है कि यह आत्मकथा श्री गणेशशंकर विद्यार्थी जी की देखरेख में प्रताप प्रेस, कानपुर से प्रकाशित 'काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक के अग्रभाग में छपी। साथियों की राय में इस आत्मकथा के अन्त में जो अवसाद और निराशाजनक बातें आ गई थीं अथवा पारस्परिक कटुता, वैमनस्य आदि पर अनावश्यक बल पड़ गया था, उसका सन्तुलन उक्त पुस्तक में प्रकाशित अन्य क्रान्तिकारियों के विवरणों से यत्किञ्चित सन्तोषप्रद रीति से हो गया।

विश्वास किया जाता है कि श्री गणेशशंकर विद्यार्थी इस आत्मकथा को भली भाँति देख गए थे। इस पवित्र धरोहर में किसी को मीनमेष करने, उसकी भाषा सुधारने आदि का कोई अधिकार नहीं, इस आत्मकथा के सम्पादन के सम्बन्ध में विद्यार्थी जी की यही धारणा रही। फिर भी आत्मकथा में भूल

[illegible]-साहित्य-मण्डल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां [illegible] प्रचार होता।
है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

से भी ऐसी बातें नहीं जाने दी जा सकती थीं, जिनसे पुलिस को कुछ और सुराग मिलता और अन्य क्रान्तिकारी विपत्ति में पड़ते या अन्यथा सरकार का लाभ और स्वातन्त्र्य-आन्दोलन की क्षति होती। अतएव प्राप्त आत्मकथा में से वे ही बातें अपरिहार्य रूप में निकाली या संशोधित की गई होंगी, जिनसे ऐसी कुछ हानि होने की आशंका स्पष्ट ही रही होगी।

आत्मकथा में पारस्परिक कटुता, वैमनस्य आदि की बातों पर जो जरूरत से ज्यादा ज़ोर पड़ गया है तथा क्रान्तिकारी दल के जीवन का उज्ज्वल प्रकाशपूर्ण पक्ष यथेष्ट रूप में नहीं उभर पाया, उसका कारण भली भाँति समझा जा सकता है। यह आत्मकथा जेल में फाँसी की कोठरी में लिखी जा रही थी। सर्वविदित है कि फाँसी की सजा पाये कैदी को सबसे अलग एक अलहिदा कोठरी में रखा जाता है, उसके ऊपर एक विशेष पहरेदार चौकी नियुक्त रहती है, जो उस पर बराबर चौबीसों घण्टे नज़र रखती है। रोज़ सवेरे शाम नियमपूर्वक उसकी और उसकी कोठरी की तलाशी ली जाती है, तथा बीच-बीच में अकस्मात् भी जेल के अधिकारियों द्वारा तलाशी ली जाती है। अतएव यह ख़तरा तो सदा ही था कि यह आत्मकथा कभी भी सरकार के हाथों में पड़ सकती थी। इसलिए क्रान्तिकारी दल के सदस्यों और उससे सहानुभूति रखने वाले व्यक्तियों के नाम तो इसमें लिखे ही नहीं जा सकते थे, उनके कार्यों की ओर संकेत किया जाना भी उनके लिए खतरे से खाली नहीं था; और इस सब को उस समय प्रकाशित तो किसी भी भाँति नहीं किया जा सकता था। अतः मजबूरी तौर पर ही दल के जीवन की सुनहरी बातों को बिस्मिल जी अपने आत्मचरित में नहीं दे सकते थे। श्री अशफ़ाकुल्ला खाँ को फांसी की सज़ा हो ही चुकी थी अतएव उनके सम्बन्ध में बिस्मिल जी खुल कर लिख सकते थे और उसमें उन्होंने अपनी सहृदयता का पूरा परिचय दिया ही है।

अस्तु, 'काकोरी के शहीद' में यह आत्मकथा श्री गणेश शंकर विद्यार्थी की देखरेख में छपी और इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस पुस्तक के प्रकाशन के बाद गुप्त सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलन का बल बढ़ा ही, कम नहीं हुआ। बिस्मिल जी का "दि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन," श्री भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद आदि के नेतृत्व में "दि हिन्दुस्तान सोशलिस्ट

रिपब्लिकन एसोसिएशन" या "आर्मी" के रूप में पुनर्गठित हुआ और पहले से अधिक अच्छी तरह चला, यद्यपि उसमें भी ऐसे अविश्वास और कटुता की बातें हुई, और लाहौर षड्यन्त्र केस चलने पर दल में पुनः अप्रूवर और अन्य भांति कमजोर लोग निकले, परन्तु उनमे से मृत्युंजयी अमर शहीद जितेन्द्रनाथ दास जैसे शक्तिशाली, भगतसिंह जैसे स्नेही विरागी आदर्श वीर भी निकले। दल में जो पारस्परिक विश्वास प्रेम और चारित्रिक दृढ़ता की अभिव्यक्ति होती थी, वह अविश्वास कटुता और कमजोरी से कहीं अधिक थी और इसी के बल पर ऐसे दल चले और उन्होंने यशस्वी कार्य भी किए और जतीनदास, चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव, आदि जैसे आदर्श चरित्र देश के नौजवानो को मिले। देश को स्वतन्त्र कराने में जिन लोगों ने सहर्ष आत्म-बलिदान किया है, उनको इस बलिदान के लिए प्रेरित करने में और उसके लिए शक्ति प्रदान करने मे इन आदर्श चरित्रों का कितना हाथ है, इसे कौन नाप सकेगा ?

बिस्मिल जी की इस आत्मकथा और काकोरी के शहीद में वर्णित अन्य देश भक्तों के त्याग और बलिदान के वर्णन ने व्यक्तिगत रूप मे मुझे कितना प्रभावित किया और मुझे कितना बल प्रदान किया, इसकी यहाँ चर्चा करना अनुचित न होगा। दल के जीवन में अन्य और सभी की भाँति मुझे भी अविश्वास, कटुता, आदि का सामना करना पड़ा, मेरे सामने भी साथी अप्रूवर (इकबाली माफीशुदा सरकारी गवाह) बन कर अपनी चमड़ी बचाने और साथियों को फँसाने आए। मुझे भी यह बुरा, बहुत बुरा लगा। परन्तु इसकी तुलना में जो आत्म-बलिदान-पूर्ण स्नेह, विश्वास, सौहार्द मैं श्री चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह आदि साथियों से प्राप्त कर चुका था और उस समय भी कर रहा था तथा श्री रामप्रसाद बिस्मिल आदि पुराने शहीदो और जतीनदास आदि की शहादत से जो बल मुझे मिल रहा था, उसने मेरे मन में किसी प्रकार की कटुता या निराशा नही उत्पन्न होने दी। इन्हीं अप्रूवरों पर मैंने दल की आज्ञानुसार गोली चलाई, सो किसी वैयक्तिक कटुता की भावना से नहीं, वास्तव में मेरे मन में अपने इन साथियों में कमजोरी आ जाने के प्रति दया मिश्रित खेद ही था। इन अप्रूवरों के विश्वासघात के प्रत्यक्ष अनुभव के बाद भी उन पर गोली चला कर फाँसी जाने की तैयारी का बल भी मुझे

...साहित्य-मडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहि...

बिस्मिल आदि शहीदों के चरित्र, साथियों की दृढ़ता, आत्म-बलिदान-पूर्ण स्नेह, विश्वास आदि की अनुभूति से ही मिला था।

बिस्मिल जी की इस आत्मकथा का ऐतिहासिक मूल्य तो स्पष्ट ही है। इससे सशस्त्र गुप्त षड्यन्त्रात्मक स्वातन्त्र्य संगठनों के उत्थान, संचालन, विघटन, पुनर्गठन आदि पर यथार्थवादी प्रकाश पड़ता है। इसके सिवाय स्वातन्त्र्य के लिए देश के नौजवानों की छटपटाहट, उनके प्राणों के स्पन्दन की छटा इसमें देखी जा सकती है। पं० रामप्रसाद बिस्मिल किसी विशिष्ठ सुख धनाढ्य परिवार में उत्पन्न नहीं हुए थे। कोई बड़ी शिक्षा दीक्षा सम्पन्नता का आडम्बर भी उनके साथ संलग्न नहीं था। वे स्वाधीनता के लिए छटपटाती हुई आम जनता और उसके लिए वीरता से प्राणोत्सर्ग कर सकने की साध रखने वाले नौजवानों के सच्चे प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। वे एक सीधे सादे वीर देशभक्त थे, कोई प्रौढ़बुद्धि विचारक नहीं। देश के नौजवानों की आम राजनीतिक चेतना जैसे अनुभव से समाजवादी मार्ग की ओर विकसित होती जा रही थी, इसे बिस्मिल जी की इस आत्मकथा में भी भली भाँति देखा जा सकता है। उन्होंने अपनी फाँसी की कोठरी में यह सच्चे दिल से अनुभव किया कि जिस क्रान्तिकारी (आतंकवादी) मार्ग पर वे स्वयं और ये गुप्त षड्यन्त्रवादी संगठन चलते रहे हैं, उनसे कुछ विशेष लाभ नहीं होगा। यद्यपि इस तथ्य की ओर भी उन्होंने दुर्लक्ष नहीं किया है कि इस मार्ग पर चल कर नौजवानों ने जो बलिदान किया है वह व्यर्थ नहीं हुआ और देश की आम राजनीतिक जाग्रति में और स्वातन्त्र्य संघर्ष के विकास में इन बलिदानों का महान् मूल्य है; फिर भी उन्होंने फाँसी के तख्ते से अपनी इस अनुभूति को प्रकाशित करते हुए अपने साथियों और देश के नौजवानों और समस्त स्वातन्त्र्य प्रेमियों को सामूहिक संगठनों, किसान-मजदूर आन्दोलनों में तथा कांग्रेस में कार्य करने के लिए कहा। यद्यपि ऐसे गुप्त सशस्त्र आतंकवादी संगठन तुरन्त भी समाप्त नहीं हो गए, परन्तु ऐसे संगठनों में काम करने वालों पर और आम सशस्त्र विद्रोहात्मक आन्दोलन पर इसका असर पड़ा ही,

* यह अनुभूति केवल श्री बिस्मिल जी की ही अनुभूति नहीं थी, यह तो
... आम अनुभूति भी थी। बिस्मिल जी ने लिखा है : "भारत की भावी
... नवयुवक वृन्द क्रान्तिकारी (गुप्त सशस्त्र-भ०) संगठन करने की
... की प्रवृत्ति को देश सेवा की ओर लगाने का प्रयत्न करें,

श्रमजीवी तथा कृषकों का संगठन करके उनको जमींदारों तथा रईसों (पूंजीपतियों-भ०) के अत्याचारों से बचावें। भारतवर्ष के रईस तथा जमींदार सरकार के पक्षपाती हैं। मुख्य-श्रेणी के लोग किसी न किसी प्रकार इन्हीं के साश्रित हैं।" बिस्मिल जी के यह सब लिखने के पहले ही उनके दल के अवशिष्ट लोगों में से सर्व श्री शिव वर्मा, विजय कुमार सिनहा, सुरेन्द्रनाथ पाण्डे, ब्रह्मदत्त, आदि कानपुर के कार्यकर्त्ता गुप्त सशस्त्र क्रान्तिकारी संगठन में काम करने के साथ ही साथ श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के नेतृत्व में कानपुर मजदूर सभा में काम करने लगे थे (इसकी सूचना सम्भवतः बिस्मिल जी को नहीं मिली थी) और पंजाब में नौजवान भारत सभा कायम हो चुकी थी, और उसका घोषणा पत्र भी प्रकाशित हो चुका था। इस सभा के कर्णधारों में थे श्री भगतसिंह, भगवतीचरण वोहरा, सुखदेव, केदारनाथ सहगल, सोहनसिंह जोश आदि। और यह इसी प्रवृत्ति का परिणाम था कि बिस्मिल जी का संगठन "दि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन" भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद आदि के नेतृत्व में "दि हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन" या "आर्मी" के रूप में विकसित हुआ। नौजवान भारत सभा एक प्रकार से इसी का एक खुला पक्ष था, जो खुले आन्दोलन विद्यार्थी संगठन, मजदूर संगठन, किसान संगठन आदि की ओर बढ़ा। वास्तव में कांग्रेस के नीचे सन् १९३० और १९३२ के दो महान् जन-आन्दोलनों के अनुभव, मजदूर हड़तालों, किसान सत्याग्रहों की शक्ति के अनुभव, तथा कांग्रेस में समाजवादी दल के संगठन बन जाने तथा साम्यवादी दल के अधिक सक्रियता से राजनीतिक क्षेत्र में आ जाने के बाद ही गुप्त षड्यन्त्रात्मक आतंकवादी संगठनों की परिसमाप्ति हुई।

सब से बड़ी बात तो यह है कि यह "आत्मकथा" उस श्रद्धा और विश्वास और प्रेम का भव्य स्मारक है, जो आम साधारण जनता शहीद क्रान्तिकारियों के प्रति रखती रही। बिस्मिल जी फांसी की कोठरी में इस आत्मकथा को लिख सके, यह बात बिस्मिल जी के लिए जितने श्रेय की है उससे कहीं अधिक उन अनपढ़ या मामूली पढ़े-लिखे जेल वार्डरों के श्रेय की है, जिनके पहरे में या संरक्षण में यह लिखी गई। फांसी की सजा पाए हुए कैदी पर चौबीसों घण्टे पहरेदारों की नजर रहती है। कौन जानता है कितने पहरेदार बदले होंगे और न जाने कितने पहरेदारों और जेल के अन्य अधिकारियों के

।-साहित्य-मण्डल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

सहयोग से इस आत्मकथा का लिखा जाना सम्भव हुआ होगा। कितने लोगों ने इस सम्बन्ध में जोखिम उठाई होगी, विना किसी यश की आशा के, केवल शहीद क्रान्तिकारी देशभक्तों के प्रति अपनी स्वाभाविक श्रद्धा और प्रेम के कारण, जो वस्तुत: स्वातन्त्र्य प्रेम का ही स्वरूप है। और उन बेचारों को आज भी कोई श्रेय, कोई यश नहीं मिला। हम उनका नाम भी नहीं जानते, जब कि स्वातन्त्र्य आन्दोलन में दो तीन मास की कैद पाए हुए लोग फूल-मालाएँ पहने अपने फोटो बड़े अभिमान से प्रदर्शित करते रहते हैं तथा एतदर्थ प्राप्त "राजनीतिक पीड़ित" होने के सार्टीफिकेट को प्रदर्शित करके आर्थिक लाभ भी उठाते रहते हैं! जिस जैक शहीद जूलियस फूचिक और फांसी की कोठरी से लिख कर भेजे गये उसके नोट्स की चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं उनको वाहर लाने वाले जैक पहरेदार ए० कोलिन्सकी का नाम कृतज्ञतापूर्वक जूलियस की पत्नी ने उक्त पुस्तक के ऊपर अपने नोट में किया है। इसे हम अपनी लापरवाही कहें या कृतघ्नता कि हम आज स्वतन्त्र भारत में उन जेल वार्डरों का नामोल्लेख भी नहीं कर पा रहे हैं, जिनको इस आत्मकथा के फांसी की कोठरी में लिखे जा सकने का और उसे वाहर आकर प्रकाशित हो सकने का अधिकांश श्रेय मिलना चाहिए।

अपने स्वातन्त्र्य के लिए प्राण होमने वाले शहीदों के प्रति स्वतन्त्र भारत की कृतज्ञता की भावना से यह आशा करना क्या कोई बड़ी बात होगी कि बिस्मिल जी की इस आत्मकथा की मूल हस्तलिखित प्रति को तलाश किया जाय और यदि वह मिल सके तो उसे राष्ट्रीय अभिलेखागार में या किसी शहीद संग्रहालय में सुरक्षित रखा जाय?

नरसिंह राव की टोरिया
झांसी

—भगवानदास माहौर

# विषय-सूची


सम्पादकीय—बनारसीदास चतुर्वेदी . . . क
भूमिका—भगवानदास माहौर . . . ङ
प्रथम खण्ड—आत्म-चरित्र . . . १
द्वितीय खण्ड—स्वदेश-प्रेम . . . ३८
तृतीय खण्ड—स्वतन्त्र जीवन . . . ५६
चतुर्थ खण्ड—वृहत संगठन . . . ७२


## परिशिष्ट


१ पृष्ठभूमि—मन्मथनाथ गुप्त . . . १५०
२. मेरी डायरी का एक पृष्ठ—शिव वर्मा . . . १६१



साहित्य-मंडल व हिन्दी का सम्व प्रकार पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

## निज जीवन की एक छटा

[ एकादश वर्षीय क्रान्तिकारी जीवन ]

●

क्या ही लज्जत है कि रग रग से यह आती है सदा,  
दम न ले तलवार जब तक जान 'बिस्मिल' में रहे।

रथ-महल

जती है। बड़ा सूचीप

## आत्म-चरित्र

तोमरघार में चम्बल नदी के किनारे पर दो ग्राम आबाद हैं, ज
ग्वालियर राज्य में बहुत ही प्रसिद्ध हैं, क्योंकि इन ग्रामों के निवासी
बड़े उद्दण्ड हैं । वे राज्य की सत्ता की कोई चिन्ता नहीं करते ।
जमीदारों का यह हाल है कि जिस साल उनके मन में आता है
राज्य को भूमि-कर देते हैं और जिस साल उनकी इच्छा होती है
मालगुजारी देने से साफ इन्कार कर जाते हैं ! यदि तहसीलदार या
कोई और राज्य का अधिकारी आता है तो ये जमीदार बीहड़ में
चले जाते हैं और महीनों बीहड़ों में ही पड़े रहते हैं । उनके पशु भी
वहीं रहते हैं और भोजनादि भी बीहड़ों में ही होता है । घर पर
कोई ऐसा मूल्यवान पदार्थ नहीं छोड़ते, जिसे नीलाम करके
मालगुजारी वसूल की जा सके । एक जमीदार के सम्बन्ध में कथा
प्रचलित है कि मालगुजारी न देने के कारण ही उनको कुछ भूमि
माफ़ी में मिल गई । पहले तो कई साल तक भागे रहे । एक बार
धोखे से पकड़ लिए गए तो तहसील के अधिकारियों ने उन्हें बहुत
सताया । कई दिन तक बिना खाना पानी बँधा रहने दिया । अन्त
में जलाने की धमकी दे पैरों पर सूखी घास डालकर आग लगवा—

व हिन्दी का अम्य
है । बड़ा सूचीपत्र मंगावें । पता

दी । किन्तु उन ज़मींदार महोदय ने भूमि-कर देना स्वीकार न किया और यही उत्तर दिया कि ग्वालियर महाराज के कोष में मेरे कर न देने से ही घटी न पड़ जायगी । संसार क्या जानेगा कि अमुक व्यक्ति उद्दण्डता के कारण ही अपना समय व्यतीत करता है । राज्य को लिखा गया, जिस का परिणाम यह हुआ कि उतनी भूमि उन महाशय को माफ़ी में दे दी गई ! इसी प्रकार एक समय इन ग्रामों के निवासियों को एक अद्भुत खेल सूझा । उन्होंने महाराज के रिसाले के साठ ऊँट चुराकर बीहड़ों में छिपा दिए । राज्य को लिखा गया, जिस पर राज्य की ओर से आज्ञा हुई कि दोनों ग्राम तोप लगाकर उड़वा दिये जायें । न जाने किस प्रकार समझाने-बुझाने से वे ऊँट वापस किए गए और अधिकारियों को समझाया गया कि इतने बड़े राज्य में थोड़े से वीर लोगों का निवास है, इनका विध्वंस न करना ही उचित होगा । तब तोपें लौटाई गईं और ग्राम उड़ाये जाने से बचे । ये लोग अब राज्य-निवासियों को तो अधिक नहीं सताते, किन्तु बहुधा अंग्रेज़ी राज्य में आकर उपद्रव कर जाते हैं और अमीरों के मकानों पर छापा मारकर रात-ही-रात बीहड़ में दाखिल हो जाते हैं । बीहड़ में पहुँच जाने पर पुलिस या फौज कोई भी उनका बाल बाँका नहीं कर सकती । ये दोनों ग्राम अंग्रेज़ी राज्य की सीमा से लगभग पन्द्रह मील की दूरी पर चम्बल नदी के तट पर हैं । यहीं के एक प्रसिद्ध वंश में मेरे पितामह श्री नारायणलाल जी का जन्म हुआ था । वे कौटुम्बिक कलह और अपनी भाभी के असहनीय दुर्व्यवहार के कारण मजबूर हो अपनी जन्म-भूमि छोड़ इधर-उधर भटकते रहे । अन्त में अपनी धर्मपत्नी और [illegible]ओं के साथ वे शाहजहाँपुर पहुँचे । आप के इन्हीं

दो पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र श्रीमुरलीधर जी मेरे पिता हैं। उस समय इनकी अवस्था आठ वर्ष और उनके छोटे पुत्र—मेरे चाचा—(श्री कल्याणमल) की उम्र छः वर्ष की थी। इस समय यहाँ दुर्भिक्ष का भयंकर प्रकोप था।

## दुर्दिन

अनेक प्रयत्न करने के पश्चात् शाहजहाँपुर में एक अत्तार महोदय की दुकान पर श्रीयुत नारायणलाल जी को तीन रुपये मासिक वेतन की नौकरी मिली। तीन रुपये मासिक में दुर्भिक्ष के समय चार प्राणियों का किस प्रकार निर्वाह हो सकता था? दादी जी ने बहुत प्रयत्न किया कि अपने आप केवल एक समय आधे पेट भोजन कर के बच्चों का पेट पाला जाये, किन्तु फिर भी निर्वाह न हो सका। बाजरा, कुकनी, सामा ज्वार इत्यादि खा कर दिन काटने चाहे, किन्तु फिर भी गुजारा न हुआ तब आधा बथुआ, चना या कोई दूसरा साग, जो सबसे सस्ता हो उसको लेकर, सबसे सस्ता अनाज उसमें आधा मिलाकर थोड़ा-सा नमक डालकर उसे स्वयम् खाती, लड़कों को चना या जौ की रोटी देती और इसी प्रकार दादा जी भी समय व्यतीत करते थे। बड़ी कठिनता से आधे पेट खाकर दिन तो कट जाता, किन्तु पेट में घोटूं दबाकर रात काटना कठिन हो जाता। यह तो भोजन की अवस्था थी, वस्त्र तथा रहने के स्थान का किराया कहाँ से आता? दादी जी ने चाहा कि भले घरों में कोई मजदूरी ही मिल जाये, किन्तु अनजान व्यक्ति का, जिस की भाषा भी अपने देश की भाषा से न मिलती हो, भले घरों में सहसा कौन विश्वास कर सकता था? कोई मजदूरी पर अपना अनाज भी

सस्ता-सा हित्य-मण्डल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें
जाती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य

पीसने को न देता था ! डर था कि दुर्भिक्ष का समय है, खा लेगी। बहुत प्रयत्न करने के बाद दो एक महिलायें अपने घर पर अनाज पिसवाने पर राज़ी हुईं, किन्तु पुरानी काम करने वालियों को कैसे जवाब दें ? इसी प्रकार अनेकों अड़चनों के बाद पाँच-सात सेर अनाज पीसने को मिल जाता, जिस की पिसाई उस समय एक पैसा प्रति पंसेरी थी। बड़ी कठिनता से आधे पेट एक समय भोजन करके तीन चार घण्टों तक पीसकर एक पैसा या डेढ़ पैसा मिलता। फिर घर पर आकर बच्चों के लिए भोजन तैयार करना पड़ता। दो तीन वर्ष तक यही अवस्था रही। बहुधा दादा जी देश को लौट चलने का विचार प्रकट करते, किन्तु दादी जी का यही उत्तर होता कि जिन के कारण देश छुटा, धन-सामग्री सब नष्ट हुई और ये दिन देखने पड़े अब उन्हीं के पैरों में सिर रखकर दासत्व स्वीकार करने से इसी प्रकार प्राण दे देना कहीं श्रेष्ठ है, ये दिन सदैव न रहेंगे। सब प्रकार के संकट सहे, किन्तु दादी जी देश को लौटकर न गईं।

चार-पाँच वर्ष में जब कुछ सज्जन परिचित हो गए और जान लिया कि स्त्री भले घर की है, कुसमय पड़ने से दीन-दशा को प्राप्त हुई है, तब बहुत-सी महिलायें विश्वास करने लगीं। दुर्भिक्ष भी दूर हो गया था। कभी-कभी किसी सज्जन के यहाँ से कुछ दान मिल जाया करता, कोई ब्राह्मण भोजन करा देते। इसी प्रकार समय व्यतीत होने लगा। कई महानुभावों ने, जिन के कोई सन्तान न थी और धनादि पर्याप्त था, दादी जी को अनेकों प्रकार के प्रलोभन दिए कि वह अपना एक लड़का उन्हें दे दें और जितना धन माँगें ो ˜ किया जाय। किन्तु दादी जी आदर्श माता थीं, उन्होंने

इस प्रकार के प्रलोभन की किंचित मात्र भी परवाह न की और अपने बच्चो का किसी न किसी प्रकार पालन करती रही।

मेहनत-मजदूरी तथा ब्राह्मणवृत्ति द्वारा कुछ धन एकत्रित हुआ। कुछ महानुभावो के कहने से पिता जी के किसी पाठशाला में शिक्षा पाने का प्रबन्ध कर दिया गया। श्री दादा जी ने भी कुछ प्रयत्न किया, उनका वेतन भी बढ गया और वे सात रुपये मासिक पाने लगे। इसके बाद उन्होंने नौकरी छोड़, पैसे तथा दुवन्नी, चवन्नी इत्यादि बेचने की दुकान की। पाँच-सात आने रोज पैदा होंने लगे। जो दुर्दिन आये थे, प्रयत्न तथा साहस से दूर होने लगे। इसका सब श्रेय श्री दादी जो को ही है: जिस साहस तथा धैर्य से उन्होंने काम लिया वह वास्तव मे किसी दैवी शक्ति की सहायता ही कही जायेगी। अन्यथा एक अशिक्षित ग्रामीण महिला की क्या सामर्थ्य है कि वह नितान्त अपरिचित स्थान में जाकर मेहनत मजदूरी करके अपना तथा अपने बच्चो का पेट पालन करते हुए उनको शिक्षित बनाये और फिर ऐसी परिस्थितियो मे, जब कि उसने कभी अपने जीवन मे घर से बाहर पैर न रखा हो और जो ऐसे कट्टर देश की रहने वाली हो कि जहाँ पर प्रत्येक हिन्दू प्रथा का पूर्णतया पालन किया जाता हो, जहाँ के निवासी अपनी प्रथाओं की रक्षा के लिए प्राणों की किंचित मात्र भी चिन्ता न करते हों। किसी ब्राह्मण, क्षत्री या वैश्य की कुलवधू का क्या साहस, जो डेढ़ हाथ का घूंघट निकाले बिना एक घर से दूसरे घर चली जाये। शूद्र जाति की वधुओ के लिए भी यही नियम है कि वे रास्ते मे बिना घूंघट निकाले न जाये। शूद्रों का पहनावा ही अलग है, ताकि उन्हें देखकर ही दूर से पहिचान लिया जाये कि यह किसी

सस्ता-सा हृदय-मडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें
जती है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य

पीसने को न देता था ! डर
बहुत प्रयत्न करने के बाद
पिसवाने पर राज़ी हुईं, किन
जवाब दें ? इसी प्रकार अ
अनाज पीसने को मिल जात
प्रति पंसेरी थी । बड़ी कठिन
तीन चार घण्टों तक पीसकर
घर पर आकर बच्चों के
तीन वर्ष तक यही अवस्था
चलने का विचार प्रकट कर
कि जिन के कारण देश
दिन देखने पड़े अब उन्हीं के
करने से इसी प्रकार प्राण
रहेंगे । सब प्रकार के संकट
न गईं ।

चार-पाँच वर्ष में जब
लिया कि स्त्री भले घर की
हुई है, तब बहुत-सी महिल
हो गया था । कभी-कभी
जाया करता, कोई ब्राह्मण
व्यतीत होने लगा । कई म
और धनादि पर्याप्त था,
दिए कि वह अपना एक
उनकी भेंट किया जाय ।

चिन्ता नहीं करते । इस प्रकार के देश में विवाहित होकर सब प्रकार की प्रथाओं को देखते हुए भी इतना साहस करना यह दादी जी का ही काम था ।

परमात्मा की दया से दुर्दिन समाप्त हुए । पिता जी कुछ शिक्षा पा गए और एक मकान भी श्री दादा जी ने खरीद लिया । दरवाज़े दरवाज़े भटकने वाले कुटुम्ब को शान्तिपूर्वक बैठने का स्थान मिल गया और फिर श्री पिता जी के विवाह करने का विचार हुआ । दादी जी, दादा जी तथा पिता जी के साथ अपने मायके गईं । वहीं पिता जी का विवाह कर दिया । वहाँ दोचार मास रहकर सब लोग वधू की विदा कराके साथ लिवा लाए ।

## गार्हस्थ्य जीवन

विवाह हो जाने के पश्चात पिता जी म्युनिसिपैलिटी में पन्द्रह रुपये मासिक वेतन पर नौकर हो गए । उन्होंने कोई बड़ी शिक्षा प्राप्त न की थी । पिता जी को यह नौकरी पसन्द न आई । उन्होंने एक दो साल के बाद नौकरी छोड़कर स्वतन्त्र व्यवसाय आरम्भ करने का प्रयत्न किया और कचहरी में सरकारी स्टाम्प बेचने लगे । आप के जीवन का अधिक भाग इसी व्यवसाय मे व्यतीत हुआ । साधारण श्रेणी के गृहस्थ बनकर उन्होंने इसी व्यवसाय द्वारा अपनी सन्तानो को शिक्षा दी, अपने कुटुम्ब का पालन किया और अपने मुहल्ले के गण्यमान्य व्यक्तियों में गिने जाने लगे । आप रुपये का लेन-देन भी करते थे । आपने तीन बैलगाड़ियाँ भी बनाई थीं, जो किराये पर चला करती थी । पिता जी को व्यायाम से प्रेम था । आप का शरीर बड़ा सुदृढ और सुडौल था । आप नियमपूर्वक अखाड़े में कुश्ती लड़ा करते थे ।

...साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं । बड़ा सूचीपत्र मंगाइये । पता:-हिन्दी साहित्य मं...

जाति की स्त्री है। ये प्रथायें इतनी प्रचलित हैं कि उन्होंने अत्याचार का रूप धारण कर लिया है। एक समय किसी चमार की बधू, जो अंग्रेजी राज्य से विवाह कर के गई थी, कुल-प्रथानुसार ज़मींदार के घर में पैर छूने के लिए गई । वह पैर में बिछुवे (नूपुर) पहने हुई थी और सब पहनावा चमारों का पहने थी । ज़मींदार महोदय की निगाह उसके पैरों पर पड़ी। पूछने पर मालूम हुआ कि चमार की बहू है। ज़मींदार साहब जूता पहनकर आये और उसके पैरों पर खड़े होकर इस ज़ोर से दबाया कि उसकी उँगलियाँ कट गईं! उन्होंने कहा कि यदि चमारों की बहुयें बिछुवा पहनेंगी तो ऊँची जाति के घर की स्त्रियाँ क्या पहनेंगी? ये लोग नितान्त अशिक्षित तथा मूर्ख हैं, किन्तु जाति-अभिमान में चूर रहते हैं। गरीब-से-गरीब अशिक्षित ब्राह्मण या क्षत्रि चाहे वह किसी आयु का हो, यदि शुद्र जाति की बस्ती में से गुजरे तो चाहे कितना ही धनी या वृद्ध कोई शूद्र क्यों न हो, उसको उठकर पालागन या जुहार करनी ही पड़ेगी। यदि ऐसा न करे तो उसी समय वह ब्राह्मण या क्षत्री उसे जूतों से मार सकता है और सब उस शूद्र का ही दोष बताकर उसका तिरस्कार करेंगे ! यदि किसी कन्या या बहू पर व्यभिचारिणी होने का सन्देह किया जाय तो उसे बिना किसी विचार से मारकर चम्बल में प्रवाहित कर दिया जाता है । इसी प्रकार यदि किसी विधवा पर व्यभिचार या किसी प्रकार आचरण भ्रष्ट होने का दोष लगाया जाय तो चाहे वह गर्भवती ही क्यों न हो, उसे तुरन्त ही काटकर चम्बल में पहुँचा दें और किसी को कानोंकान भी खबर न होने दें ! वहाँ के मनुष्य भी सदाचारी होते हैं। वे सब की बहू बेटी को अपनी बहू बेटी समझते हैं । स्त्रियों की मान-मर्यादा की रक्षा के लिए प्राण देने में कोई

चिन्ता नहीं करते । इस प्रकार के देश में विवाहित होकर सब प्रकार की प्रथाओं को देखते हुए भी इतना साहस करना यह दादी जी का ही काम था।

परमात्मा की दया से दुर्दिन समाप्त हुए । पिता जी कुछ शिक्षा पा गए और एक मकान भी श्री दादा जी ने खरीद लिया । दरवाजे दरवाजे भटकने वाले कुटुम्ब को शान्तिपूर्वक बैठने का स्थान मिल गया और फिर श्री पिता जी के विवाह करने का विचार हुआ । दादी जी, दादा जी तथा पिता जी के साथ अपने मायके गईं । वहीं पिता जी का विवाह कर दिया । वहाँ दोचार मास रहकर सब लोग वधू की विदा कराके साथ लिवा लाए ।

## गार्हस्थ्य जीवन

विवाह हो जाने के पश्चात पिता जी म्युनिसिपैलिटी मे पन्द्रह रुपये मासिक वेतन पर नौकर हो गए । उन्होंने कोई बड़ी शिक्षा प्राप्त न की थी । पिता जी को यह नौकरी पसन्द न आई । उन्होंने एक दो साल के बाद नौकरी छोडकर स्वतन्त्र व्यवसाय आरम्भ करने का प्रयत्न किया और कचहरी मे सरकारी स्टाम्प बेचने लगे । आप के जीवन का अधिक भाग इसी व्यवसाय में व्यतीत हुआ । साधारण श्रेणी के गृहस्थ बनकर उन्होंने इसी व्यवसाय द्वारा अपनी सन्तानो को शिक्षा दी, अपने कुटुम्ब का पालन किया और अपने मुहल्ले के गण्यमान्य व्यक्तियो में गिने जाने लगे । आप रुपये का लेन-देन भी करते थे । आपने तीन बैलगाड़ियाँ भी बनाई थीं, जो किराये पर चला करती थी । पिता जी को व्यायाम से प्रेम था । आप का शरीर बडा सुदृढ़ और सुडौल था । आप नियमपूर्वक अखाड़े में कुश्ती लड़ा करते थे ।

सा हरप-महल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें
मती है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें।
दिल्ली

पिता जी के गृह में एक पुत्र उत्पन्न हुआ, किन्तु वह मर गया। उसके एक साल बाद लेखक (श्री रामप्रसाद) ने श्री पिता जी के गृह में ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष ११ सम्वत् १९५४ विक्रमी को जन्म लिया। बड़े प्रयत्नों से मानता मानकर अनेकों गंडे, तावीज़ तथा कवचों द्वारा श्री दादी जी ने इस शरीर की रक्षा का प्रयत्न किया। स्यात् बालकों का रोग गृह में प्रवेश कर गया था। अतएव जन्म लेने के एक या दो मास पश्चात् ही मेरे शरीर की अवस्था भी पहले बालक जैसी होने लगी। किसी ने बताया कि सफ़ेद खरगोश को मेरे शरीर पर से घुमाकर ज़मीन में छोड़ दिया जाय, यदि बीमारी होगी तो खरगोश तुरन्त मर जायेगा। कहते हैं कि हुआ भी ऐसा ही। एक सफ़ेद खरगोश मेरे शरीर पर से उतारकर जैसे ही ज़मीन पर छोड़ा गया, वैसे ही उसने तीन चार चक्कर काटे और मर गया। मेरे विचार में किसी अंश में यह सम्भव भी है, क्योंकि औषधि तीन प्रकार की होती हैं—(१) दैविक, (२) मानुषिक, (३) पैशाचिक। पैशाचिक औषधियों में अनेक प्रकार के पशु या पक्षियों के माँस अथवा रुधिर का व्यवहार होता है, जिन का उपयोग वैद्यक के ग्रन्थों में पाया जाता है। इनमें से एक प्रयोग बड़ा ही कौतुहलोत्पादक तथा आश्चर्यजनक यह है कि जिस बच्चे को जभोखे (सूखा) की बीमारी हो गई हो, यदि उसके सामने चिमगादड़ चीरकर लाया जाये तो एक दो मास का बालक चिमगादड़ को पकड़कर उसका खून चूस लेगा और बीमारी जाती रहेगी! यह बड़ी उपयोगी औषधि है और एक महात्मा की बतलाई हुई है।

जब मैं सात वर्ष का हुआ तो पिता जी ने स्वयं ही मुझे हिन्दी अक्षरों का बोध कराया और एक मौलवी साहब के मकतब में उर्दू

पढ़ने के लिए भेज दिया। मुझे भली-भाँति स्मरण है कि पिता जी अखाड़े मे कुश्ती लड़ने जाते थे और अपने से बलिष्ठ तथा शरीर मे डेढ़ गुने पट्ठे को पटक देते थे। उसी के कुछ दिनों बाद पिता जी का एक बंगाली (श्री चटर्जी) महाशय से प्रेम हो गया। चटर्जी महाशय की अंग्रेजी दवा की दूकान थी। आप बड़े भारी नशाबाज थे। एक समय मे आप छटांक चरस की चिलम उड़ाया करते थे। उन्ही की संगति मे पिता जी ने भी चरस पीना सीख लिया, जिसके कारण उनका शरीर नितान्त नष्ट हो गया। दस वर्ष में ही सम्पूर्ण शरीर सूखकर हड्डियाँ निकल आईं। चटर्जी महाशय सुरापान भी करने लगे। अतएव उनका कलेजा बढ़ गया और उसी से उनका शरीरांत हो गया। मेरे बहुत कुछ समझाने पर पिता जी ने अपनी चरस पीने की आदत को छोड़ा, किन्तु बहुत दिनो के बाद।

मेरे बाद पाँच बहनो और तीन भाइयो का जन्म हुआ। दादी जी ने बहुत कहा कि कुल की प्रथा के अनुसार कन्याओं को मार डाला जाये, किन्तु माता जी ने इसका विरोध किया और कन्याओं के प्राणो की रक्षा की। मेरे कुल में यह पहला ही समय था कि कन्याओं का पोषण हुआ। पर इन मे दो बहनों और भाइयों का देहान्त हो गया। शेष एक भाई, जो इस समय (१९२७ ई०) दस वर्ष का है और तीन बहनें बचीं। माता जी के प्रयत्न से तीनों बहनों को अच्छी शिक्षा दी गई और उनके विवाह बड़ी धूमधाम से किए गए। इसके पूर्व हमारे कुल की कन्यायें किसी को नही ब्याही गईं, क्योंकि वे जीवित ही नही रखी जाती थीं!

दादा जी बड़े सरल प्रकृति के मनुष्य थे। जब तक आप जीवित रहे, पैसे बेचने का ही व्यवसाय करते रहे। आप को गाय पालने का—

*सा रूप-महल व इन्द्रा की अन्य उत्तम पुस्तकें
मती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मं

बहुत बड़ा शौक था। स्वयम् ग्वालियर जाकर बड़ी-बड़ी गायें खरीद कर लाया करते थे। वहाँ की गायें काफी दूध देती हैं। अच्छी गाय दस या पन्द्रह सेर दूध देती है। ये गायें बड़ी सीधी भी होती हैं। दूध दोहन करते समय उनकी टाँगें बाँधने की आवश्यकता नहीं होती और जब जिस का जी चाहे बिना बच्चे के दूध दोहन कर सकता है। बचपन में मैं बहुधा जाकर गाय के थन में मुँह लगाकर दूध पिया करता था। वास्तव में वहाँ की गायें दर्शनीय होती हैं।

दादा जी मुझे खूब दूध पिलाया करते थे। आप को अट्ठारह गोटी (बघिया बग्घा) खेलने का बड़ा शौक था। साँयकाल के समय नित्य शिव-मन्दिर में जाकर दो घण्टे तक परमात्मा का भजन किया करते थे। आपका लगभग पचपन वर्ष की आयु में स्वर्गारोहण हुआ।

बाल्यकाल से ही पिता जी मेरी शिक्षा का अधिक ध्यान रखते थे और ज़रा-सी भूल करने पर बहुत पीटते थे। मुझे अब भी भली-भाँति स्मरण है कि जब मैं नागरी के अक्षर लिखना सीख रहा था तो मुझे 'उ' लिखना न आया। मैंने बहुत प्रयत्न किया। पर जब पिता जी कचहरी चले गए तो मैं भी खेलने चला गया। पिता जी ने कचहरी से आकर मुझ से 'उ' लिखवाया। मैं न लिख सका। उन्हें मालूम हो गया कि मैं खेलने चला गया था। इस पर उन्होंने मुझे बन्दूक के लोहे के गज़ से इतना पीटा कि गज़ टेढ़ा पड़ गया। मैं भागकर दादा जी के पास चला गया, तब बचा। मैं छोटेपन से ही बहुत उद्दण्ड था। पिता जी के पर्याप्त शासन रखने पर भी बहुत उद्दण्डता करता था। एक समय किसी के बाग में जाकर आड़ू के वृक्षों में से सब आड़ू तोड़ डाले। माली पीछे दौड़ा, किन्तु मैं उसके

हाथ न आया । माली ने सब आड़ू पिता जी के सामने ला रखे । उस दिन पिता जी ने मुझे इतना पीटा कि मैं दो दिन तक उठ न सका । इसी प्रकार खूब पिटता था, किन्तु उद्दण्डता अवश्य करता था ! शायद उस बचपन की मार से ही यह शरीर बहुत कठोर तथा सहनशील बन गया ।

## मेरी कुमारावस्था

जब मैं उर्दू का चौथा दर्जा पास कर के पाँचवें में आया उस समय मेरी अवस्था लगभग चौदह वर्ष की होगी । इसी बीच मुझे पिता जी की सन्दूक से रुपये-पैसे चुराने की आदत पड़ गई थी । इन पैसों से उपन्यास खरीदकर खूब पढ़ता । पुस्तक विक्रेता महाशय पिता जी की जान-पहचान के थे । उन्होंने पिता जी से मेरी शिकायत की । अब मेरी कुछ जाँच होने लगी । मैंने उन महाशय के यहाँ से किताबें खरीदना ही छोड़ दिया । मुझ मे दो-एक खराब आदतें भी पड़ गईं । मै सिग्रेट पीने लगा । कभी-कभी भंग भी जमा लेता था । कुमारावस्था मे स्वतन्त्रतापूर्वक पैसे का हाथ मे आ जाने से और उर्दू के प्रेम-रसपूर्ण उपन्यासो तथा गज़लों की पुस्तकों ने आचरण पर भी अपना कुप्रभाव दिखाना आरम्भ कर दिया । घुन लगना आरम्भ ही हुआ था कि परमात्मा ने बड़ी सहायता की । मैं एक रोज भंग पीकर पिता जी की संदूकची में से रुपये निकालने गया । नशे की हालत में होश ठीक न रहने के कारण संदूकची खटक गई । माता जी को सन्देह हुआ । उन्होंने मुझे पकड़ लिया । चाभी पकड़ी गई ! मेरे सन्दूक की तलाशी ली गई, बहुत से रुपये निकले और सारा भेद खुल गया ! मेरी किताबों में अनेक उपन्यासादि पाए गए जो उसी समय फाड़ डाले गए ।

परमात्मा की कृपा से मेरी चोरी पकड़ ली गई, नहीं तो दो चार वर्ष में न दीन का रहता न दुनिया का । इसके बाद भी मैंने बहुत घातें लगाईं, किन्तु पिता जी ने संदूकची का ताला बदल दिया था। मेरी कोई चाल न चल सकी । अब जब कभी मौका मिल जाता तो माता जी के रुपयों पर हाथ फेर देता था । इसी प्रकार की कुटेवों के कारण दो बार उर्दू मिडिल की परीक्षा में उत्तीर्ण न हो सका । तब मैंने अँग्रेज़ी पढ़ने की इच्छा प्रकट की । पिता जी मुझे अंग्रेजी पढ़ाना न चाहते थे और किसी व्यवसाय में लगाना चाहते थे, किन्तु माता जी की कृपा से मैं अँग्रज़ी पढ़ने भेजा गया । दूसरे वर्ष जब मैं उर्दू मिडिल की परीक्षा में फेल हुआ उसी समय पड़ोस के देव-मन्दिर में, जिस की दीवार मेरे मकान से मिली थी, एक पुजारी जी आ गए । आप बड़े ही सच्चरित्र व्यक्ति थे । मैं आपके पास उठने बैठने लगा ।

मैं मन्दिर में जाने-आने लगा । कुछ पूजा-पाठ भी सीखने लगा। पुजारी जी के उपदेशों का बड़ा उत्तम प्रभाव हुआ । मैं अपना अधिकतर समय स्तुतिपूजन तथा पढ़ने में व्यतीत करने लगा। पुजारी जी मुझे ब्रह्मचर्य पालन का खूब उपदेश देते थे । वह मेरे पथ-प्रदर्शक बने । मैंने एक दूसरे सज्जन की देखा-देखी व्यायाम करना भी आरम्भ कर दिया । अब तो मुझे भक्ति-मार्ग में कुछ आनन्द प्राप्त होने लगा और चार-पाँच महीने में ही व्यायाम भी खूब करने लगा । मेरी सब बुरी आदतें तथा कुभावनायें जाती रहीं। स्कूलों की छुट्टियाँ समाप्त होने पर मैंने मिशन स्कूल के अँग्रेजी के पाँचवें दर्जे में नाम लिखा लिया । इस समय तक मेरी और सब कुटेवें तो छूट गई थीं, किन्तु सिग्रेट पीना न छूटता था । मैं सिग्रेट

बहुत पीता था । एक दिन में पचास-साठ सिग्रेट पी डालता था ! मुझे बड़ा दुःख होता था कि मैं इस जीवन में सिग्रेट पीने की कुटेव को न छोड़ सकूंगा । स्कूल में भरती होने के थोड़े दिनों बाद ही एक सहपाठी श्रीयुत सुशीलचन्द्र सेन से कुछ विशेष स्नेह हो गया । उन्ही की दया के कारण मेरा सिग्रेट पीना भी छूट गया ।

देव-मन्दिर मे स्तुति-पूजा करने की प्रवृत्ति को देखकर श्रीयुत मुन्शी इन्द्रजीत जी ने मुझे सन्ध्या करने का उपदेश दिया । आप उसी मन्दिर में रहनेवाले किसी महाशय के पास आया करते थे । व्यायामादि करने के कारण मेरा शरीर बड़ा सुगठित हो गया था और रंग निखर आया था । मैने जानना चाहा कि सन्ध्या क्या वस्तु है । मुन्शी जी ने आर्य-समाज सम्बन्धी कुछ उपदेश दिए । इसके बाद मैंने सत्यार्थ-प्रकाश पढ़ा । इससे तख्ता ही पलट गया । सत्यार्थ-प्रकाश के अध्ययन ने मेरे जीवन के इतिहास में एक नवीन पृष्ठ खोल दिया । मैने उस मे उल्लिखित ब्रह्मचर्य के कठिन नियमो का पालन करना आरम्भ कर दिया । मैं एक कम्बल को तख्त पर बिछाकर सोता और प्रात.काल चार बजे से ही शैया त्याग कर देता । स्नान सन्ध्यादि से निवृत्त हो व्यायाम करता, किन्तु मन की वृत्तियाँ ठीक न होती । मैंने रात्रि के समय भोजन करना त्याग दिया । केवल थोड़ा-सा दूध ही रात को पीने लगा । सहसा ही बुरी आदतों को छोड़ा था, इस कारण कभी-कभी स्वप्न-दोष हो जाता । तब किसी सज्जन के कहने से मैंने नमक खाना भी छोड़ दिया । केवल उबाल कर साग या दाल से एक समय भोजन करता । मिर्च खटाई तो छूता भी न था । इस प्रकार पाँच वर्ष तक बराबर नमक न खाया । नमक के न खाने से शरीर के सब दोष दूर हो गए और मेरा

-सा -मडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें
मती है । बड़ा सूचीपत्र मंगावें । पता:—हिन्दी साहित्य

स्वास्थ्य दर्शनीय हो गया । सब लोग मेरे स्वास्थ्य को आश्चर्य की दृष्टि से देखा करते ।

मैं थोड़े दिनों में ही बड़ा कट्टर आर्य-समाजी हो गया । आर्य-समाज के अधिवेशन में जाता-आता । संन्यासी-महात्माओं के उपदेशों को बड़ी श्रद्धा से सुनता । जब कोई संन्यासी आर्य-समाज में आता तो उसकी हर प्रकार सेवा करता, क्योंकि मेरी प्राणायाम सीखने की बड़ी उत्कट इच्छा थी । जिन संन्यासी का नाम सुनता शहर से तीन-चार मील भी उसकी सेवा के लिए जाता, फिर वह संन्यासी चाहे जिस मत का अनुयायी होता । जब मैं अँग्रेज़ी के सातवें दर्जे में था तब सनातनधर्मी पण्डित जगतप्रसाद जी शाहजहाँपुर पधारे। उन्होंने आर्य-समाज का खण्डन करना प्रारम्भ किया । आर्य-समाजियों ने भी उनका विरोध किया और पं० अखिलानन्द जी को बुलाकर शास्त्रार्थ कराया । शास्त्रार्थ संस्कृत में हुआ । जनता पर अच्छा प्रभाव हुआ । मेरे कामों को देखकर मुहल्ले वालों ने पिता जी से मेरी शिकायत की । पिता जी ने मुझ से कहा कि आर्य-समाजी हार गए, अब तुम आर्य-समाज से अपना नाम कटा दो । मैंने पिता जी से कहा कि आर्य-समाज के सिद्धान्त सार्वभौम हैं, उन्हें कौन हरा सकता है ? अनेक वाद-विवाद के पश्चात् पिता जी ज़िद्द पकड़ गए कि आर्य-समाज से त्यागपत्र न दोगे तो मैं तुझे रात में सोते समय मार दूंगा । या तो आर्य-समाज से त्यागपत्र दे दे, या घर छोड़ दे । मैंने भी विचारा कि पिता जी का क्रोध यदि अधिक बढ़ गया और उन्होंने मुझ पर कोई वस्तु ऐसी दे पटकी कि जिससे बुरा परिणाम हुआ तो अच्छा न होगा । अतएव घर त्याग देना ही उचित है । मैं केवल एक कमीज़ पहने

खड़ा था और पाजामा उतारकर धोती पहन रहा था । पाजामे के नीचे लंगोट बँधा था । पिता जी ने हाथ से धोती छीन ली और कहा, घर से निकल । मुझे भी क्रोध आ गया । मैं पिता जी के पैर छूकर गृहत्याग कर चला गया । कहाँ जाऊँ कुछ समझ में न आया । शहर में किसी से जान-पहचान भी न थी, जहाँ छिप रहता । मैं जंगल की ओर चला गया । एक रात तथा एक दिन बाग में पेड़ पर बैठा रहा । भूख लगने पर खेतों में से हरे चने तोड़कर खाए, नदी में स्नान किया और जलपान किया । दूसरे दिन सन्ध्या समय पं० अखिलानन्द जी का व्याख्यान आर्य-समाज मन्दिर में था । मैं आर्य-समाज मन्दिर में गया । एक पेड़ के नीचे एकान्त में खड़ा व्याख्यान सुन रहा था कि पिता जी दो मनुष्यों को लिए हुए आ पहुँचे और मैं पकड़ लिया गया । वह उसी समय पकड़कर स्कूल के हैडमास्टर के पास ले गए । हैडमास्टर साहब ईसाई थे । मैंने उन्हें सब वृत्तान्त कह सुनाया । उन्होंने पिता जी को ही समझाया कि समझदार लड़के को मारना-पीटना ठीक नहीं । मुझे भी बहुत-कुछ उपदेश दिया । उस दिन से पिता जी ने कभी भी मुझ पर हाथ नहीं उठाया, क्योंकि मेरे घर से निकल जाने पर घर में बड़ा क्षोभ रहा । एक रात एक दिन किसी ने भोजन नहीं किया, सब बड़े दुखी हुए कि अकेला पुत्र न जाने नदी में डूब गया या रेल से कट गया ! पिता जी के हृदय को भी बड़ा भारी धक्का पहुँचा । उस दिन से वे मेरी प्रत्येक बात सहन कर लेते थे, अधिक विरोध न करते थे । मैं पढ़ने में भी बड़ा प्रयत्न करता था और अपने क्लास में प्रथम उत्तीर्ण होता था । यह अवस्था आठवें दर्जे तक रही । जब मैं आठवें दर्जे में था, उसी समय स्वामी श्री सोमदेव जी सरस्वती आर्य-समाज शाहजहाँपुर में पधारे ।

...साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें
हैं । बड़ा सूचीपत्र मंगावें । पता:—हिन्दी सा...

उनके व्याख्यानों का जनता पर वड़ा अच्छा प्रभाव हुआ । कुछ सज्जनों के अनुरोध से स्वामी जी कुछ दिनों के लिए शाहजहाँपुर आर्य-समाज मन्दिर में ठहर गए । आप की तबियत भी कुछ खराब थी, इस कारण शाहजहाँपुर का जलवायु लाभदायक देखकर आप वहाँ ठहरे थे । मैं आपके पास जाया-आया करता था । प्राणपण से मैंने स्वामी जी महाराज की सेवा की और इसी सेवा के परिणामस्वरूप मेरे जीवन में नवीन परिवर्तन हो गया । मैं रात को दो-तीन बजे तक और दिन भर आपकी सेवा-सुश्रूषा में उपस्थित रहता । अनेकों प्रकार की औषधियों का प्रयोग किया । कतिपय सज्जनों ने बड़ी सहानुभूति दिखलाई, किन्तु रोग का शमन न हो सका । आप मुझे अनेकों प्रकार के उपदेश दिया करते थे । उन उपदेशों को मैं श्रवण कर कार्य रूप में परिणत करने का पूरा प्रयत्न करता । वास्तव में आप मेरे गुरुदेव तथा पथ-प्रदर्शक थे । आपकी शिक्षाओं ने ही मेरे जीवन में आत्मिक-वल का संचार किया जिन के सम्वन्ध में मैं पृथक वर्णन करूँगा ।

कुछ नवयुवकों ने मिलकर आर्य-समाज मन्दिर में आर्य कुमार सभा खोली थी, जिसके साप्ताहिक अधिवेशन प्रत्येक शुक्रवार को हुआ करते थे । वहीं पर धार्मिक पुस्तकों का पठन, विषय विशेष पर निवन्ध लेखन और पठन तथा वाद-विवाद होता था । कुमार सभा से ही मैंने जनता के सम्मुख वोलने का अभ्यास किया । वहुधा कुमार सभा के नवयुवक मिलकर शहर के मेलों में प्रचारार्थ जाया करते थे । वाज़ारों में व्याख्यान देकर आर्य-समाज के सिद्धान्तों का प्रचार करते थे । ऐसा करते-करते मुसलमानों से मुवाहसा होने लगा एव पुलिस ने झगड़े का भय देखकर वाज़ारों में व्याख्यान

देना बन्द करा दिया । आर्य-समाज के सदस्यों ने कुमार-सभा के प्रयत्न को देखकर उस पर अपना शासन जमाना चाहा, किन्तु कुमार किसी का अनुचित शासन कब मानने वाले थे ! आर्य-समाज के मन्दिर में ताला डाल दिया गया कि कुमार-सभा वाले आर्य-समाज मन्दिर में अधिवेशन न करें । यह भी कहा गया कि यदि वे वहाँ अधिवेशन करेंगे, तो पुलिस को लाकर उन्हें मन्दिर से निकलवा दिया जायगा । कई महीनों तक हम लोग मैदान में अपनी सभा के अधिवेशन करते रहे, किन्तु बालक ही तो थे, कब तक इस प्रकार कार्य चला सकते थे ? कुमार-सभा टूट गई । तब आर्य-समाजियों को शान्ति हुई ! कुमार-सभा ने अपने शहर में तो नाम पाया ही था । जब लखनऊ में कांग्रेस हुई तो भारतवर्षीय कुमार सम्मेलन का भी वार्षिक अधिवेशन वहाँ हुआ । उस अवसर पर सबसे अधिक पारितोषिक लाहौर और शाहजहाँपुर की कुमार सभाओं ने पाए थे, जिनकी प्रशंसा समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुई थी । उन्हीं दिनों मिशन स्कूल के एक विद्यार्थी से मेरा परिचय हुआ । वे कभी कभी कुमार-सभा में आ जाया करते थे । मेरे भाषण का उन पर अधिक प्रभाव हुआ । वैसे तो वे मेरे मकान के निकट ही रहते थे, किन्तु आपस में कोई मेल न था । बैठने-उठने से आपस में प्रेम बढ़ गया । आप एक ग्राम के निवासी थे । जिस ग्राम में आपका घर था वह ग्राम बड़ा प्रसिद्ध है । वहाँ का प्रत्येक निवासी अपने घर में बिना लाइसेन्स अस्त्र-शस्त्र रखता है । बहुत से लोगों के यहाँ बन्दूक तथा तमंचे भी रहते हैं, जो ग्राम में ही बन जाते हैं । ये सब टोपीदार होते हैं । उक्त महाशय के पास भी एक नाली का छोटा-सा पिस्तौल था, जिसे वह अपने साथ शहर में

...मंडल व हिन्दी का अन्य उत्तम पुस्तकें
है । बड़ा सूचीपत्र मंगावें । पता:—हिन्दी साहित्य...

रखते थे । जब मुझ से अधिक प्रेम बढ़ा तो उन्होंने वह पिस्तौल मुझे रखने के लिए दिया । इस प्रकार के हथियार रखने की मेरी उत्कट इच्छा थी, क्योंकि मेरे पिता के कई शत्रु थे, जिन्होंने पिता जी पर अकारण ही लाठियों का प्रहार किया था । मैं चाहता था कि यदि पिस्तौल मिल जायँ तो मैं पिता जी के शत्रुओं को मार डालूं ! यह एक नाली का पिस्तौल उक्त महाशय अपने पास रखते तो थे, किन्तु उसको चलाकर न देखा था। मैंने उसे चलाकर देखा तो वह नितान्त बेकार सिद्ध हुआ। मैंने उसे ले जाकर एक कोने में डाल दिया । उक्त महाशय से स्नेह इतना बढ़ गया कि सायंकाल को मैं अपने घर से खीर की थाली ले जाकर उनके साथ-साथ उनके मकान पर ही भोजन किया करता था । वे मेरे साथ श्री स्वामी सोमदेव जी के पास भी जाया करते थे । उनके पिता जब शहर आए तो उनको यह बड़ा बुरा मालूम हुआ । उन्होंने मुझ से अपने लड़के के पास न आने या उसे कहीं साथ न ले जाने के लिए बहुत ताड़ना की और कहा कि यदि मैं उनका कहना न मानूंगा तो वह ग्राम से आदमी लाकर मुझे पिटवायेंगे । मैंने उनके पास जाना आना त्याग दिया, किन्तु वह महाशय मेरे यहाँ आते-जाते रहे।

लगभग अट्ठारह वर्ष की उम्र तक मैं रेल पर न चढ़ा था । मैं इतना दृढ़ सत्यवक्ता हो गया था कि एक समय रेल पर चढ़कर तीसरे दर्जे का टिकट खरीदा था, पर इण्टर क्लास में बैठकर दूसरों के साथ-साथ चला गया। इस बात से मुझे बड़ा खेद हुआ । मैंने अपने साथियों से अनुरोध किया कि यह तो एक प्रकार की चोरी है। सब को मिलकर इण्टर क्लास का भाड़ा स्टेशन मास्टर को दे देना चाहिए. । एक समय मेरे पिता जी दीवानी में किसी पर दावा कर

के वकील से कह गए थे कि जो काम हो वह मुझ से करा लें। कुछ आवश्यकता पड़ने पर वकील साहब ने मुझे बुला भेजा और कहा कि मैं पिता जी के हस्ताक्षर वकालतनामे पर कर दूँ। मैंने तुरन्त उत्तर दिया कि यह तो धर्म के विरुद्ध होगा, इस प्रकार का पाप मैं कदापि नहीं कर सकता। वकील साहब ने बहुत कुछ समझाया कि एक सौ रुपये से अधिक का दावा है, मुकदमा खारिज हो जायगा। किन्तु मुझ पर कुछ भी प्रभाव न हुआ, न मैंने हस्ताक्षर किए। अपने जीवन मे सर्वप्रकारेण सत्य का आचरण करता था, चाहे कुछ हो जाय, सत्य बात कह देता था।

मेरी माता मेरे धर्म-कार्यों मे तथा शिक्षादि मे बड़ी सहायता करती थी। वे प्रातःकाल चार बजे ही मुझे जगा दिया करती थी। मैं नित्य-प्रति नियमपूर्वक हवन भी किया करता था। मेरी छोटी बहन का विवाह करने के निमित्त माता जी तथा पिता जी ग्वालियर गए। मैं तथा श्री दादी जी शाहजहाँपुर में ही रह गए, क्योंकि मेरी वार्षिक परीक्षा थी। परीक्षा समाप्त करके मैं भी बहन के विवाह में सम्मिलित होने को गया। बारात आ चुकी थी। मुझे ग्राम के बाहर ही मालूम हो गया कि बारात में वेश्या आई है। मैं घर न गया और न बारात में सम्मिलित हुआ। मैंने विवाह में कोई भी भाग न लिया। मैंने माता जी से थोड़े रुपये माँगे। माता जी ने मुझे लगभग १२५ रुपये दिए, जिनको लेकर मैं ग्वालियर गया। यह अवसर रिवाल्वर खरीदने का अच्छा हाथ लगा। मैंने सुन रखा था कि रियासत मे बड़ी आसानी से हथियार मिल जाते हैं। बड़ी खोज की। टोपीदार बन्दूक तथा पिस्तौल तो मिलते थे, किन्तु कारतूसी हथियारों का कहीं पता नहीं लगा। पता लगा भी तो एक

य हन्दी को अन्य उत्तम पुस्तकें
अती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:–हिन्दी साहित्य

महाशय ने मुझे ठग लिया और ७५ रुपये में टोपीदार पाँच फायर करने वाला एक रिवाल्वर दिया। रियासत की बनी हुई बारूद और थोड़ी-सी टोपियाँ दे दीं। मैं इसी को लेकर बड़ा प्रसन्न हुआ। सीधा शाहजहाँपुर पहुँचा। रिवाल्वर को भरकर चलाया तो गोली केवल पन्द्रह या बीस गज़ पर ही गिरी, क्योंकि बारूद अच्छी न थी। मुझे बड़ा खेद हुआ। माता जी भी जब लौटकर शाहजहाँपुर आई तो उन्होंने मुझ से पूछा कि क्या लाये ? मैंने कुछ कहकर टाल दिया। रुपये सब खर्च हो गए। शायद एक गिन्नी बची थी, सो मैंने माता जी को लौटा दी। मुझे जब किसी बात के लिए धन की आवश्यकता होती तो मैं माता जी से कहता और वह मेरी माँग पूरी कर देती थीं। मेरा स्कूल घर से एक मील दूर था। मैंने माता जी से प्रार्थना की कि मुझे साइकिल ले दें। उन्होंने लगभग एक सौ रुपये दिए। मैंने साइकिल खरीद ली। उस समय मैं अंग्रेज़ी के नवें दर्जे में आ गया था। किसी धार्मिक या देश सम्बन्धी पुस्तक पढ़ने की इच्छा होती तो माता जी ही से दाम ले जाता। लखनऊ काँग्रेस जाने के लिए मेरी बड़ी इच्छा थी। दादी जी तथा पिता जी तो बहुत विरोध करते रहे, किन्तु माता जी ने मुझे खर्च दे ही दिया। उसी समय शाहजहाँपुर में सेवा-समिति का आरम्भ हुआ था। मैं बड़े उत्साह के साथ सेवा-समिति में सहयोग देता था। पिता जी तथा दादी जी को मेरे इस प्रकार के कार्य अच्छे न लगते थे, किन्तु माता जी मेरा उत्साह भंग न होने देती थीं, जिसके कारण उन्हें बहुधा पिता जी की डाट-फटकार तथा दण्ड भी सहन करना पड़ता था। वास्तव में, मेरी माता जी स्वर्गीय देवी हैं। मुझ में जो कुछ जीवन तथा साहस आया, वह मेरी माता जी तथा गुरुदेव श्री

सोमदेव जी की कृपाओं का ही परिणाम है। दादी जी तथा पिता जी मेरे विवाह के लिए बहुत अनुरोध करते, किन्तु माता जी यही कहती कि शिक्षा पा चुकने के बाद ही विवाह करना उचित होगा। माता जी के प्रोत्साहन तथा सद्व्यवहार ने मेरे जीवन में वह दृढ़ता उत्पन्न की कि किसी आपत्ति तथा संकट के आने पर भी मैंने अपने संकल्प को न त्यागा।

## मेरी माँ

ग्यारह वर्ष की उम्र में माता जी विवाह कर शाहजहाँपुर आई थी। उस समय आप नितान्त अशिक्षित एक ग्रामीण कन्या के सदृश थी। शाहजहाँपुर आने के थोड़े दिनो बाद श्री दादी जी ने अपनी छोटी बहन को बुला लिया। उन्होने माता जी को गृह-कार्य की शिक्षा दी। थोडे हो दिनो में माता जी ने घर के सब काम-काज को समझ लिया और भोजनादि का ठीक ठीक प्रबन्ध करने लगी। मेरे जन्म होने के पाँच या सात वर्ष बाद आपने हिन्दी पढ़ना आरम्भ किया। पढ़ने का शौक आपको खुद ही पैदा हुआ था। मुहल्ले की सखी-सहेली जो घर पर आ जाती थी, उन्ही मे जो कोई शिक्षित थी, माता जी उनसे अक्षर बोध करती। इस प्रकार, घर का सब काम कर चुकने के बाद जो कुछ समय मिल जाता, उसमे पढ़ना-लिखना करतीं। परिश्रम के फल से थोड़े दिनो में ही वे देवनागरी पुस्तको का अवलोकन करने लगी। मेरी बहनो को छोटी आयु में, माता जी ही उन्हें शिक्षा दिया करती थी। जब से मैंने आर्य-समाज में प्रवेश किया, तब से माता जी से खूब वार्तालाप होता। उस समय की अपेक्षा अब आपके विचार भी कुछ उदार हो गये हैं। यदि मुझे

...-साहित्य-मंडल व हिन्दी का अन्य उत्तम पुस्तकें
है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी सा...

ऐसी माता न मिलतीं, तो मैं भी अति साधारण मनुष्यों की भाँति संसार-चक्र में फँसकर जीवन निर्वाह करता। शिक्षादि के अतिरिक्त क्रान्तिकारी जीवन में भी आपने मेरी वैसे ही सहायता की है, जैसी मेज़िनी को उनकी माता ने की थी। यथासमय मैं उन सारी बातों का उल्लेख करूँगा। माता जी का सबसे बड़ा आदेश मेरे लिए यही था कि किसी की प्राण-हानि न हो। उनका कहना था कि अपने शत्रु को भी कभी प्राण-दण्ड न देना। आपके इस आदेश की पूर्ति करने के लिए मुझे मजबूरन दो एक बार अपनी प्रतिज्ञा भंग भी करनी पड़ी थी।

जन्मदात्री जननी, इस जीवन में तो तुम्हारा ऋण-परिशोध करने के प्रयत्न करने का भी अवसर न मिला। इस जन्म में तो क्या यदि अनेक जन्मों में भी सारे जीवन प्रयत्न करूँ तो भी तुमसे उऋण नहीं हो सकता। जिस प्रेम तथा दृढ़ता के साथ तुमने इस तुच्छ जीवन का सुधार किया है, वह अवर्णनीय है। मुझे जीवन की प्रत्येक घटना का स्मरण है कि तुमने किस प्रकार अपनी दैवी वाणी का उपदेश करके मेरा सुधार किया है। तुम्हारी दया से ही मैं देश-सेवा में संलग्न हो सका। धार्मिक जीवन में भी तुम्हारे ही प्रोत्साहन ने सहायता दी। जो कुछ शिक्षा मैंने ग्रहण की उसका भी श्रेय तुम्हीं को है। जिस मनोहर रूप से तुम मुझे उपदेश करती थीं, उसका स्मरण कर तुम्हारी मंगलमयी मूर्ति का ध्यान आ जाता है और मस्तक नत हो जाता है। तुम्हें यदि मुझे ताड़ना भी देनी हुई, तो बड़े स्नेह से हर एक बात को समझा दिया। यदि मैंने धृष्टतापूर्ण उत्तर दिया तब तुमने प्रेम भरे शब्दों में यही कहा कि तुम्हें जो अच्छा लगे, वह करो, किन्तु ऐसा करना ठीक नहीं, इसका परिणाम अच्छा न होगा।

जीवनदात्री ! तुमने इस शरीर को जन्म देकर केवल पालन-पोषण ही नहीं किया किन्तु आत्मिक, धार्मिक तथा सामाजिक उन्नति में तुम्ही मेरी सदैव सहायक रही। जन्म-जन्मान्तर परमात्मा ऐसी ही माता दे।

महान-से-महान संकट मे भी तुमने मुझे अधीर न होने दिया। सदैव अपनी प्रेम भरी वाणी को सुनाते हुए मुझे सान्त्वना देती रहीं। तुम्हारी दया की छाया मे मैंने अपने जीवन भर मे कोई कष्ट अनुभव न किया। इस संसार मे मेरी किसी भी भोग विलास तथा ऐश्वर्य की इच्छा नही। केवल एक तृष्णा है, वह यह कि एक बार श्रद्धापूर्वक तुम्हारे चरणो की सेवा करके अपने जीवन को सफल बना लेता। किन्तु यह इच्छा पूर्ण होती नही दिखाई देती और तुम्हे मेरी मृत्यु का दुख-सम्वाद सुनाया जायगा। माँ, मुझे विश्वास है कि तुम यह समझ कर धैर्य धारण करोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओं की माता—भारत माता की सेवा मे अपने जीवन को बलि-वेदी की भेंट कर गया और उसने तुम्हारी कुक्षि को कलंकित न किया, अपनी प्रतिज्ञा मे दृढ़ रहा। जब स्वाधीन भारत का इतिहास लिखा जावेगा, तो उसके किसी पृष्ठ पर उज्ज्वल अक्षरों मे तुम्हारा भी नाम लिखा जायगा। गुरु गोविन्दसिंह जी की धर्म-पत्नी ने जब अपने पुत्रों की मृत्यु का सम्वाद सुना था, तो बहुत हर्षित हुई थी और गुरु के नाम पर धर्म-रक्षार्थ अपने पुत्रों के बलिदान पर मिठाई बाँटी थी। जन्मदात्री ! वर दो कि अन्तिम समय भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो और तुम्हारे चरण कमलों को प्रणाम कर मैं परमात्मा का स्मरण करता हुआ शरीर त्याग करूँ।

५४१०

सस्ता-सा हाथ-मदन व हिन्दी का ... पुस्तक
... है। ... । पता:-हिन्दी साहित्य ...

माता जी के अतिरिक्त जो कुछ जीवन तथा शिक्षा मैंने प्राप्त की वह पूज्यपाद श्री १०८ स्वामी सोमदेव जी की कृपा का परिणाम है। आपका नाम श्रीयुत ब्रजलाल चौपड़ा था। पंजाब के लाहौर शहर में आपका जन्म हुआ था। आपका कुटुम्ब प्रसिद्ध था, क्योंकि आपके दादा महाराजा रणजीतसिंह के मन्त्रियों में से एक थे। आपके जन्म के कुछ समय पश्चात् आपकी माता का देहान्त हो गया था। आपको दादी ने ही आपका पालन-पोषण किया था। आप अपने पिता की अकेली सन्तान थे। जब आप बढ़े तो चाचियों ने दो तीन वार आपको ज़हर देकर मार देने का प्रयत्न किया, ताकि उनके लड़कों को ही जायदाद का अधिकार मिल जाय। आपके चाचा आप पर वड़ा स्नेह करते थे और शिक्षादि की ओर विशेष ध्यान रखते थे। अपने चचेरे भाइयों के साथ साथ आप भी अंग्रेजी स्कूल में पढ़ते थे। जव अपने एन्ट्रेन्स की परीक्षा दी तो परीक्षा-फल प्रकाशित होने पर आप यूनिवर्सिटी में प्रथम आये और चचा के लड़के फेल हो गये! घर में वड़ा शोक मनाया गया। दिखाने के लिए भोजन तक नहीं वना। आपकी प्रशंसा तो दूर, किसी ने उस दिन भोजन करने को भी न पूछा और वड़ी उपेक्षा की दृष्टि से देखा। आपका हृदय पहले से ही घायल था, इस घटना से आपके जीवन को और भी वड़ा आघात पहुँचा। चाचा जी के कहने-सुनने पर कालेज में नाम लिखा तो लिया, किन्तु वड़े उदासीन रहने लगे। आपके हृदय में दया वहुत थी। वहुधा अपनी कितावें तथा कपड़े दूसरे सहपाठियों को वाँट दिया करते थे। नये कपड़े वाँट कर पुराने कपड़े स्वयं पहना

करते थे। एक दो बार चाचा जी से दूसरे लोगों ने कहा कि ब्रजलाल को कपड़े भी आप नहीं बनवा देते, जो वह पुराने फटे कपड़े पहने फिरते हैं! चाचा जी को बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि उन्होंने कई जोड़े कपड़े थोड़े दिनों पहले ही बनवाये थे। आपके सन्दूकों की तलाशी ली गई। उनमें दो चार जोड़ी पुराने कपड़े निकले, तब चाचा जी ने पूछा तो मालूम हुआ कि वे नये कपड़े निर्धन विद्यार्थियों को बाँट दिया करते हैं। चाचा जी ने कहा कि जब कपड़े बाँटने की इच्छा हो कह दिया करो, तो हम विद्यार्थियों को कपड़े बनवा दिया करेंगे, अपने कपड़े न बाँटा करो। वे बहुधा निर्धन विद्यार्थियों को अपने घर पर ही भोजन कराया करते थे। चाचियों तथा चचाजात भाइयों के व्यवहार से आप को बड़ा क्लेश होता था। इसी कारण से आपने विवाह न किया। घरेलू दुर्व्यवहार से दुखित होकर आपने घर त्याग देने का निश्चय कर लिया और एक रात को जब सब सो रहे थे, चुपचाप उठकर घर से निकल गये! कुछ भी सामान साथ में न लिया। बहुत दिनों तक इधर-उधर भटकते रहे। भटकते भटकते आप हरिद्वार पहुँचे। वहाँ एक सिद्ध योगी से भेंट हुई। श्री ब्रजलाल जी को जिस वस्तु की इच्छा थी, वह प्राप्त हो गई। उसी स्थान पर रहकर श्री ब्रजलाल जी ने योग विद्या की पूर्ण शिक्षा पाई। योगिराज की कृपा से आप अट्ठारह बीस घण्टे की समाधि लगा लेने लगे। कई वर्ष तक आप वहाँ रहे। इस समय आपको योग का इतना अभ्यास हो गया था कि अपने शरीर को वे इतना हल्का कर लेते थे कि पानी पर पृथ्वी के समान चले जाते थे। अब आप को देश भ्रमण तथा अध्ययन करने की इच्छा हुई। अनेक स्थानों में भ्रमण करते हुए अध्ययन करते रहे। जर्मनी तथा अमेरिका में—

साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी

के वार्षिकोत्सव पर बुलाया जाता। सन् १९१५ ई० मे कतिपय सज्जनों की प्रार्थना पर आप आर्य-समाज मन्दिर शाहजहाँपुर में ही निवास करने लगे। इसी समय से मैंने आपकी सेवा-सुश्रूषा मे समय व्यतीत करना प्रारम्भ कर दिया।

स्वामी जी मुझे धार्मिक तथा राजनैतिक उपदेश देते थे और इस प्रकार की पुस्तकें पढ़ने का भी आदेश करते थे। राजनीति में भी आपका ज्ञान उच्च कोटि का था। लाला हरदयाल से आपसे बहुत परामर्श होता था। एक बार महात्मा मुन्शीराम जी (स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी) को आपने पुलिस के प्रकोप से बचाया। आचार्य रामदेव जी तथा श्रीयुत कृष्ण जी से आपका बड़ा स्नेह था। राजनीति में आप मुझसे अधिक खुलते न थे। आप मुझसे बहुधा कहा करते थे कि एन्ट्रेन्स पास कर लेने के बाद यूरोप यात्रा अवश्य करना। इटली जाकर महात्मा मेज़िनी की जन्मभूमि के दर्शन अवश्य करना। सन् १९१६ ई० में लाहौर षड्यन्त्र का मामला चला। मैं समाचार-पत्रों में उसका सब वृत्तान्त बड़े चाव से पढ़ा करता था। श्रीयुत भाई परमानन्द जी मे मेरी बड़ी श्रद्धा थी, क्योंकि उनकी लिखी हुई 'तवारीख हिन्द' पढ़कर मेरे हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ा था। लाहौर षड्यन्त्र का फ़ैसला अखबारों में छपा। भाई परमानन्द जी को फाँसी की सजा पढ़कर मेरे शरीर मे आग लग गई। मैंने विचारा कि अंग्रेज बड़े अत्याचारी है, इनके राज्य मे न्याय नहीं, जो इतने बड़े महानुभाव को फाँसी की सजा का हुक्म दे दिया। मैंने प्रतिज्ञा की कि इसका बदला अवश्य लूँगा। जीवन भर अंग्रेजी राज्य को विध्वंस करने का प्रयत्न करता रहूँगा। इस प्रकार की प्रतिज्ञा कर चुकने के पश्चात् मैं स्वामी जी के पास आया। सब

...हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें
है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी सा...

थे। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने कई घण्टे प्रार्थना की तब आपने उपरोक्त विवरण सुनाया।

अंग्रेज़ी की योग्यता आपकी बड़ी उच्च कोटि की थी। आपका शास्त्र विषयक ज्ञान बड़ा गम्भीर था। आप बड़े निर्भीक वक्ता थे। आपकी योग्यता को देखकर एक बार मद्रास की काँग्रेस कमेटी ने अखिल भारतवर्षीय काँग्रेस का प्रतिनिधि चुनकर भेजा था। आगरा की आर्यमित्र सभा के वार्षिकोत्सव पर आपके व्याख्यानों को श्रवण कर राजा महेन्द्रप्रताप जी बड़े मुग्ध हुए थे। राजा साहब ने आपके पैर छुए और आपको अपनी कोठी पर लिवा ले गये। उस समय से राजा साहब बहुधा आपके उपदेश सुना करते और आपको अपना गुरु मानते थे। इतना साफ़ निर्भीक बोलने वाला मैंने आज तक नहीं देखा। सन् १९१३ ई० में मैंने आपका पहला व्याख्यान शाहजहाँपुर में सुना था। आर्य-समाज के वार्षिकोत्सव पर आप पधारे थे। उस समय आप बरेली में निवास करते थे। आपका शरीर बहुत ही कृश था, क्योंकि आपको एक अजीब रोग हो गया था। आप जब शौच जाते थे तब आपके खून गिरता था। कभी दो छटाँक, कभी चार छटाँक और कभी कभी तो एक सेर तक खून गिर जाता था। बवासीर आपको नहीं थी। ऐसा कहते थे कि किसी प्रकार योग की क्रिया बिगड़ जाने से पेट की आँत में कुछ विकार उत्पन्न हो गया। आँत सड़ गई। पेट चिरवाकर आँत कटवानी पड़ी और तभी से यह रोग हो गया था। बड़े बड़े वैद्य डाक्टरों की औषधि की किन्तु कुछ लाभ न हुआ। इतने कमज़ोर होने पर भी जब व्याख्यान देते तब इतने ज़ोर से बोलते कि तीन चार फरलाँग से आपका व्याख्यान साफ़ सुनाई देता था। दो तीन वर्ष तक आपको हर साल आर्य-समाज

२६

के वार्षिकोत्सव पर बुलाया जाता। सन् १९१५ ई० में कतिपय सज्जनों की प्रार्थना पर आप आर्य-समाज मन्दिर शाहजहाँपुर मे ही निवास करने लगे। इसी समय से मैंने आपकी सेवा-सुश्रूषा में समय व्यतीत करना आरम्भ कर दिया।

स्वामी जी मुझे धार्मिक तथा राजनैतिक उपदेश देते थे और इस प्रकार की पुस्तकें पढ़ने का भी आदेश करते थे। राजनीति में भी आपका ज्ञान उच्च कोटि का था। लाला हरदयाल से आपसे बहुत परामर्श होता था। एक बार महात्मा मुन्शीराम जी (स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी) को आपने पुलिस के प्रकोप से बचाया। आचार्य रामदेव जी तथा श्रीयुत कृष्ण जी से आपका बड़ा स्नेह था। राजनीति में आप मुझसे अधिक खुलते न थे। आप मुझसे बहुधा कहा करते थे कि एन्ट्रेन्स पास कर लेने के बाद यूरोप यात्रा अवश्य करना। इटली जाकर महात्मा मेज़िनी की जन्मभूमि के दर्शन अवश्य करना। सन् १९१६ ई० में लाहौर षड्यन्त्र का मामला चला। मै समाचार-पत्रों में उसका सब वृत्तान्त बड़े चाव से पढा करता था। श्रीयुत भाई परमानन्द जी में मेरी बडी श्रद्धा थी, क्योकि उनकी लिखी हुई 'तवारीख हिन्द' पढ़कर मेरे हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ा था। लाहौर षड्यन्त्र का फैसला अखबारों मे छपा। भाई परमानन्द जी को फांसी की सजा पढ़कर मेरे शरीर में आग लग गई। मैंने विचारा कि अंग्रेज बड़े अत्याचारी हैं, इनके राज्य मे न्याय नही, जो इतने बड़े महानुभाव को फांसी की सज़ा का हुक्म दे दिया। मैंने प्रतिज्ञा की कि इसका बदला अवश्य लूंगा। जीवन भर अंग्रेजी राज्य को विध्वंस करने का प्रयत्न करता रहूँगा। इस प्रकार की प्रतिज्ञा कर चुकने के पश्चात् मैं स्वामी जी के पास आया।

समाचार सुनाये और अखबार दिया। अखबार पढ़कर स्वामी जी भी बड़े दुखित हुए। तब मैंने अपनी प्रतिज्ञा के सम्बन्ध में कहा। स्वामी जी कहने लगे कि प्रतिज्ञा करना सहल है, किन्तु उस पर दृढ़ रहना कठिन है। मैंने स्वामी जी को प्रणाम कर उत्तर दिया कि यदि श्रीचरणों की कृपा बनी रहेगी तो प्रतिज्ञा पूर्ति में किसी प्रकार की त्रुटि न करूँगा। उस दिन से स्वामी जी कुछ-कुछ खुले। वे बहुत-सी बातें बताया करते थे। उसी दिन से मेरे क्रान्तिकारी जीवन का सूत्रपात हुआ। यद्यपि आप आर्य-समाज के सिद्धान्तों को सर्वप्रकारेण मानते थे किन्तु परमहंस रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ तथा महात्मा कबीरदास के उपदेशों का वर्णन प्रायः किया करते थे।

धार्मिक तथा आत्मिक जीवन में जो दृढ़ता मुझमें उत्पन्न हुई, वह स्वामी जी महाराज के सदुपदेशों का ही परिणाम है। आपकी दया से ही मैं ब्रह्मचर्य पालन में सफल हुआ। आपने मेरे भविष्य जीवन के सम्बन्ध में जो जो बातें कहीं थीं, वे अक्षरशः सत्य हुईं। आप कहा करते थे कि दुख है कि यह शरीर न रहेगा और तेरे जीवन में बड़ी विचित्र विचित्र समस्यायें आयेंगी, जिनको सुलझाने वाला कोई न मिलेगा। यदि यह शरीर नष्ट न हुआ, जो असम्भव है, तो तेरा जीवन भी संसार में एक आदर्श जीवन होगा। मेरा दुर्भाग्य था कि जब आपके अन्तिम दिन बहुत निकट आ गये, तब आपने मुझे योगाभ्यास सम्बन्धी कुछ क्रियाएँ बताने की इच्छा प्रकट की, किन्तु आप इतने दुर्बल हो गए थे कि ज़रा-सा परिश्रम करने या दस बीस कदम चलने पर ही आपको बेहोशी आ जाती थी! आप फिर कभी इसी योग्य न हो सके कि कुछ देर बैठकर कुछ

क्रियायें मुझे बता सकते। आपने कहा था, मेरा योग भ्रष्ट हो गया। प्रयत्न करूँगा, मरण समय पास रहना, मुझसे पूछ लेना कि मै कहाँ जन्म लूंगा। सम्भव है कि मैं बता सकूं। नित्य-प्रति सेर आध सेर खून गिर जाने पर भी आप कभी भी क्षुब्ध न होते थे। आपकी आवाज़ भी कभी कमजोर न हुई। जैसे अद्वितीय आप वक्ता थे, वैसे ही आप लेखक भी थे। आपके कुछ लेख तथा पुस्तकें आपके एक भक्त के पास थी, जो यों ही नष्ट हो गईं! कुछ लेख तथा पुस्तकें श्री स्वामी अनुभवानन्द जी शान्त ले गये थे। कुछ लेख आपने प्रकाशित भी कराये थे। लगभग ४८ वर्ष की उम्र मे आपने इहलोक त्याग किया। इस स्थान पर मैं महात्मा कबीरदास के कुछ अमृत वचनो का उल्लेख करता हूँ, जो मुझे बड़े प्रिय तथा शिक्षाप्रद मालूम हुए—

'कबिरा' शरीर सराय है भाड़ा देके बस।
जब भठियारी खुश रहै तब जीवन का रस॥१॥
'कबिरा' क्षुधा है कूकरी करत भजन में भंग।
याको टुकरा डारि कें सुमिरन करो निशंक॥२॥
नींद निसानी मौत की उठ 'कबीरा' जाग।
और रसायन त्याग के नाम रसायन चाख॥३॥
चलना है रहना नहीं चलना बिसवें बीस।
'कबिरा' ऐसे सुहाग पर कौन बँधावे सीस॥४॥
अपने अपने चोर को सब कोई डारे मारि।
मेरा चोर जो मोहि मिले सर्वस डारूँ वारि॥५॥
कहे सुने की है नहीं देखा देखी बात।
दुल्हा दुल्हिन मिलि गये सूनी परी बरात॥६॥

ते है,

को ग्रन्थ उपम
पता:-हिन्दी

नैनन की करि कोठरी पुतरी पलंग बिछाय।
पलकन की चिक डारि कें पीतम लेहु रिझाय ॥७॥

प्रेम पियाला जो पिये सीस दच्छिना देय।
लोभी सीस न दे सके, नाम प्रेम का लेय ॥८॥

सीस उतारे भुंइ धरै, तापे राखै पांव।
दास 'कबिरा' यूं कहै ऐसा होय तो आव ॥९॥

निन्दक नियरे राखिये आंगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना उज्ज्वल करे सुभाय ॥१०॥

## ब्रह्मचर्य व्रत पालन

वर्तमान समय में इस देश की कुछ ऐसी दुर्दशा हो रही है कि जितने धनी तथा गण्य-मान्य व्यक्ति हैं उनमें ९९ प्रतिशत ऐसे हैं जो अपनी सन्तान रूपी अमूल्य धन-राशि को अपने नौकर तथा नौकरानियों के हाथ में सौंप देते हैं। उनकी जैसी इच्छा हो, वे उन्हें बनावें! मध्यम श्रेणी के व्यक्ति भी अपने व्यवसाय तथा नौकरी इत्यादि में फँसे रहने के कारण सन्तान की ओर अधिक ध्यान नहीं दे सकते। सस्ता काम चलाऊ नौकर या नौकरानी रखते हैं और उन्हीं पर बाल-बच्चों का भार सौंप देते हैं, ये नौकर बच्चों को नष्ट करते हैं। यदि कुछ भगवान की दया हो गई, और बच्चे नौकर नौकरानियों के हाथ से बच गये तो मुहल्ले की गंदगी से बचना बड़ा कठिन है। बाकी रहे सहे स्कूल में पहुँचकर पारंगत हो जाते हैं। कालेज पहुँचते पहुँचते आजकल के नवयुवकों के सोलहों संस्कार हो जाते हैं। कालेज में पहुँचकर ये लोग समाचार पत्रों में दिये हुए औषधियों के विज्ञापन देख देख कर दवाइयों को मँगा मँगा कर धन ... आरम्भ करते हैं। ९८ प्रतिशत की आँखें खराब हो

जाती हैं। कुछ को शारीरिक दुर्बलता तथा कुछ को फैशन के विचार से ऐनक लगाने की बुरी आदत पड़ जाती है। सौन्दर्योपासना तो उनकी रग रग में कूट कूट कर भर जाती है। शायद ही कोई विद्यार्थी ऐसा हो जिसकी प्रेम-कथायें प्रचलित न हों। ऐसी अजीव अजीव बातें सुनने में आती हैं कि जिनका उल्लेख करने से भी ग्लानि होती है। यदि कोई विद्यार्थी सच्चरित्र वनने का प्रयत्न भी करता है और स्कूल या कालेज जीवन में उसे कुछ अच्छी शिक्षा भी मिल जाती है, तो परिस्थितियाँ, जिनमें उसे निर्वाह करना पड़ता है, उसे सुधरने नहीं देतीं। वे विचारते हैं कि थोड़ा-सा इस जीवन का आनन्द ले लें, यदि कुछ खरावी पैदा हो गई तो दवाई खाकर या पौष्टिक पदार्थों का सेवन करके दूर कर लेंगे। यह उनकी बड़ी भारी भूल है। अंग्रेज़ी की कहावत है "Only for once and for ever" तात्पर्य यह है कि यदि एक समय कोई बात पैदा हुई, मानो सदा के लिए रास्ता खुल गया। दवाइयाँ कोई लाभ नहीं पहुँचाती। अण्डों का जूस, मछली के तेल, मांस आदि पदार्थ भी व्यर्थ सिद्ध होते हैं। सबसे आवश्यक बात चरित्र सुधारना ही होती है। विद्यार्थियों तथा उनसे अध्यापकों को उचित है कि वे देश की दुर्दशा पर दया करके अपने चरित्र को सुधारने का प्रयत्न करें। संसार में ब्रह्मचर्य ही सारी शक्तियों का मूल है। बिना ब्रह्मचर्य व्रत पालन किये मनुष्य जीवन नितान्त शुष्क तथा नीरस प्रतीत होता है। विद्या बल तथा बुद्धि सब ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही प्राप्त होते हैं। संसार में जितने बड़े आदमी हुए हैं, उनमें से अधिकतर ब्रह्मचर्य व्रत के प्रताप से ही बड़े बने और सैकड़ों हज़ारों वर्ष बाद भी उनका यश गान करके मनुष्य अपने आपको कृतार्थ करते हैं। ब्रह्मचर्य की महिमा यदि जानना

तो परशुराम, राम, लक्ष्मण, कृष्ण, भीष्म, ईसा, मेज़िनी, बंदा, रामकृष्ण, दयानन्द तथा राममूर्ति की जीवनियों का अध्ययन करो।

जिन विद्यार्थियों को बाल्यवस्था में किसी कुटेव की वान पड़ जाती है, या जो बुरी संगत में पड़कर अपना आचरण बिगाड़ लेते हैं और फिर अच्छी शिक्षा पाने पर आचरण सुधारने का प्रयत्न करते हैं, परन्तु सफल मनोरथ नहीं होते, उन्हें भी निराश न होना चाहिए। मनुष्य जीवन अभ्यासों का एक समूह है। मनुष्य के मन में भिन्न-भिन्न प्रकार के अनेक विचार तथा भाव उत्पन्न होते रहते हैं। उनमें से जो उसे रुचिकर होते हैं, वे प्रथम कार्य रूप में परिणत होते हैं। क्रिया के बार बार होने से उसमें से ऐच्छिक भाव निकल जाता है और उसमें तात्कालिक प्रेरणा उत्पन्न हो जाती है। इन तात्कालिक प्रेरक क्रियाओं को, जो पुनरावृत्ति का फल हैं, 'अभ्यास' कहते हैं। मानवी चरित्र इन्हीं अभ्यासों द्वारा बनता है। अभ्यास से तात्पर्य आदत, स्वभाव, वान है। अभ्यास अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के होते हैं। यदि हमारे मन में निरन्तर अच्छे विचार उत्पन्न हों, तो उनका फल अच्छे अभ्यास होंगे, और यदि मन बुरे विचारों में लिप्त रहे, तो निश्चयरूपेण अभ्यास बुरे होंगे। मन इच्छाओं का केन्द्र है। उन्हीं की पूर्ति के लिए मनुष्य को प्रयत्न करना पड़ता है। अभ्यासों के बनने में पैतृक संस्कार, अर्थात माता-पिता के अभ्यासों के अनुसार अनुकरण ही बच्चों के अभ्यास का सहायक होता है। दूसरे, जैसी परिस्थितियों में निवास होता है, वैसे ही अभ्यास भी पड़ते हैं। तीसरे, प्रयत्न से भी अभ्यासों का निर्माण होता है। यह शक्ति इतनी प्रबल हो सकती है कि इसके द्वारा मनुष्य पैतृक संस्कार तथा परिस्थितियों को भी जीत सकता है। हमारे

दिन भोजन भली-भाँति नहीं पचता, उसी दिन विकार हो जाता है, या मानसिक भावनाओं की अशुद्धता से निद्रा ठीक न आकर स्वप्नावस्था में वीर्यपात हो जाता है। रात्रि के समय साढ़े दस बजे तक पठन-पाठन करे, पुन: सो जावे। सोना सदैव खुली हवा में चाहिए। बहुत मुलायम चिकने बिस्तर पर न सोवे। जहाँ तक हो सके, लकड़ी के तख्त पर कम्बल या गाढे की चद्दर बिछाकर सोवे। अधिक पाठ करना हो तो साढे नौ या दस बजे सो जावे। प्रातःकाल ३½ या ४ बजे उठकर कुल्ला करके शीतल जल पान करे और शौच से निवृत्त हो पठन-पाठन करे। सूर्योदय के निकट फिर नित्य की भाँति व्यायाम या भ्रमण करे। सब व्यायामों में दण्ड बैठक सर्वोत्तम है। जहाँ जी चाहा, व्यायाम कर लिया। यदि हो सके तो प्रोफेसर राममूर्ति की विधि से दण्ड तथा बैठक करे। प्रोफेसर साहब की रीति विद्यार्थियो के लिए बड़ी लाभदायक है। थोड़े समय में ही पर्याप्त परिश्रम हो जाता है। दण्ड बैठक के अलावा शीर्षासन और पद्मासन का भी अभ्यास करना चाहिए और अपने कमरे में वीरों और महात्माओं के चित्र रखने चाहिए।

विद्यार्थी प्रातःकाल सूर्य उदय होने से एक घण्टा पहले शैया त्याग कर शौचादि से निवृत्त हो व्यायाम करे, या वायु-सेवनार्थ बाहर मैदान में जावे। सूर्य उदय होने के पाँच दस मिनट पूर्व स्नान से निवृत्त होकर यथा विश्वास परमात्मा का ध्यान करे। सदैव कुए के ताज़े जल से स्नान करे। यदि कुए का जल प्राप्त न हो तो जाड़ों में जल को थोड़ा-सा गुनगुना करले और गर्मियों में शीतल जल से स्नान करे। स्नान करने के पश्चात् एक खुरखुरे तौलिया या अंगोछे से शरीर खूब मले। उपासना के पश्चात् थोड़ा-सा जल-पान करे। कोई फल, शुष्क मेवा दुग्ध अथवा सबसे उत्तम यह है कि गेहूँ का दलिया रंधवा कर यथा रुचि मीठा या नमक डालकर खावे। फिर अध्ययन करे और दस बजे से ग्यारह बजे के मध्य में भोजन कर लेवे। भोजनों में माँस, मछली, चरपरे, खट्टे, गरिष्ट, बासी, तथा उत्तेजक पदार्थों का त्याग करे। प्याज, लहसुन, लाल मिर्च, आम की खटाई और अधिक मसालेदार भोजन कभी न खावे। सात्विक भोजन करे। शुष्क भोजनों का भी त्याग करे। जहाँ तक हो सके सब्जी अर्थात् साग अधिक खावे। भोजन खूब चबा चबा कर करे। अधिक गरम या अधिक ठंठा भोजन भी वर्जित है। स्कूल अथवा कालेज से आकर थोड़ा-सा आराम करके एक घण्टा लिखने का काम करके खेलने के लिए जावे। मैदान में थोड़ा-सा घूमे भी। घूमने के लिए चौक बाज़ार की गन्दी हवा में जाना ठीक नहीं। स्वच्छ वायु का सेवन करे। संध्या समय भी शौच अवश्य जावे। थोड़ा-सा ध्यान करके हल्का-सा भोजन कर ले। यदि हो सके तो रात्रि के समय केवल दुग्ध पीने का अभ्यास डाले या फल खा लिया करे। स्वप्न दोषादिक व्याधियाँ केवल पेट के भारी होने से ही होती हैं। जिस

दिन भोजन भली-भाँति नहीं पचता, उसी दिन विकार हो जाता है, या मानसिक भावनाओं की अशुद्धता से निद्रा ठीक न आकर स्वप्नावस्था में वीर्यपात हो जाता है। रात्रि के समय साढ़े दस बजे तक पठन-पाठन करे, पुनः सो जावे। सोना सदैव खुली हवा में चाहिए। बहुत मुलायम चिकने बिस्तर पर न सोवे। जहाँ तक हो सके, लकड़ी के तख्त पर कम्बल या गाढ़े की चद्दर बिछाकर सोवे। अधिक पाठ करना हो तो साढ़े नौ या दस बजे सो जावे। प्रातःकाल ३½ या ४ बजे उठकर कुल्ला करके शीतल जल पान करे और शौच से निवृत्त हो पठन-पाठन करे। सूर्योदय के निकट फिर नित्य की भाँति व्यायाम या भ्रमण करे। सब व्यायामों में दण्ड बैठक सर्वोत्तम है। जहाँ जी चाहा, व्यायाम कर लिया। यदि हो सके तो प्रोफेसर राममूर्ति की विधि से दण्ड तथा बैठक करे। प्रोफेसर साहब की रीति विद्यार्थियों के लिए बड़ी लाभदायक है। थोड़े समय में ही पर्याप्त परिश्रम हो जाता है। दण्ड बैठक के अलावा शीर्षासन और पद्मासन का भी अभ्यास करना चाहिए और अपने कमरे में वीरों और महात्माओं के चित्र रखने चाहिए।

द्वितीय खण्ड

## स्वदेश-प्रेम

पूज्यपाद श्री स्वामी सोमदेव का देहान्त हो जाने के पश्चात् जब से अँग्रेज़ी के नवें दर्जे में आया, कुछ स्वदेश सम्बन्धी पुस्तकों का अवलोकन आरम्भ हुआ। शाहजहाँपुर में सेवा-समिति की नींव पं० श्रीराम वाजपेयी जी ने डाली, उस में भी बड़े उत्साह से कार्य किया। दूसरों की सेवा का भाव हृदय में उदय हुआ। कुछ समझ में आने लगा कि वास्तव में देशवासी बड़े दुःखी हैं। उसी वर्ष मेरे पड़ोसी तथा मित्र जिनसे मेरा स्नेह अधिक था, एन्ट्रेन्स की परीक्षा पास करके कालेज में शिक्षा पाने को चले गये। कालेज के स्वतन्त्र वायु में उनके हृदय में भी स्वदेश के भाव उत्पन्न हुए। उसी साल लखनऊ में अखिल भारतवर्षीय काँग्रेस का उत्सव हुआ। मैं भी उसमें सम्मिलित हुआ। कतिपय सज्जनों से भेंट हुई। देश-दशा का कुछ अनुमान हुआ, और निश्चय हुआ कि देश के लिए कोई विशेष कार्य किया जावे। देश में जो कुछ हो रहा है उसकी उत्तरदायी सरकार ही है। भारतवासियों के दुख तथ [illegible] ज़िम्मे गवर्मेन्ट पर ही है, अतएव सरकार को [illegible] चाहिए। मैंने भी इस प्रकार के [illegible] में [illegible] तिलक के पधारने की [illegible]

के अधिक व्यक्ति आये हुए थे। कांग्रेस के सभापति का स्वागत बड़ी
धूमधाम से हुआ था। उनके दूसरे दिन लोकमान्य बाल गंगाधर
तिलक की स्पेशल गाड़ी आने का समाचार मिला। लखनऊ स्टेशन
पर बहुत बड़ा जमाव था। स्वागत कारिणी समिति के सदस्यों से
मालूम हुआ कि लोकमान्य का स्वागत केवल स्टेशन पर ही किया
जायगा, और शहर में सवारी न निकाली जायगी। जिसका कारण
यह था कि स्वागत कारिणी समिति के प्रधान प० जगत नारायण
जी थे। अन्य गण्यमान सदस्यों में प० गोकरणनाथ जी तथा अन्य
उदार दल वालों (माडरेटो) की संख्या अधिक थी। माडरेटो को
भय था कि यदि लोकमान्य की सवारी शहर में निकाली गई, तो
कांग्रेस के प्रधान से भी अधिक सम्मान होगा, जिसे वे उचित न
समझते थे। अत. उन सबने प्रबन्ध किया कि जैसे ही लोकमान्य
पधारें, उन्हें मोटर में बिठाकर शहर के बाहर-बाहर निकाल ले
जावें। इन सब बातों को सुनकर नवयुवकों को बड़ा खेद हुआ।
कालेज के एक एम० ए० के विद्यार्थी ने इस प्रबन्ध का विरोध करते
हुए कहा कि लोकमान्य का स्वागत अवश्य होना चाहिए। मैंने भी
इस विद्यार्थी के कथन में सहयोग दिया। इसी प्रकार कई नवयुवकों
ने निश्चय किया कि, जैसे ही लोकमान्य स्पेशल से उतरें उन्हें घेर
कर गाड़ी में बिठा लिया जाय, और सवारी निकाली जाय। स्पेशल
आने पर लोकमान्य सबसे पहले उतरे। स्वागत कारिणी के सदस्यों
ने कांग्रेस के स्वयं-सेवकों का घेरा बनाकर लोकमान्य को मोटर मे
जा बिठाया। मैं तथा एक एम० ए० का विद्यार्थी मोटर के आगे लेट
गये। सब कुछ समझाया गया, मगर किसी की एक न सुनी।
लोगों की देखा-देखी और कई नवयुवक भी मोटर के सामने

·सा हृदय-
जती है। बकासू

ड्रम

बैठ गये । उस समय मेरे उत्साह का यह हाल था कि मुँह से बात न निकलती थी, केवल रोता था और कहता था, 'मोटर मेरे ऊपर से निकाल ले जाओ ।' स्वागत कारिणी के सदस्यों से काँग्रेस के प्रधान को ले जानें वाली गाड़ी माँगी, उन्होंने देना स्वीकार न किया । एक नवयुवक ने मोटर का टायर काट दिया । लोकमान्य जी बहुत कुछ समझाते किन्तु वहाँ सुनता कौन ? एक किराये की गाड़ी से घोड़े खोलकर लोकमान्य के पैरों पर शिर रख आपको उसमें बिठाया, और सबने मिलकर हाथों से गाड़ी खींचना शुरू की । इस प्रकार लोकमान्य का इस धूमधाम से स्वागत हुआ कि किसी नेता की उतने ज़ोरों से सवारी न निकाली गई । लोगों के उत्साह का यह हाल था कि कहते थे कि एक बार गाड़ी में हाथ लगा लेने दो, जीवन सफल हो जाय । लोकमान्य पर फूलों की जो वर्षा की जाती थी, उसमें से जो फूल नीचे गिर जाते थे उसे उठाकर लोग पल्ले में बाँध लेते थे ! जिस स्थान पर लोकमान्य के पैर पड़ते, वहाँ की धूल सबके मत्थों पर दिखाई देती । कोई उस धूल को भी अपने रूमाल में बाँध लेते थे । इस स्वागत से माडरेटों की बड़ी भद्द हुई ।

## क्रान्तिकारी आन्दोलन

काँग्रेस के अवसर पर, लखनऊ में ही मालूम हुआ कि एक गुप्त समिति है, जिसका मुख्य उद्देश्य क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेना है । यहीं से क्रान्तिकारी गुप्त समिति की चर्चा सुनकर कुछ समय बाद मैं भी क्रान्तिकारी समिति के कार्य में योग देने लगा । अपने एक मित्र द्वारा क्रान्तिकारी समिति का सदस्य हो गया । थोड़े ही दिन में मैं कार्यकारिणी का सदस्य बना लिया गया ।

समिति में धन की बहुत कमी थी, उधर हथियारों की भी जरूरत थी। जब घर वापस आया, तब विचार हुआ कि एक पुस्तक प्रकाशित की जाय और उसमें जो लाभ हो उससे हथियार खरीदें जावें। पुस्तक प्रकाशित कराने के लिए धन कहाँ से आवे? विचार करते करते मुझे एक चाल सूझी। मैंने अपनी माता जी से कहा कि मैं कुछ रोजगार करना चाहता हूँ उसमें अच्छा लाभ होगा। यदि रुपये दे सकें तो बड़ा अच्छा हो। उन्होंने २००) दिये। 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' नामक पुस्तक लिखी जा चुकी थी। प्रकाशित होने का प्रबन्ध हो गया। थोड़े रुपये की जरूरत और पड़ी, मैंने माता जी से २००) और लिये। पुस्तक की बिक्री हो जाने पर माता जी के रुपये पहले चुका दिये। लगभग २००) और भी बचे। पुस्तकें अभी बिकने के लिए बहुत बाकी थी। उसी समय 'देशवासियों के नाम सन्देश' नामक एक पर्चा छपवाया गया, क्योंकि पं० गेंदालाल जी, ब्रह्मचारी जी के दल सहित ग्वालियर में गिरफ्तार हो गये थे। अब सब विद्यार्थियों ने अधिक उत्साह के साथ काम करने की प्रतिज्ञा की। पर्चे कई जिलों मे लगाये गए, और बाँटे भी गए। पर्चे तथा 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' दोनों संयुक्त प्रान्त की सरकार ने ज़ब्त कर लिये।

## हथियारों की खरीद

अधिकतर लोगों का विचार है कि देशी राज्यों में हथियार (रिवाल्वर, पिस्तौल, तथा राइफ़लें इत्यादि) सब कोई रखता है, और बन्दूक इत्यादि पर लाइसेन्स नहीं होता। अतएव इस प्रकार के अस्त्र बड़ी सुगमता से प्राप्त हो सकते हैं। देशी राज्यों में

...ाहित्य-मंडल व हिन्दी का अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां [illegible]
है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:–हिन्दी साहित्य मंदिर अजमे...

हथियारों पर कोई लाइसेन्स नहीं, यह वात बिल्कुल ठीक है, और हर एक को बन्दूक इत्यादि रखने की आज़ादी भी है। किन्तु कारतूसी हथियार बहुत कम लोगों के पास रहते हैं, जिसका कारण यह है कि कारतूस या विलायती बारूद खरीदने पर पुलिस में सूचना देनी होती है। राज्य में तो कोई ऐसी दूकान नहीं होती, जिस पर कारतूस या कारतूसी हथियार मिल सकें। यहाँ तक कि विलायती बारूद और बन्दूक की टोपी भी नहीं मिलती, क्योंकि ये सब चीज़े बाहर से मँगानी पड़ती हैं। जितनी चीज़ें इस प्रकार की बाहर से मँगाई जाती हैं, उनके लिए रेज़िडेन्ट (गवर्नमेण्ट का प्रतिनिधि जो रियासतों में रहता है) की आज्ञा लेनी पड़ती है। बिना रेज़िडेण्ट की मंजूरी के हथियारों सम्बन्धी कोई चीज़ बाहर से रियासत में नहीं आ सकती। इस कारण इस खटखट से बचने के लिए रियासत में ही टोपीदार बन्दूकें बनती हैं, और देशी बारूद भी वहीं के लोग शोरा, गन्धक तथा कोयला मिलाकर बना लेते हैं। बन्दूक की टोपी चुरा छिपाकर मँगा लेते हैं। नहीं तो टोपी के स्थान पर भी मनसल और पुटास अलग अलग पीसकर दोनों को मिलाकर उसी से काम चलाते हैं। हथियार रखने की आज़ादी होने पर भी ग्रामों में किसी एक-दो धनी या जमींदार के यहाँ टोपीदार बन्दूक या टोपीदार छोटे पिस्तौल होते हैं, जिनमें ये लोग रियासत की बनी हुई बारूद काम में लाते हैं। यह बारूद बरसात में सील खा जाती है और काम नहीं देती। एक बार मैं अकेला रिवाल्वर खरीदने गया। उस समय समझता था कि हथियारों की दूकान होगी, सीधे जाकर दाम देंगे और रिवाल्वर लेकर चले आवेंगे। प्रत्येक दूकान देखी, कहीं किसी पर बन्दूक इत्यादि का विज्ञापन या कोई दूसरा निशान न पाया।

फिर एक ताँगे पर सवार होकर सब शहर घूमा। ताँगे वाले ने पूछा कि क्या चाहिए। मैंने उससे डरते डरते अपना उद्देश्य कहा। उसी ने दो तीन दिन घूम फिर कर एक टोपीदार रिवाल्वर खरिदवा दिया और देशी बनी हुई बारूद एक दूकान से दिला दी। मैं कुछ जानता तो था नही, एकदम दो सेर बारूद खरीदी। जो घर पर सन्दूक में रखे रखे बरसात में सील खाकर पानी हो गई। मुझे बड़ा दुःख हुआ। दूसरी बार जब मै क्रान्तिकारी समिति का सदस्य हो चुका था, तब दूसरे सहयोगियो की सम्मति से दो सौ रुपया लेकर हथियार खरीदने गया। इस बार मैंने बहुत प्रयत्न किया तो एक कबाडी की सी दूकान पर कुछ तलवारें, खजर, कटार तथा दो चार टोपीदार बन्दूकें रक्खी देखी। मैंने बड़ा साहस करके उससे पूछा कि क्या आप ये चीजें बेचते हैं, उसने जब हाँ मे उत्तर दिया तो मैंने दो-चार चीजें देखी। दाम पूछे। इसी प्रकार वार्तालाप करके पूछा कि क्या आप कारतूसी हथियार नही बेचते या और कही नहीं बिकते ? तब उसने सब विवरण सुनाया। उस समय उसके पास टोपीदार एक नली के छोटे छोटे दो पिस्तौल थे। मैंने वे दोनों खरीद लिए। एक कटार भी खरीदी। उसने वादा किया कि यदि आप फिर आवें तो कुछ कारतूसी हथियार जुटाने का प्रयत्न किया जावे। लालच बुरी बला है, इस कहावत के अनुसार तथा इसलिए भी कि हम लोगों को कोई दूसरा ऐसा ज़रिया भी न था, जहाँ से हथियार मिल सकते, मैं कुछ दिनों बाद फिर गया। इस समय उसी ने एक बड़ा सुन्दर कारतूसी रिवाल्वर दिया। कुछ पुराने कारतूस दिये। रिवाल्वर था तो पुराना, किन्तु बड़ा ही उत्तम था। दाम उसके नये के बराबर देने पड़े। अब उसे विश्वास हो गया--

[illegible]

कि यह हथियारों के खरीदार हैं। उसने प्राणपण से चेष्टा की और कई रिवाल्वर तथा दो तीन राइफलें जुटाईं। उसे भी अच्छा लाभ हो जाता था। प्रत्येक वस्तु पर वह बीस तीस रुपये मुनाफा ले लेता था। बाज़ बाज़ चीज़ पर दूना नफा खा लेता था। इसके बाद हमारी संस्था के दो तीन सदस्य मिलकर गये। दूकानदार ने भी हमारी उत्कट इच्छा को देखकर इधर-उधर से पुराने हथियारों को खरीद करके, उनकी मरम्मत की, और नया सा करके हमारे हाथ बेचना शुरू किया। खूब ठगा। हम लोग कुछ जानते थे नहीं। इस प्रकार अभ्यास करने से कुछ नया पुराना समझने लगे। एक दूसरे सिक्लीगर से भेंट हुई। वह स्वयं कुछ नहीं जानता था, किन्तु उसने वचन दिया कि वह कुछ रईसों से हमारी भेंट करा देगा। उसने एक रईस से मुलाकात कराई जिनके पास एक रिवाल्वर था। रिवाल्वर खरीदने की हमने इच्छा प्रकट की। उन महाशय ने उस रिवाल्वर के डेढ़ सौ रुपये माँगे। रिवाल्वर नया था। बड़े कहने-सुनने पर सौ कारतूस उन्होंने दिये और १५५) लिये। १५०) उन्होंने स्वयं लिए ५) सिक्लीगर को कमीशन के तौर पर देने पड़े। रिवाल्वर चमकता हुआ नया था, समझे अधिक दामों का होगा। खरीद लिया। विचार हुआ कि इस प्रकार ठगे जाने से काम न चलेगा। किसी प्रकार कुछ जानने का प्रयत्न किया जावे। बड़ी कोशिश के बाद कलकत्ता, बम्बई से बन्दूक विक्रेताओं की लिस्टें मँगा कर देखीं, देखकर आँखें खुल गईं। जितने रिवाल्वर या बन्दूकें हमने खरीदी थीं, एक को छोड़ सबके दुगने दाम दिये थे। १५५) के रिवाल्वर के दाम केवल ३०) ही थे और १०) के सौ कारतूस, इस प्रकार कुल सामान ४०) का था, जिसके बदले १५५) देने पड़े! बड़ा खेद हुआ! करें तो क्या करें, और कोई दूसरा ज़रिया भी तो न था।

कुछ समय पश्चात् कारखानों की लिस्टें लेकर तीन चार सदस्य मिलकर गये। खूब जाँच तथा खोज की। किसी प्रकार रियासत की पुलिस को पता चल गया। एक खुफिया पुलिस वाला मुझे मिला, उसने कई हथियार दिलाने का वादा किया, और वह मुझे पुलिस इन्स्पेक्टर के घर ले गया। दैवात् उस समय पुलिस इन्स्पेक्टर घर पर मौजूद न थे। उनके द्वार पर एक पुलिस का सिपाही बैठा था, जिसे मैं भली भाँति जानता था। मुहल्ले में खुफ़िया पुलिस वाले की आँख बचाकर पूछा कि अमुक घर किस का है? मालूम हुआ पुलिस इन्स्पेक्टर का! मैं इतस्ततः करके जैसे-तैसे निकल आया, और अति शीघ्र अपने ठहरने का स्थान बदला। उस समय हम लोगों के पास दो राइफलें, चार रिवाल्वर तथा दो पिस्तौल खरीदे हुए मौजूद थे। किसी प्रकार उस खुफिया पुलिस वाले को एक कारीगर से जहाँ पर कि हम लोग अपने हथियारों की मरम्मत कराते थे, मालूम हुआ कि हम में से एक व्यक्ति उसी दिन जाने वाला था उसने चारों ओर स्टेशन पर तार दिलवाये। रेल गाड़ियों की तलाशी ली गई। पर पुलिस की असावधानी के कारण हम बाल बाल बच गये! रुपये की चपत बुरी होती है। एक पुलिस सुपरिटेण्डेण्ट के पास एक राइफ़ल थी। मालूम हुआ वे बेचते हैं। हम लोग पहुँचे। अपने आपको रियासत का रहने वाला बतलाया। उन्होंने निश्चय करने के लिए बहुत से प्रश्न पूछे, क्योंकि हम लोग लड़के तो थे ही। पुलिस सुपरिटेण्डेण्ट पेन्दानयापता जाति के मुसलमान थे। हमारी बातों पर उन्हें पूर्ण विश्वास न हुआ। कहा अपने थानेदार से लिखा लाओ कि वह तुम्हें जानता है। मैं गया। जिस स्थान का रहने वाला बताया था, वहाँ के थानेदार का नाम मालूम किया, और एक दो

हिन्दी साहित्य मंदिर

ज़मींदारों का नाम मालूम कर के एक पत्र लिखा कि मैं उस स्थान के रहने वाले अमुक ज़मींदार का पुत्र हूँ, और वे लोग मुझे भली भाँति जानते हैं। उसी पत्र पर ज़मींदारों के हिन्दी में और पुलिस के दारोगा के अंग्रेजी में हस्ताक्षर बना करके पत्र ले जाकर पुलिस कप्तान साहब को दिया। बड़े गौर से देखने के बाद वे बोले, मैं थाने में दर्याफ्त कर लूँ। तुम्हें भी थाने चलकर इत्तिला देनी होगी कि राइफ़ल खरीद रहे हैं। हम लोगों ने कहा कि हमने आपके इतमीनान के लिए इतनी मुसीबत झेली, दस बारह रुपये खर्च किये, अगर अब भी इतमीनान न हो तो मजबूरी है। हम पुलिस में न जावेंगे। राइफ़ल के दाम लिस्ट में १८०) लिखे थे, वह २५०) माँगते थे, साथ में दो सौ कारतूस भी दे रहे थे। कारतूस भरने का सामान भी देते थे, जो लगभग ५०) का होता। इस प्रकार पुरानी राइफ़ल के नई के सामान दाम माँगते थे। हम लोग भी २५०) देते थे। पुलिस कप्तान ने भी विचारा पूरे दाम मिल रहे हैं। स्वयं वृद्ध हो चुके थे। कोई पुत्र भी न था। अतएव २५०) लेकर राइफ़ल दे दी। पुलिस में कुछ पूछने न गये। उन्हीं दिनों राज्य के एक उच्च पदाधिकारी के नौकर को मिलाकर उनके यहाँ से रिवाल्वर चोरी कराया। जिसके दाम लिस्ट में ७५) थे, उसे १००) में खरीदा। एक माउज़र पिस्तौल भी चोरी कराया, जिसके दाम लिस्ट में उस समय २००) थे। हमें माउज़र पिस्तौल की प्राप्ति की बड़ी उत्कट इच्छा थी। बड़े भारी प्रयत्न के बाद यह माउज़र पिस्तौल मिला, जिसका मूल्य ३००) देना पड़ा। कारतूस एक भी न मिला। हमारे पुराने मित्र कबाड़ी महोदय के पास माउज़र पिस्तौल के पचास कारतूस पड़े थे। उन्होंने बड़ा काम दिया। हममें से किसी

ने भी पहले माउज़र पिस्तौल देखा भी न था। कुछ न समझ सके कि कैसे प्रयोग किया जाता है। बड़े कठिन परिश्रम से उसका प्रयोग समझ में आया।

हमने तीन राइफलें, एक बारह बोर की दोनाली कारतूसी बन्दूक, दो टोपीदार बन्दूकें, तीन टोपीदार रिवाल्वर और पाँच कारतूसी रिवाल्वर खरीदे। प्रत्येक हथियार के साथ पचास या सौ कारतूस भी ले लिये। इन सब में लगभग चार हजार रुपये व्यय हुए। कुछ कटार तथा तलवारें इत्यादि भी खरीदी थी।

### मैनपुरी षड्यन्त्र

इधर तो हम लोग अपने कार्य में व्यस्त थे, उधर मैनपुरी के एक सदस्य पर लीडरी का भूत सवार हुआ। उन्होंने अपना पृथक संगठन किया। कुछ अस्त्र-शस्त्र भी एकत्रित किये। धन की कमी की पूर्ति के लिए एक सदस्य से कहा कि अपने किसी कुटुम्बी के यहाँ डाका डलवाओ। उस सदस्य ने कोई उत्तर न दिया। उसे आज्ञापत्र दिया गया और मार देने की धमकी दी गई। वह पुलिस के पास गया। मामला खुला। मैनपुरी में घर-पकड़ शुरू हो गई। हम लोगों को भी समाचार मिला। देहली में कांग्रेस होने वाली थी। विचार किया गया कि 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' नामक पुस्तक जो यू० पी० सरकार ने ज़ब्त कर ली थी, कांग्रेस के अवसर पर बेच दी जावे। कांग्रेस के उत्सव पर मैं शाहजहाँपुर की सेवा समिति के साथ अपनी ऐंबुलेन्स की टोली लेकर गया था। ऐंबुलेन्स वालों को प्रत्येक स्थान पर बिना रोक जाने की आज्ञा थी। कांग्रेस-पण्डाल के बाहर खुले रूप में नवयुवक यह कहकर पुस्तक बेच रहे थे यू०

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर [illegible]

पी० में ज़ब्त किताब 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली'। खुफ़िया पुलिस वालों ने काँग्रेस का कैम्प घेर लिया। सामने ही आर्य-समाज का कैम्प था। वहाँ पर पुस्तक विक्रेताओं की पुलिस ने तलाशी लेना आरम्भ कर दी। मैंने काँग्रेस कैम्प पर अपने स्वयंसेवक इसलिए छोड़ दिये कि वे बिना स्वागत कारिणी समिति के मन्त्री या प्रधान की आज्ञा पाये किसी पुलिस वाले को कैम्प में न घुसने दें। आर्य-समाज के कैम्प में गया। सब पुस्तकें एक टेण्ट में जमा थीं। मैंने अपने ओवर कोट में सब पुस्तकें लपेटीं, जो लगभग दो सौ के होंगी, और उसे कन्धे पर डालकर पुलिस वालों के सामने से निकला। मैं वर्दी पहने था, टोप लगाये हुए था। एम्बुलेन्स का बड़ा-सा लाल बिल्ला मेरे हाथ पर लगा हुआ था, किसी ने कोई सन्देह भी न किया और पुस्तकें बच गईं!

देहली काँग्रेस से लौटकर शाहजहाँपुर आये। वहाँ भी पकड़-धकड़ शुरू हुई। हम लोग वहाँ से चल कर दूसरे शहर के एक मकान में ठहरे हुए थे। रात्रि के समय मकान मालिक ने बाहर से मकान में ताला डाल दिया। ग्यारह बजे के लगभग हमारा एक साथी बाहर से आया। उसने बाहर से ताला पड़ा देख पुकारा। हम लोगों को भी सन्देह हुआ। सबके सब दीवार पर से उतर कर मकान छोड़कर चल दिये। अन्धेरी रात थी। थोड़ी दूर गये थे कि हठात् आवाज़ आई 'खड़े हो जाओ। कौन जाता है?' हम लोग सात-आठ आदमी थे। समझे कि घिर गये! कदम उठाना ही चाहते थे कि फिर आवाज़ आई 'खड़े हो जाओ नहीं तो गोली मारते हैं।' हम लोग खड़े हो गये। थोड़ देर में एक पुलिस के दारोगा बन्दूक हमारी तरफ किये हुए रिवाल्वर कन्धे में लटकाए कई

सिपाहियों को लिए हुए आ पहुँचे। पूछा—'कौन हो, कहाँ जाते हो ?' हम लोगों ने कहा—'विद्यार्थी हैं, स्टेशन जा रहे हैं।' 'कहाँ जाओगे ?' 'लखनऊ।' उस समय रात के दो बजे थे। लखनऊ का गाड़ी पाँच बजे जाती थी। दारोगा जी को शक हुआ। लालटेन आई। हम लोगों के चेहरे रोशनी में देखकर उनका शक जाता रहा। कहने लगे—"रात के समय लालटेन लेकर चला कीजिये। गलती हुई मुआफ़ कीजिये।" हम लोग भी सलाम झाड़ कर चलते बने। एक बाग में फूँस की मड़ैय्या पड़ी थी। उसमें जा बैठे। पानी बरसने लगा। मूसलाधार पानी गिरा। सब कपड़े भीग गये। ज़मीन पर भी पानी भर गया। जनवरी का महीना था। खूब जाड़ा पड़ रहा था। रात भर भींगते और ठिठुरते रहे। बड़ा कष्ट हुआ। प्रातःकाल धर्मशाला में जाकर कपड़े सुखाये। दूसरे दिन शाहजहाँपुर आकर, बन्दूकें ज़मीन में गाड़कर, प्रयाग पहुँचे।

## विश्वासघात

प्रयाग की एक धर्मशाला में दो तीन दिन निवास करके विचार किया गया कि एक व्यक्ति बहुत दुर्बलात्मा है, यदि वह पकड़ा गया तो सब भेद खुल जायगा, अतः उसे मार दिया जाय। मैंने कहा मनुष्य-हत्या ठीक नहीं। पर अन्त में निश्चय हुआ कि कल चला जाय और उसकी हत्या कर दी जाय। मैं चुप हो गया। हम लोग चार सदस्य साथ थे। हम चारो तीसरे पहर झूँसी का किला देखने गये। जब लौटे तब सन्ध्या हो चुकी थी। उसी समय गंगा पार करके यमुना तट पर गये। शौचादि से निवृत्त होकर मैं संध्या समय उपासना करने के लिए रेती पर बैठ गया। एक महाशय ने कहा—

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

"यमुना के निकट बैठो।" मैं तट से दूर तक ऊँचे स्थान पर बैठा था। मैं वहीं बैठा रहा। वे तीनों भी मेरे पास ही आकर बैठ गये। मैं आँखें बन्द किए ध्यान कर रहा था। थोड़ी देर में खट से आवाज़ हुई। समझा कि साथियों में से कोई कुछ कर रहा होगा। तुरन्त ही एक फायर हुआ। गोली सन से मेरे कान के पास से निकल गई! मैं समझ गया कि मेरे ऊपर ही फायर हुआ। मैं रिवाल्वर निकालता हुआ आगे को बढ़ा। पीछे फिर कर देखा, वह महाशय माउज़र हाथ में लिए मेरे ऊपर गोली चला रहे हैं! कुछ दिन पहले मुझसे उनका कुछ झगड़ा हो चुका था, किन्तु बाद में समझौता हो गया था। फिर भी उन्होंने यह कार्य किया! मैं भी सामना करने को प्रस्तुत हुआ। तीसरा फायर करके वे भाग खड़े हुए। उनके साथ प्रयाग में ठहरे हुए दो सदस्य और भी थे। वे तीनों भाग गये। मुझे देर इसलिए हुई कि मेरा रिवाल्वर चमड़े के खोल में रखा था। यदि आधा मिनट और उनमें कोई भी खड़ा रह जाता तो मेरी गोली का निशाना बन जाता! जब सब भाग गये, तब मैं गोली चलाना व्यर्थ जान, वहाँ से चला आया। मैं बाल-बाल बच गया। मुझ से दो गज़ के फासले पर से माउज़र पिस्तौल से गोलियाँ चलाई गईं और उस अवस्था में जब कि मैं बैठा हुआ था! मेरी समझ में नहीं आया कि मैं बच कैसे गया! पहला कारतूस फूटा नहीं। तीन फायर हुए। मैं गद्गद् होकर परमात्मा का स्मरण करने लगा। आनन्दोल्लास में मुझे मूर्छा आ गई। मेरे हाथ से रिवाल्वर तथा खोल दोनों गिर गये। यदि उस समय कोई निकट होता तो मुझे भली भाँति मार सकता था। मेरी यह अवस्था लगभग एक मिनट तक रही होगी कि मुझ से किसी ने कहा, 'उठ'। मैं उठा! रिवाल्वर

उठा लिया। गोल उठाने का स्मरण ही न रहा ! २१ जनवरी की घटना है। मैं केवल एक कोट और एक तहमद पहने था। बाल बढ़ रहे थे। नंगे सिर, पैर में जूता भी नहीं। ऐसी हालत में कहाँ जाऊँ ? अनेकों विचार उठ रहे थे।

इन्हीं विचारों में निमग्न यमुना तट पर बड़ी देर तक घूमता रहा। ध्यान आया कि धर्मशाला चलकर ताला तोड़ सामान निकालूँ। फिर सोचा कि धर्मशाला जाने से गोली चलेगी, व्यर्थ में खून होगा। अभी ठीक नहीं। अकेले बदला लेना उचित नहीं। और कुछ साथियों को लेकर फिर बदला लिया जायगा। मेरे एक साधारण मित्र प्रयाग में रहते थे। उनके पास जाकर बड़ी मुश्किल से एक चादर ली और रेल से लखनऊ आया। लखनऊ आकर बाल बनवाये। धोती जूता खरीदे, क्योंकि रुपये मेरे पास थे। रुपये न भी होते तो भी मैं सदैव जो चालीस-पचास रुपये की सोने की अँगूठी पहने रहता था, उसे काम में ला सकता था। वहाँ से आकर अन्य सदस्यों से मिलकर सब विवरण कह सुनाया। कुछ दिन जंगल में रहा। इच्छा थी कि संन्यासी हो जाऊँ। संसार कुछ नहीं। बाद को फिर माता जी के पास गया। उन्हें सब कह सुनाया। उन्होंने मुझे ग्वालियर जाने का आदेश किया। थोड़े दिनों में माता पिता सभी दादी जी के भाई के यहाँ आ गये। मैं भी वहाँ पहुँच गया।

मैं हर वक्त यही विचार किया करता कि मुझे बदला अवश्य लेना चाहिए। एक दिन प्रतिज्ञा करके रिवाल्वर लेकर शत्रु की हत्या करने की इच्छा से मैं गया भी, किन्तु सफलता न मिली। इसी प्रकार की उधेड़-बुन में मुझे ज्वर आने लगा। कई महीनों तक बीमार रहा। माता जी मेरे विचारों को समझ गईं। माता जी ने

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहाँ
...पत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य ...

बड़ी सान्त्वना दी। कहने लगीं कि, प्रतिज्ञा करो कि तुम अपनी हत्या की चेष्टा करने वालों को जान से न मारोगे। मैंने प्रतिज्ञा करने में आनाकानी की, तो वे कहने लगीं कि मैं मातृ-ऋण के बदले में प्रतिज्ञा कराती हूँ, क्या जवाब है ? मैंने कहा—"मैं उनसे बदला लेने की प्रतिज्ञा कर चुका हूँ।" माता जी ने मुझे बाध्य कर मेरी प्रतिज्ञा भंग कराई। अपनी बात पक्की रखी। मुझे ही सिर नीचा करना पड़ा। उस दिन से मेरा ज्वर कम होने लगा और मैं अच्छा हो गया।

## पलायनावस्था

मैं ग्राम में ग्रामवासियों की भाँति उसी प्रकार के कपड़े पहनकर रहने लगा। खेती भी करने लगा। देखने वाले अधिक से अधिक इतना समझ सकते थे कि मैं शहर में रहा हूँ, सम्भव है कुछ पढ़ा भी होऊँ। खेती के कामों में मैंने विशेष ध्यान दिया। शरीर तो हृष्ट-पुष्ट था ही, थोड़े ही दिनों में अच्छा खासा किसान बन गया। उस कठोर भूमि में खेती करना कोई सरल काम नहीं। बबूल, नीम के अतिरिक्त कोई एक दो आम के वृक्ष कहीं भले ही दिखाई दे जायें। बाकी वह नितान्त मरुभूमि है। खेत में जाता था। थोड़ी देर में ही झरबेरी के काँटों से पैर भर जाते। पहले-पहल तो बड़ा कष्ट प्रतीत हुआ। कुछ समय पश्चात् अभ्यास हो गया। जितना खेत उस देश का एक बलिष्ट पुरुष दिन भर में जोत सकता था, उतना मैं भी जोत लेता था। मेरा चेहरा बिल्कुल काला पड़ गया। थोड़े दिनों के लिए मैं शाहजहाँपुर की ओर घूमने आया तो कुछ लोग मुझे पहचान भी न सके ! मैं रात को शाहजहाँपुर पहुँचा।

गाड़ी छूट गई । दिन के समय पैदल जा रहा था कि एक पुलिस वाले ने पहचान लिया । वह और पुलिस वालों को लेने के लिए गया । मैं भागा, पहले दिन का ही थका हुआ था । लगभग बीस मील पहले दिन पैदल चला था । उस दिन भी पैंतीस मील पैदल चलना पड़ा !

मेरे माता-पिता ने सहायता की । मेरा समय अच्छी प्रकार व्यतीत हो गया । माता जी की पूंजी तो मैंने नष्ट कर दी । पिता जी से सरकार की ओर से कहा गया कि लड़के की गिरफ्तारी के वारंट की पूर्ति के लिए लडके का हिस्सा, जो उसके दादा की जायदाद होगी, नीलाम किया जायगा । पिता जी घबरा कर दो हजार रुपये का मकान आठ सौ मे तथा और दूसरी चीजें भी थोड़े दामो में बेचकर शाहजहाँपुर छोड़कर भाग गये । दो बहनों का विवाह हुआ, जो कुछ रहा बचा था, वह भी व्यय हो गया । माता-पिता की हालत फिर निर्धनो जैसी हो गई । समिति के जो दूसरे सदस्य भागे हुए थे, उनकी बहुत बुरी दशा हुई । महीनों चनों पर ही समय काटना पडा । दो चार रुपये जो मित्रो तथा सहायकों से मिल जाते थे, उन्ही पर गुजर होता था । पहनने को कपड़े तक न थे । विवश हो रिवाल्वर तथा बन्दूकें बेची, तब दिन कटे । किसी से कुछ कह भी न सकते थे और गिरफ्तारी के भय के कारण कोई व्यवस्था या नौकरी भी न कर सकते थे ।

उसी अवस्था में मुझे व्यवसाय करने की सूझी । मैंने अपने सहपाठी तथा मित्र श्रीयुत सुशीलचन्द्र सेन को, जिनका देहान्त

* हिन्दी का [illegible] प्रथम पुस्तक हमारे यहां [illegible] प्रकाशित होगा । [illegible] मंगाइये । पता:-हिन्दी साहित्य मन्दिर [illegible]

हो चुका था, स्मृति में बंगला भाषा का अध्ययन किया। मेरे छोटे भाई का जब जन्म हुआ तो मैंने उसका नाम भी सुशीलचन्द्र रखा। मैंने विचारा कि एक पुस्तक माला निकालूँ। लाभ भी होगा। कार्य भी सरल है। बंगला से हिन्दी में पुस्तकों का अनुवाद करके प्रकाशित कराऊँगा। अनुभव कुछ भी नहीं था। बंगला पुस्तक 'निहिलिस्ट रहस्य' का अनुवाद प्रारम्भ कर दिया। जिस प्रकार अनुवाद किया, उसका स्मरण कर कई बार हँसी आ जाती है। कई बैल, गाय तथा भैंस लेकर ऊसर में चराने के लिए जाया करता था। खाली बैठा रहना पड़ता था, अतएव कापी पेंसिल साथ ले जाता और पुस्तक का अनुवाद किया करता था। पशु जब कहीं दूर निकल जाते तब अनुवाद छोड़ लाठी लेकर उन्हें हकारने जाया करता था। कुछ समय के लिए एक साधु की कुटी पर जाकर रहा। वहाँ अधिक समय अनुवाद करने में व्यतीत करता था। खाने के लिए आटा ले जाता था। चार-पाँच दिन के लिए इकट्ठा आटा रखता था। भोजन स्वयं पका लेता था। जब पुस्तक ठीक हो गई, तो 'सुशील माला' के नाम से ग्रन्थ माला निकाली। पुस्तक का नाम 'बोलशेविकों की करतूत' रखा। दूसरी पुस्तक 'मन की लहर' छपवाई। इस व्यवसाय में लगभग पाँच सौ रुपये की हानि हुई। जब राजकीय घोषणा हुई और राजनैतिक कैदी छोड़े गये, तब शाहजहाँपुर आकर कोई व्यवसाय करने का विचार हुआ, ताकि माता-पिता की कुछ सेवा हो सके। विचार किया करता था कि इस जीवन में अब फिर कभी आज़ादी से शाहजहाँपुर में विचरण न कर सकूँगा, पर परमात्मा की लीला अपार है। वे दिन आये। मैं पुनः शाहजहाँपुर का निवासी हुआ।

आपका जन्म यमुना तट पर वटेश्वर के निकट 'मई' ग्राम मे हुआ था। आपने मैट्रिक्यूलेशन (दसवा) दर्जा अंग्रेज़ी का पास किया था। आप जब औरैया जिला इटावा में डी० ए० वी० स्कूल में टीचर थे, तब आपने शिवाजी समिति की स्थापना की थी, जिसका उद्देश्य था शिवाजी की भांति दल बनाकर उससे लूट मार करवाना, उसमें से चौथ लेकर हथियार खरीदना और उस दल में बांटना। इसी की सफलता के लिए आप रियासत से हथियार ला रहे थे, जो कुछ नवयुवको की असावधानी के कारण आगरे मे स्टेशन के निकट पकड लिए गये थे। आप वडे वीर तथा उत्साही थे। शान्त बैठना जानते ही न थे। नवयुवको को सदैव कुछ-न-कुछ उपदेश देते रहते थे। एक-एक सप्ताह तक बूट तथा वर्दी न उतारते थे। जब आप ब्रह्मचारी जी के पास सहायता लेने गये, तो दुर्भाग्यवश गिरफ़्तार कर लिए गये। ब्रह्मचारी के दल ने अंग्रेज़ी राज्य मे कई डाके डाले थे। डाके डालकर ये लोग चम्बल के बीहड़ों मे छिप जाते थे। सरकारी राज्य की ओर से ग्वालियर महाराज को लिखा गया। इस दल के पकड़ने का प्रबन्ध किया गया। सरकार ने तो हिन्दुस्तानी फौज भी भेजी थी, जो आगरा ज़िले में चम्बल के किनारे बहुत दिनो तक पड़ी रही। पुलिस सवार तैनात किये, फिर भी ये लोग भयभीत न हुए। विश्वासघात से पकड़े गये। इन्ही मे का एक आदमी पुलिस ने मिला लिया। डाका डालने के लिए दूर एक स्थान निश्चय किया गया। जहाँ तक जाने के लिए एक पड़ाव देना पड़ता था। चलते चलते सब थक गये। पड़ाव दिया गया। जो आदमी पुलिस से मिला हुआ था, उसने भोजन लाने को कहा, क्योंकि उसके

[illegible] इसका अच्छा प्रचार होगा। हिन्दी का प्रथम [illegible] पुस्तक हमारे यहां [illegible]
पता:- हिन्दी साहित्य मंदिर [illegible]

किसी सम्बन्धी का मकान निकट था। वह पूड़ी करा के लाया। सब पूड़ी खाने लग गये। ब्रह्मचारी जी जो सदैव अपने हाथ से बनाकर भोजन करते थे या आलू अथवा घुइयाँ भून कर खा लेते थे, उन्होंने भी उस दिन पूड़ी खाना स्वीकार किया। सब भूखे तो थे ही, खाने लगे। ब्रह्मचारी जी ने भी एक पूड़ी खाई। उनकी ज़बान ऐंठने लगी और जो अधिक खा गये थे, वे गिर गये। पूड़ी लाने वाला पानी लेने के बहाने चल दिया। पूड़ियों में विष मिला हुआ था। ब्रह्मचारी जी ने बन्दूक उठाकर पूड़ी लाने वाले पर गोली चलाई। ब्रह्मचारी की गोली का चलाना था कि चारों ओर से गोली चलने लगीं। पुलिस छिपी हुई थी। गोली चलने से ब्रह्मचारी जी के कई गोली लगीं। तमाम शरीर घायल हो गया। पं० गेंदालाल जी की आँख में एक छर्रा लगा। बाईं आँख जाती रही। कुछ आदमी ज़हर के कारण मरे, कुछ गोली से मारे गये। इस प्रकार अस्सी आदमियों में से पचीस तीस जान से मारे गये। सब पकड़कर के ग्वालियर के किले में बन्द कर दिये गये। किले में हम लोग जब पण्डित जी से मिले, तब चिट्ठी भेजकर उन्होंने हमको सब हाल बताया। एक दिन किले में हम लोगों पर भी सन्देह हो गया था, बड़ी कठिनता से एक अधिकारी की सहायता से हम लोग निकल सके।

जब मैनपुरी षड्यन्त्र का अभियोग चला, पण्डित गेंदालाल जी को सरकार ने ग्वालियर राज्य से मँगाया। ग्वालियर के किले का जलवायु बड़ा ही हानिकारक था। पण्डित जी को क्षय रोग हो गया था। मैनपुरी स्टेशन से जेल जाते समय ग्यारह बार रास्ते में बैठ कर जेल पहुँचे। पुलिस ने जब हाल पूछा तो उन्होंने कहा बालकों को क्यों गिरफ्तार किया है? मैं हाल बताऊँगा। पुलिस को विश्वास

हो गया। आपको जेल से निकाल कर दूसरे सरकारी गवाहों के निकट रख दिया। वहाँ पर सब विवरण जान रात्रि के समय एक और सरकारी गवाह को लेकर पण्डित जी भाग खड़े हुए। भागकर एक गाँव मे एक कोठरी मे ठहरे। साथी कुछ काम के लिए बाजार गया और फिर लौट कर न आया। बाहर से कोठरी की जंजीर बन्द कर गया था। पण्डित जी उसी कोठरी में तीन दिन बिना अन्न जल बन्द रहे। समझे कि साथी किसी आपत्ति में फँस गया होगा, अन्त में किसी प्रकार जंजीर खुलवाई। रुपये वह सब साथ ही ले गया था ! पास एक पैसा भी न था। कोटा से पैदल आगरा आये। किसी प्रकार अपने घर पहुँचे। बहुत बीमार थे। पिता ने यह समझ कर कि घर वालों पर आपत्ति न आय, पुलिस को सूचना देनी चाही। पण्डित जी ने पिता से बड़ी विनय प्रार्थना की और दो तीन दिन में घर छोड़ दिया। हम लोगों की बहुत खोज की। किसी का कुछ पता न पा दिल्ली मे एक प्याऊ पर पानी पिलाने की नौकरी कर ली। अवस्था दिनो-दिन बिगड रही थी। रोग भीषण रूप धारण कर रहा था ! छोटे भाई तथा पत्नी को बुलाया। भाई किकर्त्तव्यविमूढ़ ! वह क्या कर सकता था? सरकारी अस्पताल में भर्ती कराने ले गया। पण्डित जी की धर्मपत्नी को दूसरे स्थान में भेजकर जब वह अस्पताल आया, तो जो देखा उसे लिखते हुए लेखनी कम्पायमान होती है ! पण्डित जी शरीर त्याग चुके थे ! केवल उनका मृत शरीर मात्र ही पड़ा हुआ था। स्वदेश को कार्य-सिद्धि में पं० गेंदालाल दीक्षित ने जिस निःसहाय अवस्था मे अन्तिम बलिदान दिया, उसकी स्वप्न मे भी आशङ्का न थी। पण्डित जी की प्रबल इच्छा थी कि उनकी मृत्यु गोली लगकर हो। भारतवर्ष की

इस ... अच्छा प्रचार होगा।
व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
से मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

एक महानात्मा विलीन हो गई और देश में किसी ने जाना भी नहीं! आपकी विस्तृत जीवनी 'प्रभा' मासिक पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी है। मैनपुरी षड्यन्त्र के मुख नेता आप ही समझे गये थे। इस षड्यन्त्र में विशेषतायें ये हुईं कि नेताओं में से केवल दो व्यक्ति पुलिस के हाथ आये, जिनमें पण्डित गेंदालाल दीक्षित एक सरकारी गवाह को लेकर भाग गये और श्रीयुत शिवकृष्ण जेल से भाग गये, फिर हाथ न आये। छः मास पश्चात् जिन्हें सज़ा हुई थी वे भी राजकीय घोषणा से मुक्त कर दिये गये। खुफ़िया पुलिस विभाग का क्रोध पूर्णतया शान्त न हो सका और उनकी बदनामी भी इस केस में बहुत हुई।

## तृतीय खण्ड

### स्वतन्त्र जीवन

राजकीय घोषणा के पश्चात् जब मैं शाहजहाँपुर आया तो शहर की प्रस्तुत दशा देखी । कोई पास तक खड़े होने का साहस न करता था ! जिसके पास मैं जाकर खड़ा हो जाता था, वह नमस्ते कर चल देता था । पुलिस का बड़ा प्रकोप था । प्रत्येक समय वह छाया की भाँति पीछे पीछे फिरा करती थी । इस प्रकार का जीवन कब तक व्यतीत किया जाय ? मैंने कपड़ा बुनने का काम सीखना आरम्भ किया । जुलाहे बड़ा कष्ट देते थे । कोई काम सिखाना न चाहता था । बड़ी कठिनता से मैंने कुछ काम सीखा । उसी समय एक कारखाने में मैनेजरी का स्थान खाली हुआ । मैंने उस स्थान के लिए प्रयत्न किया । मुझ से पाँच सौ रुपये की जमानत माँगी गई । मेरी दशा बड़ी शोचनीय थी । तीन तीन दिवस तक भोजन प्राप्त नहीं होता था, क्योंकि मैंने प्रतिज्ञा की थी कि किसी से कुछ सहायता न लूँगा । पिता जी से बिना कुछ कहे मैं चला आया था । मैं पाँच सौ रुपये कहाँ से लाता ? मैंने दो एक मित्रों से केवल दो सौ रुपये की जमानत देने की प्रार्थना की । उन्होंने साफ़ इनकार कर दिया ! मेरे हृदय पर वज्रपात हुआ । संसार अन्धकारमय दिखाई देता था ।

इसका अच्छा प्रचार होगा ।
व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
है । बड़ा सूचीपत्र मंगावें । पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

पर बाद को एक मित्र की कृपा से नौकरी मिल गई। अब अवस्था कुछ सुधरी। मैं भी सभ्य पुरुषों की भाँति समय व्यतीत करने लगा। मेरे पास भी चार पैसे हो गये। वे ही मित्र, जिन से मैंने दो सौ रुपये की जमानत देने की प्रार्थना की थी, अब मेरे पास अपने चार चार हजार रुपयों की थैली, अपनी बन्दूक, लाइसेंस इत्यादि सब डाल जाते थे कि मेरे यहाँ उनकी वस्तुएँ सुरक्षित रहेंगी ! समय के इस फेर को देखकर मुझे हँसी आती थी।

इस प्रकार कुछ काल व्यतीत हुआ। दो चार ऐसे पुरुषों से भेंट हुई, जिनको पहले मैं बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखता था। उन लोगों ने मेरी पलायनावस्था के सबन्ध में कुछ समाचार सुने थे। मुझ से मिलकर वे बड़े प्रसन्न हुए। मेरी लिखी हुई पुस्तकें भी देखीं। इस समय मैं एक तीसरी पुस्तक 'केथेराइन' लिख चुका था। मुझे पुस्तकों के व्यवसाय में बहुत घाटा हो चुका था। मैंने माला का प्रकाशन स्थगित कर दिया। 'कैथेराइन' एक पुस्तक प्रकाशक को दे दी। उन्होंने वड़ी कृपा कर उस पुस्तक को थोड़े से हेर-फेर के साथ प्रकाशित कर दिया। 'कैथेराइन' को देखकर मेरे इष्ट मित्रों को वड़ा हर्ष हुआ। उन्होंने मुझे पुस्तक लिखते रहने के लिए वड़ा उत्साहित किया। मैंने 'स्वदेशी रंग' नामक एक और पुस्तक लिख कर एक पुस्तक प्रकाशक को दी। वह भी प्रकाशित हो गई।

वड़े परिश्रम के साथ मैंने एक पुस्तक 'क्रान्तिकारी जीवन' लिखी। 'क्रान्तिकारी जीवन' को कई पुस्तक प्रकाशकों ने देखा, पर किसी का साहस न हो सका कि उसको प्रकाशित करे ! आगरा, कानपुर, कलकत्ता इत्यादि कई स्थानों में घूम कर पुस्तक मेरे पास लौट आई। कई मासिक पत्रिकाओं में 'राम' तथा 'अज्ञात' नाम से

मेरे लेख प्रकाशित हुआ करते थे । लोग बड़े चाव से उन लेखों का पाठ करते थे । मैंने किसी स्थान पर लेखन शैली का नियमपूर्वक अध्ययन न किया था । बैठे बैठे खाली समय में ही कुछ लिखा करता और प्रकाशनार्थ भेज दिया करता था । अधिकतर बंगला तथा अंग्रेजी की पुस्तकों से अनुवाद करने का ही विचार था । थोड़े समय के पश्चात् श्रीयुत अरविन्द घोष की बंगला पुस्तक 'योगिक साधन' का अनुवाद किया । दो एक पुस्तक-प्रकाशकों को दिखाया, पर वे अति अल्प पारितोषिक देकर पुस्तक लेना चाहते थे । आजकल के समय मे हिन्दी के लेखकों तथा अनुवादकों की अधिकता के कारण पुस्तक-प्रकाशकों को भी बड़ा अभिमान हो गया है । बड़ी कठिनता से बनारस के एक प्रकाशक ने 'योगिक साधन' प्रकाशित करने का वचन दिया । पर थोडे दिनो में वह स्वय ही अपने साहित्य मन्दिर में ताला डालकर कहीं पधार गये ! पुस्तक का अब तक कोई पता न लगा । पुस्तक अति उत्तम थी । प्रकाशित हो जाने से हिन्दी साहित्य सेवियो को अच्छा लाभ होता । मेरे पास जो 'बोलशेविक करतूत' तथा 'मन की लहर' की प्रतियाँ बची थी, वे मैंने लागत से भी कम मूल्य पर कलकत्ते के एक व्यक्ति श्रीयुत दीनानाथ सगतिया को दे दी । बहुत थोडी पुस्तकें मैंने बेची थीं । दीनानाथ महाशय पुस्तकें हड़प कर गये ! मैंने नोटिस दिया । नालिश की । लगभग चार सौ रुपये की डिग्री भी हुई, किन्तु दीनानाथ महाशय का कहीं अनुसंधान न मिला । वे कलकत्ता छोड कर पटना गये । पटना से भी कई गरीबों का रुपया मारकर कहीं अन्तरधान हो गये ! अनुभव-हीनता से इस प्रकार ठोकरें खानी पड़ीं । कोई पथ-प्रदर्शक तथा सहायक नही था, जिससे परामर्श करता । व्यर्थ के उद्योग-धन्धों तथा स्वतन्त्र कार्यों में शक्ति का व्यय करता रहा ।

इसका अच्छा प्रचार होगा । हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मंगावे । पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

## पुनर्संगठन

जिन महानुभावों को मैं पूजनीय दृष्टि से देखता था, उन्हीं ने अपनी इच्छा प्रकट की कि मैं क्रान्तिकारी दल का पुनः संगठन करूँ। गत जीवन के अनुभव से मेरा हृदय अत्यन्त दुखित था। मेरा साहस न देखकर, इन लोगों ने बहुत उत्साहित किया और कहा कि हम आपको केवल निरीक्षण का कार्य देंगे, बाकी सब कार्य स्वयं ही करेंगे। कुछ मनुष्य हमने पहले जुटा लिये हैं, धन की कमी न होगी, आदि। मान्य पुरुषों की प्रवृत्ति देख मैंने भी स्वीकृति दे दी। मेरे पास जो अस्त्र-शस्त्र थे, मैंने दिये। जो दल उन्होंने एकत्रित किया था, उसके नेता से मुझे मिलाया। उसकी वीरता की बड़ी प्रशंसा की। वह एक अशिक्षित ग्रामीण पुरुष था। मेरी समझ में आ गया कि यह बदमाशों का या स्वार्थी जनों का कोई संगठन है। मुझ से उस दल के नेता ने दल का कार्य निरीक्षण करने की प्रार्थना की। दल में कई फौज से आये हुए लड़ाई पर से वापिस किये गये व्यक्ति भी थे। मुझे इस प्रकार के व्यक्तियों से कभी कोई काम न पड़ा था। मैं दो एक महानुभावों को साथ ले इन लोगों का कार्य देखने के लिए गया।

थोड़े दिनों बाद इस दल के नेता महाशय एक वेश्या को भी ले आये। उसे रिवाल्वर दिखाया कि यदि कहीं गई तो गोली से मारी जायगी। यह समाचार सुन उसी दल के दूसरे सदस्य ने बड़ा क्रोध प्रकाशित किया और मेरे पास खबर भेजने का प्रबन्ध किया। उसी समय एक दूसरा आदमी पकड़ा गया, जो नेता महाशय को जानता था। नेता महाशय रिवाल्वर तथा कुछ सोने के आभूषणों सहित

गिरफ्तार हो गये। उनकी वीरता की बड़ी प्रशंसा सुनी थी, जो इस प्रकार प्रकट हुई कि कई आदमियों के नाम पुलिस को बताये और इकबाल कर लिया! लगभग तीस-चालीस आदमी पकड़े गये।

एक दूसरा व्यक्ति था जो बहुत वीर था। पुलिस उसके पीछे पड़ी हुई थी। एक दिन पुलिस कप्तान ने सवार तथा तीस-चालीस बन्दूक वाले सिपाही लेकर उसके घर में उसे घेर लिया। उसने छत पर चढ़ कर दोनाली कारतूसी बन्दूक से लगभग तीन सौ फायर किये। बन्दूक गरम होकर गल गई। पुलिस वाले समझे कि घर में कई आदमी हैं। सब पुलिस वाले छिप कर आड़ में से सुबह होने की प्रतीक्षा करने लगे। उसने मौका पाया। मकान के पीछे से कूद पड़ा, एक सिपाही ने देख लिया। उसने सिपाही की नाक पर रिवाल्वर का कुन्दा मारा। सिपाही चिल्लाया। सिपाही के चिल्लाते ही मकान में से एक फायर हुआ। पुलिस वाले समझे मकान ही में है। सिपाही को धोखा हुआ होगा। बस, वह जंगल में निकल गया। अपनी स्त्री को एक टोपीदार बन्दूक दे आया था कि यदि चिल्लाहट हो तो एक फायर कर देना। ऐसा ही हुआ और वह निकल गया। जंगल में जाकर एक दूसरे दल से मिला। जंगल में भी एक समय पुलिस कप्तान से सामना हो गया। गोली चली। उसके भी पैर में छर्रे लगे थे। अब यह बड़े साहसी हो गये थे। समझ गये थे कि पुलिस वाले किस प्रकार समय पर आड़ में छिप जाते हैं। इन लोगों का दल छिन्न-भिन्न हो गया था। अतः उन्होंने मेरे पास आश्रय लेना चाहा। मैंने बड़ी कठिनता से अपना पीछा छुड़ाया। तत्पश्चात जंगल में जाकर ये दूसरे दल से मिल गये। वहाँ पर दुराचार के कारण जंगल के दल के नेता ने इन्हें गोली से मार दिया। उस नेता को भी समय

... इसका अच्छा प्रचार होगा।
... व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर अजने...

पाकर उसके साथी ने गोली से मार दिया। इस प्रकार सब दल छिन्न-भिन्न हो गया। जो पकड़े गये उन पर कई डकैतियाँ चलीं, किसी को तीस साल, किसी को पचास साल, किसी को बीस साल की सजायें हुईं! एक बेचारा जिसका किसी डकैती से कोई सम्बन्ध न था, केवल शत्रुता के कारण फँसा दिया गया। उसे फाँसी हो गई और जो सब प्रकार डकैतियों में सम्मिलित था, जिसके पास डकैती का माल तथा कुछ हथियार पाये गये, पुलिस से गोली भी चली, उसे पहले फाँसी की सज़ा की आज्ञा हुई, पर पैरवी अच्छी हुई, अतएव हाईकोर्ट से फाँसी की सज़ा माफ हो गई, केवल पाँच वर्ष की सज़ा रह गई। जेल वालों से मिलकर उसने डकैतियों में शिनाख्त न होने दी थी। इस प्रकार इस दल की समाप्ति हुई। दैवयोग से हमारे अस्त्र बच गये। केवल एक ही रिवाल्वर पकड़ा गया।

## नोट बनाना

इसी बीच मेरे एक मित्र की एक नोट बनाने वाले महाशय से भेंट हुई। उन्होंने बड़ी बड़ी आशायें बाँधी। बड़ी लम्बी लम्बी स्कीम बाँधने के पश्चात् मुझ से कहा कि एक नोट बनाने वाले से भेंट हुई है। बड़ा दक्ष पुरुष है। मुझे भी बना हुआ नोट देखने की बड़ी उत्कट इच्छा थी। मैंने उन सज्जन के दर्शन की इच्छा प्रकट की। जब उक्त नोट बनाने वाले महाशय मुझे मिले तो बड़ी कौतूहलोत्पादक बातें कीं। मैंने कहा कि मैं स्थान तथा आर्थिक सहायता दूंगा, नोट बनाओ। जिस प्रकार उन्होंने मुझसे कहा, मैंने सब प्रबन्ध कर दिया, किन्तु मैंने कह दिया था कि नोट बनाते समय मैं वहाँ उपस्थित रहूँगा। मुझे बताना कुछ मत, पर मैं नोट बनाने की रीति अवश्य

देखना चाहता हूँ । पहले पहल उन्होंने दस रुपये का नोट बनाने का निश्चय किया । मुझ से एक दस रुपये का नया साफ नोट मँगाया । नौ रुपये दवा खरीदने के बहाने से ले गये । रात्रि में नोट बनाने का प्रबन्ध हुआ । दो शीशे लाये । कुछ कागज भी लाये । दो तीन शीशियों में कुछ दवाई थी । दवाइयों को मिलाकर एक प्लेट में सादे कागज पानी मे भिगोये । मैं जो साफ नोट लाया था, उस पर एक सादा कागज़ लगाकर दोनों को दूसरी दवा डालकर धोया । फिर सादे कागज़ो में लपेट एक पुड़िया सी बनाई और अपने एक साथी को दी कि उसे आग पर गरम कर लाय । आग वहाँ से कुछ दूर पर जलती थी । कुछ समय तक वह आग पर गरम करता रहा और पुड़िया लाकर वापस कर दी । नोट बनाने वाले ने पुड़िया खोलकर दोनों शीशो में दबाकर, शीशों को दवा में धोया और फीते से शीशों को बाँध कर रख दिया और कहा कि दो घण्टे मे नोट बन जायगा । शीशे रख दिये । बातचीत होने लगी । कहने लगा, इस प्रयोग में बड़ा व्यय होता है । छोटे छोटे नोट बनाने से कोई लाभ नहीं । बड़े नोट बनाने चाहिएँ, जिससे पर्याप्त धन की प्राप्ति हो । इस प्रकार मुझे भी सिखा देने का वचन दिया । मुझे कुछ कार्य था । मैं जाने लगा तो वह भी चला गया । दो घण्टे बाद आने का निश्चय हुआ ।

मै विचारने लगा कि किस प्रकार एक नोट के ऊपर दूसरा सादा कागज रखने से नोट बन जायगा । मैंने प्रेस का काम सीखा था । थोडी बहुत फोटोग्राफी भी जानता था । साइन्स (विज्ञान) का भी अध्ययन किया था । कुछ समझ मे न आया कि नोट सीधे कैसे छपेगा । सबसे बड़ी बात यह थी कि नम्बर कैसे छपेंगे । मुझे बड़ा

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

भारी सन्देह हुआ। दो घण्टे बाद मैं जब गया तो रिवाल्वर भर कर जेब में डालते गया। यथासमय वह महाशय आये। उन्होंने शीशे खोलकर कागज निकाल कर उन्हें फिर एक दवा में धोया। अब दोनों कागज खोले। एक मेरा लाया हुआ नोट और दूसरा और एक दस रुपये का साफ नोट उसी के ऊपर से उतार कर सुखाया। कहा कितना साफ़ नोट है। मैंने हाथ में लेकर देखा। दनों नोटों के नम्बर मिलाये। नम्बर नितान्त भिन्न-भिन्न थे। मैंने जेब से रिवाल्वर निकाल नोट बनाने वाले महाशय की छाती पर रखकर कहा 'बदमाश ! इस तरह ठगता फिरता है ?' वह काँप कर गिर पड़ा ! मैंने उसको उसकी मूर्खता समझाई कि यह ढोंग ग्रामवासियों के सामने चल सकता है, अनजान पढ़े लिखे भी धोखे में आ सकते हैं। किन्तु तू मुझे धोखा देने आया है ! अन्त में मैंने उससे प्रतिज्ञा पत्र लिखाकर, उस पर उसके हाथ की दसों अंगुलियों के निशान लगवाये कि वह ऐसा काम फिर न करेगा। दसों अंगुलियों के निशान देने में उसने कुछ ढील की। मैंने रिवाल्वर उठाकर कहा कि गोली चलती है, उसने तुरन्त दसों अंगुलियों के निशान बना दिये। बुरी तरह काँप रहा था। मेरे उन्नीस रुपये खर्च हो चुके थे। मैंने दोनों नोट रख लिये और शीशे, दवायें इत्यादि सब छीन लीं कि मित्रों को तमाशा दिखाऊँगा। तत्पश्चात् उन महाशय को विदा किया। उसने किया यह था कि जब अपने साथी को आग पर गरम करने के लिए कागज़ की पुड़िया दी थी, उसी समय उस साथी ने सादे कागज़ की पुड़िया बदल कर दूसरी पुड़िया ले आया जिस में दोनों नोट थे। इस प्रकार नोट बन गया। इस प्रकार का एक बड़ा भारी दल है, जो सारे भारतवर्ष में ठगी का काम करके हज़ारों रुपये पैदा करता है। मैं

एक सज्जन को जानता हूँ जिन्होने इसी प्रकार पचास हज़ार से अधिक रुपये पैदा कर लिये। होता यह है कि ये लोग अपने एजेण्ट रखते हैं। वे एजेण्ट साधारण पुरुषों के पास जाकर नोट बनाने की कथा कहते हैं। आता धन किसे बुरा लगता है? वे नोट बनवाते हैं। इस प्रकार पहले दस का नोट बनाकर दिया, वह बाजार मे बेच आये। सौ रुपये का बनाकर दिया वह भी बाज़ार मे चलाया, और चल क्यों न जाय? इस प्रकार के सब नोट असली होते हैं। वे तो केवल चाल से रख दिये जाते हैं। इसके बाद कहा कि हज़ार या पाँच सौ का नोट लाओ, तो कुछ धन भी मिले। जैसे तैसे करके बेचारा एक हज़ार का नोट लाया। सादा कागज़ रखकर शीशे मे बाँध दिया। हज़ार का नोट जेब में रखा और चम्पत हुए! नोट के मालिक रास्ता देखते हैं, वहाँ नोट बनाने वालों का पता ही नहीं! अन्त मे विवश हो शीशों को खोला जाता है, तो दो सादे कागज़ के अलावा कुछ नही मिलता! वे अपने सिर पर हाथ मार कर रह जाते हैं। इस डर से कि यदि पुलिस को मालूम हो गया तो और लेने के देने पड़ेंगे, किसी से कुछ कह भी नही सकते। कलेजा मसोस कर रह जाते हैं। पुलिस ने इस प्रकार के कुछ अभियुक्तों को गिरफ्तार भी किया, किन्तु ये लोग पुलिस को नियमपूर्वक चौथ देते रहते हैं और इस कारण बचे रहते हैं!

## चालबाज़ी

कई महानुभावों ने गुप्त समिति के नियमादि बनाकर मुझे दिखाये। उनमें एक नियम यह भी था कि जो व्यक्ति समिति का कार्य करें, उन्हें समिति की ओर से कुछ मासिक दिया जाय। मैंने

...इसका सम्पूर्ण प्रचार होगा ...
...ल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
से मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

इस नियम को अनिवार्य रूप में मानना अस्वीकार किया। मैं यहाँ तक सहमत था कि जो व्यक्ति सर्वप्रकारेण समिति के कार्य में अपना समय व्यतीत करें, उनको केवल गुज़ारा मात्र समिति की ओर से दिया जा सकता है। जो लोग किसी व्यवसाय को करते हैं, उन्हें किसी प्रकार का मासिक भत्ता देना उचित न होगा। जिन्हें समिति के कोष में से कुछ दिया जाय, उनको भी कुछ व्यवसाय करने का प्रवन्ध करना उचित है, ताकि वे लोग सर्वथा समिति की सहायता पर निर्भर रह कर निरे भाड़े के टट्टू न बन जायें। भाड़े के टट्टुओं से समिति का कार्य लेना, जिसमें कतिपय मनुष्यों के प्राणों का उत्तरदायित्व हो और थोड़ा सा भेद खुलने से ही बड़ा भयंकर परिणाम हो सकता है, उचित नहीं है। तत्पश्चात् उन महानुभावों की सम्मति हुई कि एक निश्चित कोष समिति के सदस्यों के देने के निमित्त स्थापित किया जाय, जिसकी आय का व्योरा इस प्रकार हो कि डकैतियों से जितना धन प्राप्त हो उसका आधा समिति के कार्यों में व्यय किया जाय और आधा समिति के सदस्यों को वरावर वरावर बाँट दिया जाय। इस प्रकार के परामर्श से मैं सहमत न हो सका और मैंने इस प्रकार की गुप्त समिति में, कि जिसका एक उद्देश्य पेट-पूर्ति हो, योग देने से इनकार कर दिया। जब मेरी इस प्रकार की दृष्टि देखी तो उन महानुभावों ने आपस में षड्यन्त्र रचा।

जब मैंने उन महानुभावों के परामर्श तथा नियमादि को स्वीकार न किया तो वे चुप हो गये। मैं भी कुछ समझ न सका कि जो लोग मुझ में इतनी श्रद्धा रखते थे, जिन्होंने कई प्रकार की आशायें देकर मुझ से क्रान्तिकारी दल का पुनर्संगठन करने की प्रार्थनायें की थीं, अनेकों प्रकार की उम्मीदें बँधाई थीं, सब कार्य स्वयं करने के

वचन दिये थे, वे लोग ही मुझ से इस प्रकार के नियम बनाने की माँग करने लगे। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। प्रथम प्रयत्न में, जिस समय मैं मैनपुरी षड़यन्त्र के सदस्यों के सहित कार्य करता था, उस समय हम में से कोई भी अपने व्यक्तिगत प्राइवेट खर्च में समिति का धन व्यय करना पूर्ण पाप समझता था। जहाँ तक हो सकता अपने खर्च के लिये माता पिता से कुछ लाकर प्रत्येक सदस्य समिति के कार्यों में धन व्यय किया करता था। इस कारण मेरा साहस इस प्रकार के नियमों से सहमत होने का न हो सका। मैंने विचार किया कि यदि कोई समय आया, और किसी प्रकार अधिक धन प्राप्त हुआ, तो कुछ सदस्य ऐसे स्वार्थी हो सकते हैं, जो अधिक धन लेने की इच्छा करें, और आपस में वैमनस्य बढ़े। उसके परिणाम बड़े भयंकर हो सकते हैं। अतः इस प्रकार के कार्य में योग देना मैंने उचित न समझा।

मेरी यह अवस्था देख इन लोगों ने आपस में षड़यन्त्र रचा, कि जिस प्रकार मैं कहूँ वे नियम स्वीकार कर लें और विश्वास दिला कर जितने अस्त्र-शस्त्र मेरे पास हों, उनको मुझ से लेकर सब पर अपना आधिपत्य जमा लें। यदि मैं अस्त्र-शस्त्र माँगूं तो मुझसे युद्ध किया जाय, और आ पड़े तो मुझे कहीं ले जाकर जान से मार दिया जाय ! तीन सज्जनों ने इस प्रकार का षड़यन्त्र रचा और मुझसे चालबाज़ी करनी चाही ! दैवात् उनमें से एक सदस्य के मन में कुछ दया आ गई। उसने आकर मुझसे सब भेद कह दिया। मुझे सुनकर बड़ा खेद हुआ कि जिन व्यक्तियों को मैं पिता तुल्य मानकर श्रद्धा करता हूँ, वे ही मेरे नाश करने के लिये इस प्रकार नीचता का कार्य करने को उद्यत हैं। मैं सम्हल गया। मैं उन लोगों से सतर्क रहने

हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

लगा कि पुनः प्रयाग जैसी घटना न घटे। जिन महाशय ने मुझ से भेद कहा था, उनकी उत्कट इच्छा थी कि वे एक रिवाल्वर रखें और इस इच्छा पूर्ति के लिए उन्होंने मेरा विश्वासपात्र बनने के कारण मुझसे भेद कहा था। मुझसे एक रिवाल्वर माँगा कि मैं उन्हें कुछ समय के लिए रिवाल्वर दे दूं। यदि मैं उन्हें रिवाल्वर दे देता तो वह उसे हज़म कर जाते! मैं कर ही क्या सकता था? और अब रिवाल्वर इत्यादि पाना कोई सरल कार्य भी न था। बाद को बड़ी कठिनता से इन चालबाज़ियों से अपना पीछा छुड़ाया।

अब सब ओर से चित्त को हटा कर बड़े मनोयोग से नौकरी में समय व्यतीत करने लगा। कुछ रुपया इकट्ठा करने के विचार से, कुछ कमीशन इत्यादि का प्रबन्ध कर लेता था। इस प्रकार पिता जी का थोड़ा सा भार बटाया। सबसे छोटी बहिन का विवाह नहीं हुआ था। पिता जी के सामर्थ्य के बाहर था कि उस बहिन का विवाह किसी भले घर में कर सकते। मैंने रुपया जमा करके बहिन का विवाह एक अच्छे जमींदार के यहाँ कर दिया। पिता जी का भार उतर गया। अब केवल माता, पिता, दादी तथा छोटे भाई थे, जिन के भोजनों का प्रबन्ध होना अधिक कठिन काम न था। अब माता जी की उत्कट इच्छा हुई कि मैं भी विवाह कर लूं। कई अच्छे अच्छे विवाह-सम्बन्ध के सुयोग एकत्रित हुए। किन्तु मैं विचारता था कि जब तक पर्याप्त धन पास न हो, विवाह बन्धन में फँसना ठीक नहीं। मैंने स्वतन्त्र कार्य आरम्भ किया, नौकरी छोड़ दी। एक मित्र ने सहायता दी। मैंने रेशमी कपड़ा बुनने का एक निजी कारखाना खोल दिया। बड़े मनोयोग तथा परिश्रम से कार्य किया। परमात्मा की दया से अच्छी सफलता हुई। एक डेढ़ साल में ही मेरा कारखाना

घमक गया। तीन चार हजार की पूंजी से कार्य प्रारम्भ किया था। एक साल बाद सब खर्च निकाल कर लगभग दो हजार रुपये लाभ हुए। मेरा उत्साह और भी बढ़ा। मैंने एक दो व्यवसाय और भी प्रारम्भ किये, उसी समय मालूम हुआ कि संयुक्त प्रान्त के क्रान्तिकारी दल का पुनर्संगठन हो रहा है। कार्यारम्भ हो गया है। मैंने भी योग देने का वचन दिया, किन्तु उस समय मैं अपने व्यवसाय में बुरी तरह फंसा हुआ था। मैंने छः मास का समय लिया कि छः मास में अपने व्यवसाय को अपने साझी को सौंप दूंगा, और अपने भाग को उसमें से निकाल लूंगा, तब स्वतन्त्रतापूर्वक क्रान्तिकारी कार्य में योग दे सकूंगा। छः मास तक मैंने अपने कारखाने का सब काम साफ़ करके अपने साझी को सब काम समझा दिया। तत्पश्चात अपने वचनानुसार कार्य में योग देने का उद्योग किया।

मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ब.

चतुर्थ खण्ड

## बृहत् संगठन

यद्यपि मैं अपना निश्चय कर चुका था, कि अब इस प्रकार के कार्यों में कोई भाग न लूँगा, तथापि मुझे पुनः क्रान्तिकारी आन्दोलन में हाथ डालना पड़ा, जिसका कारण यह था कि मेरी तृष्णा न बुझी थी, मेरे दिल के अरमान न निकले थे। असहयोग आन्दोलन शिथिल हो चुका था। पूर्ण आशा थी कि जितने देश के नवयुवक उस आन्दोलन में भाग लेते थे, उनमें अधिकतर क्रान्तिकारी आन्दोलन में सहायता देंगे और पूरी लगन से काम करेंगे। जब कार्य आरम्भ हो गया और असहयोगियों को टटोला तो वे अन्दोलन से कहीं अधिक शिथिल हो चुके थे। उनकी आशाओं पर पानी फिर चुका था। निज की पूँजी समाप्त हो चुकी थी। घर में व्रत हो रहे थे। आगे की भी कोई विशेष आशा न थी। काँग्रेस में भी स्वराज्य दल का ज़ोर हो गया था। जिनके पास कुछ धन तथा इष्ट मित्रों का संगठन था, वे कौन्सिलों तथा एसेम्बली के सदस्य बन गये। ऐसी अवस्था में यदि क्रान्तिकारी संगठनकर्त्ताओं के पास पर्याप्त धन होता तो वे असहयोगियों को हाथ में लेकर उनसे काम ले सकते थे। कितना भी सच्चा काम करने वाला हो, किन्तु पेट तो सब के हैं। दिन भर में थोड़ा सा अन्न क्षुधा-निवृत्ति के लिये मिलना परमावश्यक

है । फिर शरीर ढकने को भी आवश्यकता होती है । अतएव कुछ प्रबन्ध ही ऐसा होना चाहिए, जिसमें नित की आवश्यकतायें पूरी हो जायें । जितने धनी मानी स्वदेश प्रेमी थे उन्होंने असहयोग आन्दोलन में पूर्ण सहायता दी थी । फिर भी कुछ ऐसे कृपालु सज्जन थे, जो थोड़ी बहुत आर्थिक सहायता देते थे । किन्तु प्रान्त भर के प्रत्येक जिले में संगठन करने का विचार था । पुलिस की दृष्टि बचाने के लिए भी पूर्ण प्रयत्न करना पड़ता था । ऐसी परिस्थिति में साधारण नियमों को काम में लाते हुए कार्य करना बड़ा कठिन था । अनेक उपायों के पश्चात कुछ भी सफलता न होती थी । दो-चार जिलों में संगठनकर्त्ता नियत किये गये थे, जिनको कुछ मासिक गुजारा दिया जाता था । पाँच-दस महीने तक तो इस प्रकार कार्य चलता रहा । बाद को जो सहायक कुछ आर्थिक सहायता देते थे, उन्होंने भी हाथ खींच लिया । अब हम लोगों की अवस्था बहुत खराब हो गई । सब कार्य-भार मेरे ऊपर ही आ चुका था । कोई भी किसी प्रकार की मदद न देता था । जहाँ तहाँ से पृथक् पृथक् जिलों में कार्य करने वाले मासिक व्यय की माँग कर रहे थे । कई मेरे पास आये भी । मैंने कुछ रुपया कर्ज लेकर उन लोगों को एक मास का खर्च दिया । कइयों पर कुछ कर्ज भी हो चुका था । मैं कर्ज न निपटा सका । एक केन्द्र के कार्यकर्त्ता को जब पर्याप्त धन न मिल सका तो वे कार्य छोड़कर चले गये । मेरे पास क्या प्रबन्ध था, जो मैं उसकी उदर-पूर्ति कर सकता ? अद्भुत समस्या थी ! किसी तरह उन लोगों को समझाया ।

थोड़े दिनों में क्रान्तिकारी पर्चे आये । सारे देश में निश्चित तिथि पर पर्चे बाँटे गये । रंगून, बम्बई, लाहौर, अमृतसर, कलकत्ता

ग्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
बड़ा सूचीपत्र मंगावें । पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर प्र

तथा बंगाल के मुख्य मुख्य शहरों तथा संयुक्त प्रान्त के सभी मुख्य मुख्य जिलों में पर्याप्त संख्या में पर्चों का वितरण हुआ। भारत सरकार बड़ी सशंक हुई कि ऐसी कौनसी और इतनी बड़ी सुसंगठित समिति है, जो एक ही दिन में सारे भारतवर्ष में पर्चे बँट गये ! उसी के बाद मैंने कार्यकारिणी की एक बैठक करके जो केन्द्र खाली हो गया था, उसके लिए एक महाशय को नियुक्त किया। केन्द्र में कुछ परिवर्त्तन भी हुआ, क्योंकि सरकार के पास संयुक्त प्रान्त के सम्बन्ध में बहुत सी सूचनायें पहुँच चुकी थीं। भविष्य की कार्य-प्रणाली का निर्णय किया गया।

## कार्यकर्त्ताओं की दुर्दशा

इस समय समिति के सदस्यों की बड़ी दुर्दशा थी। चने मिलना भी कठिन था। सब पर कुछ न कुछ कर्ज़ हो गया था। किसी के पास साबित कपड़े तक न थे। कुछ विद्यार्थी बनकर धर्मक्षेत्रों तक में भोजन कर आते थे। चार-पाँच ने अपने अपने केन्द्र त्याग दिये। पाँच सौ से अधिक रुपए मैं कर्ज़ ले कर व्यय कर चुका था। यह दुर्दशा देख मुझे बड़ा कष्ट होने लगा। मुझ से भी भर पेट भोजन न किया जाता था। सहायता के लिए कुछ सहानुभूति रखने वालों का द्वार खटखटाया, किन्तु कोरा उत्तर मिला। किंकर्त्तव्यविमूढ़ था, कुछ समझ में न आता था। कोमल हृदय नवयुवक मेरे चारों ओर बैठकर कहा करते, "पंडित जी अब क्या करें ?" मैं उनके सूखे सूखे मुख देख बहुधा रो पड़ता कि स्वदेश-सेवा का व्रत लेने के कारण फकीरों से भी बुरी दशा हो रही है ! एक एक कुर्त्ता तथा धोती भी ऐसी नहीं थी जो साबित होती। लंगोट बाँधकर दिन व्यतीत

करते थे। अंगोछे पहन कर नहाते थे, एक समय क्षेत्र में भोजन करते थे, एक समय दो दो पैसे के सत्तू खाते थे। मैं पन्द्रह वर्ष से एक समय दूध पीता था। इन लोगों की यह दशा देखकर मुझे दूध पीने का साहस न होता था। मैं भी सबके साथ बैठकर सत्तू खा लेता था। मैंने विचार किया कि इतने नवयुवकों के जीवन को नष्ट करके उन्हें कहाँ भेजा जाय? जब समिति का सदस्य बनाया था, तो लोगों ने बड़ी बड़ी आशायें बँधाई थी। कईयों का पढ़ना-लिखना छुड़ाकर काम में लगा दिया था। पहले से मुझे यह हालत मालूम होती तो मैं कदापि इस प्रकार की समिति में योग न देता। बुरा फँसा! क्या करूँ कुछ समझ में ही न आता था। अन्त मे धैर्य धारण कर दृढतापूर्वक कार्य करने का निश्चय किया।

इसी बीच मे बंगाल आर्डिनेंस निकला, और गिरफ्तारियाँ हुईं। इनकी गिरफ्तारियों ने यहाँ तक असर डाला कि कार्यकर्त्ताओं मे निष्क्रियता के भाव आ गये। क्या प्रबन्ध किया जाय, कुछ निर्णय नहीं कर सके। मैंने प्रयत्न किया कि किसी तरह एक सौ रुपया मासिक का कहीं से प्रबन्ध हो जाय। प्रत्येक केन्द्र के प्रतिनिधि से हर प्रकार से प्रार्थना की थी कि समिति के सदस्यों से कुछ सहायता लें, मासिक चन्दा वसूल करें, पर किसी ने कुछ न सुनी। कुछ सज्जनो से व्यक्तिगत प्रार्थना की कि वे अपने वेतन में से कुछ मासिक दे दिया करें। किसी ने कुछ ध्यान न दिया। सदस्य रोज मेरे द्वार पर खड़े रहते थे। पत्रों की भरमार रहती थी कि कुछ धन का प्रबन्ध कीजिए, भूखों मर रहे हैं। दो एक को व्यवसाय में लगाने का भी इन्तजाम किया। दो-चार जिलों में काम बन्द कर दिया, वहाँ के कार्यकर्त्ताओं से स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि हम मासिक

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां [illegible] सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर [illegible]

शुल्क नहीं दे सकते। यदि निर्वाह का कोई दूसरा मार्ग हो, और उस ही पर निर्भर रहकर कार्य कर सकते हो तो करो। हम से जिस समय हो सकेगा देंगे, किन्तु मासिक वेतन देने के लिए हम बाध्य नहीं। कोई बीस रुपए कर्ज़ के माँगता था, कोई पचास का बिल भेजता था, और कईयों ने असन्तुष्ट होकर कार्य छोड़ दिया। मैंने भी समझ लिया ठीक ही है, पर इतना करने पर भी गुज़र न हो सकी।

## अशान्त युवक दल

कुछ महानुभावों की प्रकृति होती है कि अपनी कुछ शान जमाना या अपने आपको बड़ा दिखाना अपना कर्त्तव्य समझते हैं, जिससे भयंकर हानियाँ हो जाती हैं। भोले-भाले आदमी ऐसे मनुष्यों में विश्वास करके उनमें आशातीत साहस, योग्यता तथा कार्यदक्षता की आशा करके उन पर श्रद्धा रखते हैं। किन्तु समय आने पर यह निराशा के रूप में परिणत हो जाती है। इस प्रकार के मनुष्यों की किन्हीं कारणों वश यदि प्रतिष्ठा हो गई, अथवा अनुकूल परिस्थितियों के उपस्थित हो जाने से उन्होंने किसी उच्च कार्य में योग दे दिया, तब तो फिर वे अपने आपको बड़ा भारी कार्यकर्त्ता ज़ाहिर करते हैं। जनसाधारण भी अन्धविश्वास से उनकी बातों पर विश्वास कर लेते हैं, विशेषकर नवयुवक तो इस प्रकार के मनुष्यों के जाल में शीघ्र ही फँस जाते हैं। ऐसे ही लोग नेतागिरी की धुन में अपनी डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग पकाया करते हैं। इसी कारण पृथक पृथक दलों का निर्माण होता है। इस प्रकार के मनुष्य प्रत्येक समाज तथा प्रत्येक जाति में पाये जाते हैं। इनसे

क्रान्तिकारी दल भी मुक्त नही रह सकता। नवयुवकों का स्वभाव चंचल होता है, वे शान्त रहकर संगठित कार्य करना बड़ा दुष्कर समझते हैं। उनके हृदय मे उत्साह की उमंगे उठती हैं। वे समझते हैं दो-चार अस्त्र हाथ आये कि हमने गवर्नमेंट को नाकों चने चबवा दिए! मैं भी जब क्रान्तिकारी दल में योग देने का विचार कर रहा था, उस समय मेरी उत्कण्ठा थी कि यदि एक रिवाल्वर मिल जाय तो दस-बीस अंग्रेजो को मार दूं! इसी प्रकार के भाव मैंने कई नवयुवकों मे देखे। उनकी बड़ी प्रबल हार्दिक इच्छा होती है, कि किसी प्रकार एक रिवाल्वर या पिस्तौल उनके हाथ लग जाय तो वे उसे अपने पास रख लें। मैंने उनसे रिवाल्वर पास रखने का लाभ पूछा, तो कोई सन्तोषजनक उत्तर नही दे सके। कई युवको को मैंने इस शौक के पूरा करने मे सैंकडो रुपये बरबाद करते भी देखा है। किसी क्रान्तिकारी आन्दोलन के सदस्य नही, कोई विशेष कार्य भी नहीं, महज शौकिया रिवाल्वर पास रखेंगे! ऐसे ही थोडे से युवको का एक दल एक महोदय ने भी एकत्रित किया। ये सब बड़े सच्चरित्र, स्वाभिमानी और सच्चे कार्यकर्त्ता थे। इस दल ने विदेश से अस्त्र प्राप्त करने का बड़ा उत्तम सूत्र प्राप्त किया था, जिससे यथारुचि पर्याप्त अस्त्र मिल सकते थे। उन अस्त्रो के दाम भी अधिक न थे। अस्त्र भी पर्याप्त सख्य मे बिलकुल नये मिलते थे। यहाँ तक प्रवन्ध हो गया था कि यदि हम लोग रुपये का उचित प्रबन्ध कर देंगे, और यथा समय मूल्य निपटा दिया करेंगे, तो हम को माल उधार भी मिल जाया करेगा और हमें जब जिस प्रकार के जितनी संख्या में अस्त्रों की आवश्यकता होगी, मिल जाया करेंगे। यही नहीं, समय आने पर हम विशेष प्रकार की मशीन वाली बन्दूकें भी बनवा सकेंगे।

य हिन्दी की सब उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
से मंगावें। पता:- हिन्दी साहित्य मंदिर म.

इस समय समिति की आर्थिक अवस्था बड़ी खराब थी। इस सूत्र के हाथ लग जाने और इससे लाभ उठाने की इच्छा होने पर भी बिना रुपये के कुछ होता दिखलायी न पड़ता था। रुपये का प्रबन्ध करना नितान्त आवश्यक था; किन्तु वह हो कैसे? दान कोई देता न था, कर्ज़ भी न मिलता था, और कोई उपाय न देख डाका डालना तय हुआ। किन्तु किसी व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति (Private Property) पर डाका डालना हमें अभीष्ट न था। सोचा, यदि लूटना है तो सरकारी माल क्यों न लूटा जाय? इसी उधेड़बुन में एक दिन मैं रेल में जा रहा था। गार्ड के डब्बे के पास की गाड़ी में बैठा था। स्टेशन मास्टर एक थैली लाया, और गार्ड के डब्बे में डाल गया। कुछ खटपट की आवाज हुई। मैंने उतर कर देखा कि एक लोहे का सन्दूक रखा है। विचार किया कि इसी में थैली डाली होगी। अगले स्टेशन पर उसमें थैली डालते भी देखा। अनुमान किया कि लोहे का सन्दूक गार्ड के डब्बे में जंजीर से बँधा रहता होगा, ताला पड़ा रहता होगा, आवश्यकता होने पर ताला खोलकर उतार लेते होंगे। इसके थोड़े दिनों बाद लखनऊ स्टेशन पर जाने का अवसर प्राप्त हुआ। देखा, एक गाड़ी में से कुली लोहे के, आमदनी वाले सन्दूक उतार रहे हैं। निरीक्षण करने से मालूम हुआ कि उनमें जंजीर ताला कुछ नहीं पड़ता, यों ही रखे जाते हैं। उसी समय निश्चय किया कि इसी पर हाथ मारूँगा!

## रेलवे डकैती

उसी समय से धुन सवार हुई। तुरन्त स्थान पर जा टाइम टेबुल देखकर अनुमान किया कि सहारनपुर से गाड़ी चलती है, लखनऊ

तक अवश्य दस हजार रुपये रोज की आमदनी होती होगी। सब बातें ठीक करके कार्यकर्त्ताओं का संग्रह किया। दस नवयुवकों को लेकर विचार किया कि किसी छोटे स्टेशन पर जब गाड़ी खड़ी हो, स्टेशन के तार घर पर अधिकार कर लें, और गाड़ी का सन्दूक उतार कर तोड़ डालें, जो कुछ मिले उसे लेकर चल दें। परन्तु इस कार्य में मनुष्यों की अधिक संख्या की आवश्यकता थी। इस कारण यही निश्चय किया कि गाड़ी की जंजीर खींचकर चलती गाड़ी को खड़ा करके तब लूटा जाय। सम्भव है कि तीसरे दर्जे की जंजीर खींचने से गाड़ी न खड़ी हो, क्योंकि तीसरे दर्जे में बहुधा प्रबन्ध ठीक नहीं रहता है। इस कारण से दूसरे दर्जे की जंजीर खींचने का प्रबन्ध किया। सब लोग उसी ट्रेन में सवार थे। गाड़ी खड़ी होने पर सब उतर कर गार्ड के डब्बे के पास पहुँच गये। लोहे का सन्दूक उतार कर छेनियों से काटना चाहा, छेनियों ने काम न दिया, तब कुल्हाड़ा चला।

मुसाफिरों से कह दिया कि सब गाड़ी में चढ़ जाओ। गाड़ी का गार्ड गाड़ी में चढ़ना चाहता था, पर उसे जमीन पर लेट जाने की आज्ञा दी, ताकि बिना गार्ड की गाड़ी न जा सके। दो आदमियों को नियुक्त किया कि वे लाइन की पगडण्डी को छोड़ कर घास में खड़े होकर गाड़ी से हटे हुए गोली चलाते रहें। एक सज्जन गार्ड के डब्बे से उतरे। उनके पास भी माउज़र पिस्तौल था। विचारा कि ऐसा शुभ अवसर जाने कब हाथ आय। माउज़र पिस्तौल काहे को चलाने को मिलेगा? उमंग जो आई, सीधा करके दाग़ने लगे। मैंने जो देखा तो डाँटा, क्योंकि गोली चलाने की उनकी ड्यूटी (काम) ही न थी। फिर यदि कोई मुसाफिर कौतूहल वश बाहर को सिर

सका अच्छा प्रचार होगा।
इल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
से मंगावें। पताः–हिन्दी साहित्य मंदिर

निकाले तो उसके गोली जरूर लग जाय ! हुआ भी ऐसा ही, जो व्यक्ति रेल से उतरकर अपनी स्त्री के पास जा रहा था, मेरा ख़याल है कि इन्हीं महाशय की गोली उसके लग गई, क्योंकि जिस समय यह महाशय सन्दूक नीचे डालकर गार्ड के डब्बे से उतरे थे, केवल दो तीन फायर हुए थे। उसी समय स्त्री ने कोलाहल किया होगा और उसका पति उसके पास जा रहा था, जो उक्त महाशय की उमंग का शिकार हो गया ! मैंने यथाशक्ति पूर्ण प्रवन्ध किया था कि जब तक कोई बन्दूक लेकर सामना करने न आये, या मुकाबले में गोली न चले तब तक किसी आदमी पर फायर न होने पाय। मैं नर-हत्या कराके डकैती को भीषण रूप देना नहीं चाहता था। फिर भी मेरा कहा न मानकर अपना काम छोड़ गोली चला देने का यह परिणाम हुआ ! गोली चलाने की ड्यूटी जिनको मैंने दी थी वे बड़े दक्ष तथा अनुभवी मनुष्य थे, उनसे भूल होना असम्भव है। उन लोगों को मैंने देखा कि वे अपने स्थान से पाँच मिनट बाद पाँच फायर करते थे। यही मेरा आदेश था।

सन्दूक तोड़ तीन गठरियाँ में थैलियाँ बाँधी। सबसे कई बार कहा—देख लो कोई सामान रह तो नहीं गया। इस पर भी एक महाशय चद्दर डाल आये ! रास्ते में थैलियों से रुपया निकाल कर गठरी बाँधी और उसी समय लखनऊ शहर में जा पहुँचे। किसी ने पूछा भी नहीं, कौन हो, कहाँ से आये हो ? इस प्रकार दस आदमियों ने एक गाड़ी को रोक कर लूट लिया। उस गाड़ी में चौदह मनुष्य ऐसे थे, जिनके पास बन्दूक या रायफलें थीं। दो अंग्रेज सशस्त्र फौजी जवान भी थे, पर सब शान्त रहे। ड्राइवर महाशय तथा एक इंजीनियर महाशय दोनों का बुरा हाल था। वे दोनों अंग्रेज थे।

ड्राइवर महाशय इंजन में लेट रहे। इंजीनियर महाशय पाखाने में जा छिपे! हमने कह दिया था कि मुसाफिरों से न बोलेंगे, सरकार का माल लूटेंगे। इस कारण मुसाफिर भी शान्तिपूर्वक बैठे रहे। समझे तीस-चालीस आदमियों ने गाड़ी को चारों ओर से घेर लिया है। केवल दस युवकों ने इतना बड़ा आतंक फैला दिया! साधारणतः, इस बात पर बहुत से मनुष्य विश्वास करने में भी संकोच करेंगे कि दस नवयुवकों ने गाड़ी खड़ी करके लूट ली। जो भी हो बात वास्तव में यही थी। इन दस कार्यकर्त्ताओं में अधिकतर तो ऐसे थे जो आयु में सिर्फ लगभग बाईस वर्ष के होंगे, और जो शरीर से बड़े पुष्ट भी न थे। इस सफलता को देखकर मेरा साहस बहुत बढ़ गया। मेरा जो विचार था, वह अक्षरशः सत्य सिद्ध हुआ। पुलिस वालों की वीरता का मुझे अन्दाज़ा था। इस घटना से भविष्य के कार्य की बहुत बड़ी आशा बंध गई। नवयुवकों का भी उत्साह बढ़ गया। जितना कर्ज़ा था निपटा दिया। अस्त्रों की खरीद के लिए लगभग एक हज़ार रुपये भेज दिये। प्रत्येक केन्द्र के कार्यकर्ता को यथा-स्थान भेज कर दूसरे प्रान्तों में भी कार्य विस्तार करने का निर्णय करके कुछ प्रबन्ध किया। एक युवक दल ने बम बनाने का प्रबन्ध किया, मुझ से भी सहायता चाही। मैंने आर्थिक सहायता देकर अपना एक सदस्य भेजने का वचन दिया। किन्तु कुछ त्रुटियाँ हुई, जिससे सम्पूर्ण दल अस्त-व्यस्त हो गया।

मैं इस विषय में कुछ भी न जान सका कि दूसरे देश के क्रान्तिकारियों ने प्रारम्भिक अवस्था में हम लोगों की भाँति प्रयत्न किया या नहीं। यदि पर्याप्त अनुभव होता तो इतनी साधारण भूलें न करते। त्रुटियों के होते हुए भी कुछ भी न बिगड़ता और न कुछ

इसका अच्छा प्रचार होगा।
ाहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

भेद खुलता, न इस अवस्था को पहुँचते, क्योंकि मैंने जो संगठन किया था उसमें किसी ओर से मुझे कोई कमज़ोरी न दिखाई देती थी। कोई भी किसी प्रकार की त्रुटि न समझ सकता था। इसी कारण आँख बन्द किये बैठे रहे। किन्तु आस्तीन में साँप छिपा हुआ था, ऐसा गहरा मुँह मारा कि चारों खाने चित्त कर दिया!

> **जिन्हें हम हार समझे थे गला अपना सजाने को,**
> **वही अब नाग बन बैठे हमारे काट खाने को!**

नवयुवकों में आपस की होड़ के कारण बहुत वितण्डा तथा कलह भी हो जाती थी, जो भयंकर रूप धारण कर लेती। मेरे पास जब मामला आता तो मैं प्रेमपूर्वक समिति की दशा का अवलोकन कराके, सबको शान्त कर देता। कभी नेतृत्व को लेकर वाद-विवाद चल जाता। एक केन्द्र के निरीक्षक से वहाँ के कार्यकर्त्ता अत्यन्त असंतुष्ट थे। क्योंकि निरीक्षक से अनुभवहीनता के कारण कुछ भूलें हो गई थीं। यह अवस्था देख मुझे बड़ा खेद तथा आश्चर्य हुआ, क्योंकि नेतागीरी का भूत सबसे भयानक होता है। जिस समय से यह भूत खोपड़ी पर सवार होता है, उसी समय से सब काम चौपट हो जाता है। केवल एक दूसरे के दोष देखने में समय व्यतीत होता है और वैमनस्य बढ़ कर बड़े भयंकर परिणामों का उत्पादक होता है। इस प्रकार के समाचार सुन मैंने सबको एकत्रित कर खूब फटकारा। सब अपनी त्रुटि समझ कर पछताये और प्रीतिपूर्वक आपस में मिलकर कार्य करने लगे। पर ऐसी अवस्था हो गई थी कि दलबन्दी की नौबत आ गई थी। इस प्रकार से तो दलबन्दी हो ही गई थी। पर मुझ पर सब की श्रद्धा थी और मेरे वक्तव्य को

सब मान लेते थे। सब कुछ होने पर भी मुझे किसी ओर से किसी प्रकार का सन्देह न था। किन्तु परमात्मा को ऐसा ही स्वीकार था, जो इस अवस्था का दर्शन करना पड़ा।

### गिरफ्तारी

काकोरी डकैती होने के बाद से ही पुलिस बहुत सचेत हुई। बड़े जोरों के साथ जांच आरम्भ हो गई। शाहजहाँपुर में कुछ नई मूर्तियों के दर्शन हुए। पुलिस के कुछ विशेष सदस्य मुझ से भी मिले। चारो ओर शहर मे यही चर्चा थी कि रेलवे डकैती किसने कर ली? उन्ही दिनो शहर मे डकैती के एक दो नोट निकल आये, अब तो पुलिस का अनुसंधान और भी बढ़ने लगा। कई मित्रो ने मुझसे कहा भी कि सतर्क रहो। दो एक सज्जन ने निश्चितरूपेण समाचार दिया कि मेरी गिरफ्तारी जरूर हो जायगी। मेरी समझ में कुछ न आया। मैंने विचार किया कि यदि गिरफ्तारी हो भी गई तो पुलिस को मेरे विरुद्ध कुछ भी प्रमाण न मिल सकेगा। अपनी बुद्धिमत्ता पर कुछ अधिक विश्वास था। अपनी बुद्धि के सामने दूसरों की बुद्धि को तुच्छ समझता था। कुछ यह भी विचार था कि देश की सहानुभूति की परीक्षा की जाय। जिस देश पर हम अपना बलिदान देने को उपस्थित हैं, उस देश के वासी हमारे साथ कितनी सहानुभूति रखते हैं? कुछ जेल का अनुभव भी प्राप्त करना था। वास्तव में, मैं काम करते करते थक गया था। भविष्य के कार्यों में अधिक नर-हत्या का ध्यान करके मै हतबुद्धि-सा हो गया था। मैंने किसी के कहने की कोई भी चिन्ता न की।

रात्रि के समय ग्यारह बजे के लगभग एक मित्र के यहाँ से अपने घर पर गया। रास्ते में खुफ़िया पुलिस के सिपाहियो से भेंट

...कि इसका अच्छा प्रचार होगा।
व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर प्र...

हुई। कुछ विशेष रूप से उस समय भी वे मेरी देखभाल कर रहे थे। मैंने कोई चिन्ता न की और घर पर जाकर सो गया। प्रातःकाल चार बजने पर जगा, शौचादि से निवृत्त होने पर बाहर द्वार पर बन्दूक के कुन्दों का शब्द सुनाई दिया। मैं समझ गया कि पुलिस आ गई है। मैं तुरन्त ही द्वार खोलकर बाहर गया। एक पुलिस अफसर ने बढ़कर हाथ पकड़ लिया। में गिरफ्तार हो गया। मैं केवल एक अँगोछा पहने हुए था। पुलिस वाले को अधिक भय न था। पूछा यदि घर में कोई अस्त्र हों, तो दे दीजिए। मैंने कहा कोई आपत्तिजनक वस्तु घर में नहीं। उन्होंने बड़ी सज्जनता की। मेरे हथकड़ी इत्यादि कुछ न डाली। मकान की तलाशी लेते समय एक पत्र मिल गया, जो मेरी जेब में था। कुछ होनहार कि तीन चार पत्र मैंने लिखे थे। डाकखाने में डालने को भेजे, तब तक डाक निकल चुकी थी। मैंने वे सब इस खयाल से अपने पास ही रख लिये कि डाक के बम्बे में डाल दूँगा। फिर विचार किया जैसे बम्बे में पड़े रहेंगे, वैसे जेब में पड़े हैं। मैं उन पत्रों को वापस घर ले आया। उन्हीं में एक पत्र आपत्तिजनक था, जो पुलिस के हाथ लग गया। गिरफ्तार होकर पुलिस कोतवाली पहुँचा। वहाँ पर एक खुफ़िया पुलिस के अफ़सर से भेंट हुई। उस समय उन्होंने कुछ ऐसी बातें कीं, जिन्हें मैं या एक व्यक्ति और जानता था। कोई तीसरा व्यक्ति इस प्रकार से ब्यौरेवार नहीं जान सकता था। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। किन्तु सन्देह इस कारण न हो सका कि मैं दूसरे व्यक्ति के कार्यों पर अपने शरीर के समान ही विश्वास रखता था। शाहजहाँपुर में जिन जिन व्यक्तियों की गिरफ्तारी हुई, वह भी बड़ी आश्चर्यजनक प्रतीत होती थी। जिन पर कोई सन्देह भी न करता था, पुलिस उन्हें

कैसे जान गई ? दूसरे स्थानों पर क्या हुआ, कुछ भी न मालूम हो सका। जेल पहुँच जाने पर मैं थोडा बहुत अनुमान कर सका, कि सम्भवत: दूसरे स्थानों में भी गिरफ्तारियाँ हुई होंगी। गिरफ्तारियों के समाचार सुनकर शहर के सभी मित्र भयभीत हो गये। किसी से इतना भी न हो सका कि जेल मे हम लोगों के पास समाचार भेजने का प्रबन्ध कर देता !

## जेल

जेल मे पहुँचते ही खुफिया पुलिस वालों ने यह प्रबन्ध कराया कि हम सब एक दूसरे से अलग रखे जायें, किन्तु फिर भी एक दूसरे से बातचीत हो जाती थी। यदि साधारण कैदियों के साथ रखते तब तो बातचीत का पूर्ण प्रबन्ध हो जाता, इस कारण से सबको अलग-अलग तनहाई की कोठरियों मे बन्द किया गया। यही प्रबन्ध दूसरे जिले की जेलों मे भी, जहाँ जहाँ भी इस सम्बन्ध मे गिरफ्तारियाँ हुई थीं, किया गया था। अलग-अलग रखने से पुलिस को यह सुविधा होती है कि प्रत्येक से पृथक-पृथक मिलकर बातचीत करते हैं। कुछ भय दिखाते हैं, कुछ इधर-उधर की बातें करके भेद जानने का प्रयत्न करते हैं। अनुभवी लोग तो पुलिस वालो से मिलने से इन्कार ही कर देते है। क्योंकि उनसे मिलकर हानि के अतिरिक्त लाभ कुछ भी नही होता। कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो समाचार जानने के लिए कुछ बातचीत करते हैं। पुलिस वालों से मिलना ही क्या है। वे तो चालबाजी से बात निकालने की रोटी ही खाते हैं। उनका जीवन इसी प्रकार की बातों में व्यतीत होता है। नवयुवक दुनियादारी क्या जानें ? न वे इस प्रकार की बातें ही बना सकते हैं।

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
में। पता:–हिन्दी साहित्य मंदिर

जब किसी तरह कुछ समाचार ही न मिलते तब तो बहुत जी घबड़ाता। यही पता नहीं चलता कि पुलिस क्या कर रही है, भाग्य का क्या निर्णय होगा ? जितना समय व्यतीत होता जाता था उतनी ही चिन्ता बढ़ती जाती थी। जेल अधिकारियों से मिलकर पुलिस यह भी प्रबन्ध करा देती है कि मुलाकात करने वालों से घर के सम्बन्ध में बातचीत करें, मुकदमें के सम्बन्ध में कोई बातचीत न करें। सुविधा के लिए सबसे प्रथम यह परमावश्यक है कि एक विश्वास पात्र वकील किया जाय जो यथा समय आकर बातचीत कर सके। वकील के लिए किसी प्रकार की रुकावट नहीं हो सक्ती। वकील के साथ अभियुक्त की जो बातें होती हैं, उनको कोई दूसरा सुन नहीं सकता। क्योंकि इस प्रकार का कानून है, यह अनुभव बाद में हुआ। गिरफ्तारी के बाद शाहजहाँपुर के वकीलों से मिलना भी चाहा, किन्तु शाहजहाँपुर में ऐसे दब्बू वकील रहते हैं, जो सरकार के विरुद्ध मुकदमे में सहायता देने में हिचकते हैं।

मुझसे खुफ़िया पुलिस के कप्तान साहब मिले। थोड़ी सी बातें करके अपनी इच्छा प्रकट की कि मुझे सरकारी गवाह बनाना चाहते हैं। थोड़े दिनों में एक मित्र ने भयभीत होकर, कि कहीं वह भी न पकड़ा जाय, बनारसीलाल से भेंट की और समझा-बुझा-कर उसे सरकारी गवाह बना दिया। बनारसीलाल बहुत घबराता था कि कौन सहायता देगा, सज़ा जरूर हो जायगी। यदि किसी वकील से मिल लिया होता तो उसका धैर्य न टूटता। पं० हरकरननाथ शाहजहाँपुर आये, जिस समय वह अभियुक्त श्रीयुत प्रेम कृष्ण खन्ना से मिले, उस समय अभियुक्त ने पं० हरकरननाथ से बहुत कुछ कहा कि मुझसे तथा दूसरे अभियुक्तों से मिल लें। यदि

वह कहा मान जाते और मिल लेते तो बनारसीलाल को साहस हो जाता और वह डटा रहता। उसी रात्रि को पहले एक पुलिस इन्सपेक्टर बनारसीलाल से मिले। फिर जब मैं सो गया तब बनारसीलाल को निकाल कर ले गये। प्रातःकाल पाँच बजे के करीब, जब बनारसीलाल की कोठरी में से कुछ शब्द न सुनाई दिया, तो मैंने बनारसीलाल को पुकारा। पहरे पर जो कैदी था, उससे मालूम हुआ, बनारसीलाल बयान दे चुके! बनारसीलाल के सम्बन्ध में सब मित्रों ने कहा था कि इससे अवश्य धोखा होगा, पर मेरी बुद्धि में कुछ न समाया था। प्रत्येक जानकार ने बनारसीलाल के सम्बन्ध में यही भविष्यवाणी की थी कि वह आपत्ति पड़ने पर अटल न रह सकेगा। इस कारण सबने उसे किसी प्रकार के गुप्त कार्य में लेने की मनाही की थी। अब तो जो होना था सो हो ही गया।

थोड़े दिनों बाद जिला कलेक्टर मिले। कहने लगे फाँसी हो जायगी। बचना हो तो बयान दे दो। मैंने कुछ उत्तर न दिया। तत्पश्चात् खुफ़िया पुलिस के कप्तान साहब मिले, बहुत-सी बातें कीं। कई कागज दिखलाये। मैंने कुछ-कुछ अन्दाज़ा लगाया कि कितनी दूर तक ये लोग पहुँच गये हैं। मैंने कुछ बातें बनाईं, ताकि पुलिस का ध्यान दूसरी ओर चला जाय, परन्तु उन्हें तो विश्वसनीय सूत्र हाथ लग चुका था, वे बनावटी बातों पर क्यों विश्वास करते? अन्त में उन्होंने अपनी यह इच्छा प्रकट की कि यदि मैं बंगाल का सम्बन्ध बताकर कुछ बोलशेविक सम्बन्ध के विषय में अपना बयान दे दूँ, तो वे मुझे थोड़ी-सी सज़ा करा देंगे, और सज़ा के थोड़े दिनों बाद ही जेल से निकालकर इंग्लैण्ड भेज देंगे और पन्द्रह हजार रुपये पारितोषिक भी सरकार से दिला देंगे। मैं मन-ही-मन बहुत हँसता था।

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहाँ
। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

अन्त में एक दिन फिर मुझसे जेल में मिलने को गुप्तचर विभाग के कप्तान साहब आये। मैंने अपनी कोठरी में से निकलने से ही इन्कार कर दिया। वह कोठरी पर आकर बहुत सी बातें करते रहे, अन्त में परेशान होकर चले गये।

शिनाखतें कराई गईं। पुलिस को जितने आदमी मिल सके उतने आदमी लेकर शिनाखत कराई। भाग्यवश श्री अईनुद्दीन साहब मुकदमे के मजिस्ट्रेट मुकर्रर हुए, उन्होंने जी भर के पुलिस को मदद की। शिनाख्तों में अभियुक्तों को साधारण मजिस्ट्रेटों की भाँति भी सुविधाएँ न दीं। दिखाने के लिए कागजी कार्रवाई खूब साफ रखी। जबान के बड़े मीठे थे। प्रत्येक अभियुक्त से बड़े तपाक से मिलते थे। बड़ी मीठी-मीठी बातें करते थे। सब समझते थे कि हमसे सहानुभूति रखते हैं। कोई न समझ सका कि अन्दर-ही-अन्दर घाव कर रहे हैं। इतना चालाक अफ़सर शायद ही कोई दूसरा हो। जब तक मुकदमा उनकी अदालत में रहा, किसी को कोई शिकायत का मौका ही न दिया। यदि कभी कोई बात भी हो जाती तो ऐसे ढंग से उसे टालने की कोशिश करते कि किसी को बुरा ही न लगता। बहुधा ऐसा भी हुआ कि खुली अदालत में अभियुक्तों से क्षमा तक माँगने में संकोच न किया। किन्तु कागज़ी कार्रवाई में इतने होशियार थे कि जो कुछ लिखा सदैव अभियुक्तों के विरुद्ध ! जब मामला सेशन सुपुर्द किया और आज्ञापत्र में युक्तियाँ दीं, तब सब की आँखें खुलीं कि कितना गहरा घाव मार दिया।

मुकदमा अदालत में न आया था, उसी समय रायबरेली में बनवारीलाल की गिरफ्तारी हुई। मुझे हाल मालूम हुआ। मैंने पं० हरकरननाथ से कहा कि सब काम छोड़कर सीधे रायबरेली

चारों ओर बनवारीलाल से मिलें, किन्तु उन्होंने मेरी बातों पर कुछ भी ध्यान न दिया। मुझे बनवारीलाल पर पहले से ही सन्देह था, क्योंकि उसका रहन-सहन इस प्रकार का था कि जो ठीक न था। जब दूसरे सदस्यों के साथ रहता, तब उनसे कहा करता कि मैं जिला संगठनकर्ता हूँ। मेरी गणना अधिकारियों में है। मेरी आज्ञा पालन किया करो। मेरे जूठे बर्तन मला करो। कुछ विलासिता-प्रिय भी था, प्रत्येक समय शीशा, कंघा तथा साबुन साथ रखता था। मुझे इससे भय था, किन्तु हमारे दल के एक मान्य आदमी का वह विश्वास पात्र रह चुका था। उन्होंने सैकड़ों रुपये देकर उसकी सहायता की थी। इसी कारण हम लोग भी अन्त तक उसे मासिक सहायता देते रहे थे। मैंने बहुत कुछ हाथ-पैर मारे। पर कुछ भी न चली, और जिसका मुझे भय था, वही हुआ। भाड़े का टट्टू अधिक बोझ न सम्भाल सका, उसने बयान दे दिये। जब तक वह गिरफ्तार न हुआ था कुछ सदस्यों ने इसके पास जो शस्त्र थे वे मांगे, पर उसने न दिये। जिला अफ़सर की शान में रहा। गिरफ्तार होते ही सब शान मिट्टी में मिल गई। बनवारीलाल के बयान दे देने से पुलिस का मुक़द्दमा मजबूती पकड़ गया। यदि वह अपना बयान न देता तो मुक़दमा बहुत कमजोर था। सब लोग चारों ओर से एकत्रित करके लखनऊ जिला जेल में रखे गये। थोड़े समय तक अलग-अलग रहे, किन्तु अदालत में मुक़दमा आने से पहले ही एकत्रित कर दिये गये।

मुकदमे में रुपये की जरूरत थी। अभियुक्तों के पास क्या था? उनके लिये धन-संग्रह करना कितना दुस्तर था! न जाने किस प्रकार निर्वाह करते थे। अधिकतर अभियुक्तों का कोई सम्बन्धी पैरवी भी न कर सकता था। जिस किसी के कोई था भी, वह बाल-बच्चों

साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर ...

तथा घर को सम्भालता था, या इतने समय तक घर-बार छोड़कर मुकदमा करता ? यदि चार अच्छे पैरवी करने वाले होते, तो पुलिस का तीन चौथाई मुकदमा टूट जाता । लखनऊ जैसे जनाने शहर में मुकदमा हुआ, जहाँ अदालत में कोई भी शहर का आदमी न आता था ! इतना भी तो न हुआ कि एक अच्छा प्रेस-रिपोर्टर ही रहता, जो मुकदमे की सारी कार्यवाही को, जो कुछ अदालत में होता था, प्रेस में भेजता रहता ! इण्डियन डेली टेलीग्राफ वालों ने कृपा की। यदि कोई अच्छा रिपोर्टर आ भी गया, और जो कुछ अदालत की कार्यवाही ठीक-ठीक प्रकाशित हुई तो पुलिस वालों ने जज साहब से मिलकर तुरन्त उस रिपोर्टर को निकलवा दिया ! जनता की कोई सहानुभूति न थी । जो पुलिस के जी में आया, करती रही । इन सारी बातों को देखकर जज का साहस बढ़ गया । उसने जैसा जी चाहा सब कुछ किया । अभियुक्त चिल्लाये—'हाय ! हाय !' पर कुछ भी सुनवाई न हुई ! और बातें तो दूर, श्रीयुत दामोदर स्वरूप सेठ को पुलिस ने जेल में सड़ा डाला । लगभग एक वर्ष तक वे जेल में तड़पते रहे । एक सौ पाउण्ड से केवल ६६ पाउण्ड वज़न रह गया । कई बार जेल में मरणासन्न हो गये । नित्य बेहोशी आ जाती थी । लगभग दस मास तक कुछ भी भोजन न कर सके । जो कुछ छटांक दो छटांक दूध किसी प्रकार पेट में पहुँच जाता था, उससे इस प्रकार की विकट वेदना होती थी कि कोई उनके पास खड़े होकर उस छटपटाने के दृश्य को देख न सकता था । एक मैडिकल बोर्ड बनाया गया, जिसमें तीन डाक्टर थे । उनकी कुछ समझ में न आया, तो कह दिया गया कि सेठ जी को कोई बीमारी ही नहीं है ! जब से काकोरी षड्यन्त्र के अभियुक्त जेल में एक साथ रहने लगे, तभी से

उनमें एक अद्भुत परिवर्तन का समावेश हुआ, जिसका अवलोकन कर मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। जेल में सबसे बड़ी बात तो यह थी कि प्रत्येक आदमी अपनी नेतागीरी की दुहाई देता था। कोई भी बड़े छोटे का भेद न रहा। बड़े तथा अनुभवी पुरुषों की बातों की अवहेलना होने लगी। अनुशासन का नाम भी न रहा। बहुधा उलटे जवाब मिलने लगे। छोटी-छोटी बातों पर मतभेद हो जाता। इस प्रकार का मतभेद कभी-कभी वैमनस्य तक का रूप धारण कर लेता। आपस में झगड़ा भी हो जाता। खैर! जहाँ चार बर्तन रहते हैं, वहाँ खटकते ही हैं। ये लोग भी मनुष्य देहधारी थे। परन्तु लीडरी की धुन ने पार्टीबन्दी का अखाड़ा पैदा कर दिया। जो युवक जेल के बाहर आने से बड़ों की आज्ञा को वेद-वाक्य के समान मानते थे, वे ही उन लोगों का तिरस्कार तक करने लगे! इसी प्रकार आपस का वाद-विवाद कभी-कभी भयंकर रूप धारण कर लिया करता। प्रान्तीय प्रश्न छिड़ जाता। बंगाली तथा संयुक्त प्रान्तवासियों के कार्य की आलोचना होने लगती। इसमें कोई सन्देह नहीं कि बंगाल ने क्रान्तिकारी-आन्दोलन में दूसरे प्रान्तों से अधिक कार्य किया है, किन्तु बंगालियों की हालत यह है कि जिस किसी कार्यालय या दफ्तर में एक भी बंगाली पहुँच जायगा, थोड़े ही दिनों में ही उस कार्यालय या दफ्तर में बंगाली ही बंगाली दिखाई देंगे! जिस शहर में बंगाली रहते हैं उनकी बस्ती अलग ही बसती है। बोली भी अलग। खानपान भी अलग। यही सब जेल में अनुभव हुआ।

जिन महानुभावों को मैं त्याग की मूर्ति समझता था, उनके अन्दर भी बंगालीपने का भाव देखा। मैंने जेल से बाहर कभी स्वप्न

सस्ता-सा हृदय-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

में भी यह विचार न किया था कि क्रान्तिकारी दल के सदस्यों में भी प्रान्तीय भावों का समावेश होगा। मैं तो यही समझता रहा कि क्रान्तिकारी तो समस्त भारतवर्ष को स्वतन्त्र करने का प्रयत्न कर रहे हैं, उनको किसी प्रान्त विशेष से क्या सम्बन्ध ? परन्तु साक्षात् देख लिया कि प्रत्येक बंगाली के दिमाग में कविवर रवीन्द्रनाथ का गीत 'आमार सोनार बांगला, आमि तोमाके भालोवासी' (मेरे सोने का बंगाल, मैं तुझ से मुहब्बत करता हूँ) ठूँस-ठूँस कर भरा था, जिसका उनके नैमित्तिक जीवन में पग-पग पर प्रकाश होता था। अनेक प्रयत्न करने पर भी जेल के बाहर इस प्रकार का अनुभव कदापि न प्राप्त हो सकता था।

बड़ी भयंकर से भयंकर आपत्ति में भी मेरे मुख से आह न निकली, प्रिय सहोदर का देहान्त होने पर भी आँख से आँसू न गिरा, किन्तु इस दल के कुछ व्यक्ति ऐसे थे, जिनकी आज्ञा को मैं संसार में सबसे श्रेष्ठ मानता था, जिनकी ज़रा-सी कड़ी दृष्टि भी मैं सहन न कर सकता था, जिनके कटु वचनों के कारण मेरे हृदय पर चोट लगती थी, और अश्रुओं का श्रोत उबल पड़ता था। मेरी इस अवस्था को देखकर दो-चार मित्रों को जो मेरी प्रकृति को जानते थे बड़ा आश्चर्य होता था। लिखते हुए हृदय कम्पित होता है कि उन्हीं सज्जनों में बंगाली तथा अबंगाली का भाव इस प्रकार भरा था कि बंगालियों की बड़ी-से-बड़ी भूल, हठधर्मी तथा भीरुता की अवहेलना की गई। यह देखकर अन्य पुरुषों का साहस बढ़ता था, नित्य नई चालें चली जाती थीं। आपस में ही एक दूसरे के विरुद्ध षड्यंत्र रचे जाते थे ! बंगालियों का न्याय-अन्याय सब सहन कर

लिया जाता था। इन सारी बातों ने मेरे हृदय को टूक-टूक कर डाला। सब कृत्यों को देख मैं मन-ही-मन घुटा करता।

एक बार विचार हुआ कि सरकार से समझौता कर लिया जाय। बैरिस्टर साहब ने खुफ़िया पुलिस के कप्तान से परामर्श आरम्भ किया। किन्तु यह सोचकर कि इससे क्रान्तिकारी दल की निष्ठा न मिट जाय, यह विचार छोड़ दिया गया। युवक वृन्द की सम्मति हुई कि अनशन व्रत करके सरकार से हवालाती की हालत में ही माँगें पूरी करा ली जाएँ क्योंकि लम्बी-लम्बी सजायें होंगी। संयुक्त प्रान्त की जेलों मे साधारण कैदियों का भोजन खाते हुए सज़ा काटकर जेल से ज़िन्दा निकलना कोई सरल कार्य नहीं। जितने राजनैतिक कैदी षड्यन्त्रों के सम्बन्ध में सज़ा पाकर इस प्रान्त के जेलों में रखे गये, उनमें से पाँच-छः महात्माओं ने इस प्रान्त के जेलों के व्यवहार के कारण ही जेलों में प्राण त्याग दिये!

इस विचार के अनुसार काकोरी के लगभग सब हवालातियों ने अनशन व्रत आरम्भ कर दिया। दूसरे ही दिन सब पृथक कर दिये गये। कुछ व्यक्ति डिस्ट्रिक्ट जेल में रखे गये, कुछ सेण्ट्रल जेल भेजे गये। अनशन करते पन्द्रह दिवस व्यतीत हो गये, तब सरकार के कान पर भी जूँ रेंगी। उधर सरकार का काफी नुकसान हो रहा था। जज साहब तथा दूसरे कचहरी के कार्यकर्ताओं को घर बैठे वेतन देना पड़ता था। सरकार को स्वयं चिन्ता थी कि किसी प्रकार अनशन छूटे। जेल-अधिकारियों ने पहले आठ आने रोज़ तै किये। मैंने उस समझौते को अस्वीकार कर दिया और बड़ी कठिनता से दस आने रोज़ पर ले आया। उस अनशन व्रत में पन्द्रह दिवस तक मैंने जल पीकर निर्वाह किया था। सोलहवें दिन नाक से दूध

सस्ता-साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर प्र॰

पिलाया गया था। श्रीयुत रोशनसिंह जी ने भी इसी प्रकार मेरा साथ दिया था। वे पन्द्रह दिन तक बराबर चलते-फिरते रहे थे। स्नानादि करके अपने नैमित्तिक कर्म भी कर लिया करते थे। दस दिन तक तो मेरे मुख को देखकर अनजान पुरुष यह अनुमान भी नहीं कर सकता था कि मैं अन्न नहीं खाता।

समझौते के जिन खुफ़िया पुलिस के अधिकारियों से मुख्य नेता महोदय का वार्तालाप बहुधा एकान्त में हुआ करता था, समझौते की बात खतम हो जाने पर भी आप उन लोगों से मिलते रहे! मैंने कुछ विशेष ध्यान न दिया। यदा-कदा दो एक बात से पता चलता कि समझौते के अतिरिक्त कुछ दूसरी भी बातें होती हैं। मैंने इच्छा प्रकट की कि मैं भी एक समय सी० आई० डी० के कप्तान से मिलूँ, क्योंकि मुझ से पुलिस बहुत असन्तुष्ट थी। मुझे पुलिस से न मिलने दिया गया। परिणामस्वरूप सी० आई० डी० वाले मेरे पूरे दुश्मन हो गये। सब मेरे व्यवहार की ही शिकायत किया करते। पुलिस अधिकारियों से बातचीत करके मुख्य नेता महोदय को कुछ आशा बँध गई। आपका जेल से निकलने का उत्साह जाता रहा। जेल से निकलने के उद्योग में जो उत्साह था, वह बहुत ढीला हो गया। नवयुवकों की श्रद्धा को मुझ से हटाने के लिए अनेकों प्रकार की बातें की जाने लगीं! मुख्य नेता महोदय ने स्वयं कुछ कार्यकर्त्ताओं से मेरे सम्बन्ध में कहा कि ये कुछ रुपये खा गये। मैंने एक-एक पैसे का हिसाब रखा था। जैसे ही मैंने इस प्रकार की बातें सुनीं, मैंने कार्यकारिणी के सदस्यों के सामने रखकर हिसाब देना चाहा, और अपने विरुद्ध आपेक्ष करने वाले को दण्ड देने का प्रस्ताव उपस्थित किया। अब तो बंगालियों का साहस

न हुआ कि मुझसे हिसाब समझें। मेरे आचरण पर भी आक्षेप किये गये !

जिस दिन सफाई की बहस मैंने समाप्त की, सरकारी वकील ने उठकर मुक्त कण्ठ से मेरी बहस की प्रशंसा की कि सैंकड़ों वकीलों से अच्छी बहस की। मैंने नमस्कार कर उत्तर दिया कि आपके चरणों की कृपा है, क्योंकि इस मुकदमे के पहले मैंने किसी अदालत में समय न व्यतीत किया था, सरकारी तथा सफाई के वकीलों की जिरह को सुनकर मैंने भी साहस किया था। इसके बाद सबसे पहले मुख्य नेता महाशय के विषय मे सरकारी वकील ने बहस करनी शुरू की। खूब ही आड़े हाथों लिया। अब तो मुख्य नेता महाशय का बुरा हाल था, क्योंकि उन्हे आशा थी कि सम्भव है सबूत की कमी से वे छूट जाएँ या अधिक से अधिक पाँच या दस वर्ष की सजा हो जाय। आखिर चैन न पड़ी। सी० आई० डी० अफसरों को बुलाकर जेल में उनसे एकान्त मे डेढ घण्टे तक बातें हुईं। युवक मण्डल को इसका पता चला। सब मिलकर मेरे पास आये। कहने लगे, इस समय सी० आई० डी० अफसर से क्यों मुलाकात की जा रही है ? मेरी जिज्ञासा पर उत्तर मिला कि सजा होने के बाद जेल मे क्या व्यवहार होगा, इस सम्बन्ध मे बातचीत कर रहे हैं। मुझे सन्तोष न हुआ। दो या तीन दिन बाद मुख्य नेता महाशय एकान्त में बैठकर कई घण्टे तक कुछ लिखते रहे। लिखकर कागज जेब में रख भोजन करने गये। मेरी अन्तरात्मा ने कहा 'उठ, देख तो क्या हो रहा है ?' मैंने जेब से कागज निकालकर पढ़े। पढ़कर शोक तथा आश्चर्य की सीमा न रही। पुलिस द्वारा सरकार को क्षमा-प्रार्थना भेजी जा रही थी। भविष्य के लिये किसी प्रकार के हिंसात्मक आन्दोलन या,

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

कार्य में भाग न लेने की प्रतिज्ञा की गई थी। Undertaking दी गई थी। मैंने मुख्य कार्यकर्त्ताओं से सब विवरण कहकर इस सब का कारण पूछा, कि क्या हम लोग इस योग्य भी नहीं रहे, जो हमसे किसी प्रकार का परामर्श किया जाय ? तब उत्तर मिला कि व्यक्तिगत बात थी। मैंने बड़े जोर के साथ विरोध किया कि यह कदापि व्यक्तिगत बात नहीं हो सकती। खूब फटकार बतलाई। मेरी बातों को सुन चारों ओर खलबली पड़ी। मुझे बड़ा क्रोध आया कि कितनी धूर्तता से काम लिया गया। मुझे चारों ओर से चढ़ाकर लड़ने के लिये प्रस्तुत किया गया। मेरे विरुद्ध षड्यंत्र रचे गये। मेरे ऊपर अनुचित आक्षेप किये गए, नवयुवकों के जीवन का भार लेकर लीडरी की शान झाड़ी गई, और थोड़ी सी आपत्ति पड़ने पर इस प्रकार बीस-बीस वर्ष के युवकों को बड़ी-बड़ी सजायें दिला, जेल में सड़ने को डालकर स्वयं बंधेज से निकल जाने का प्रयत्न किया गया ! धिक्कार है ऐसे जीवन को ! किन्तु सोच-समझकर चुप रहा।

## अभियोग

काकोरी में रेलवे ट्रेन लुट जाने के बाद ही, पुलिस का विशेष विभाग उक्त घटना का पता लगाने के लिए तैनात किया गया। एक विशेष व्यक्ति मि० हार्टन इस विभाग के निरीक्षक थे। उन्होंने घटनास्थल तथा रेलवे पुलिस की रिपोर्टों को देखकर अनुमान किया कि सम्भव है यह कार्य क्रान्तिकारियों का हो। प्रान्त के क्रान्तिकारियों की जाँच शुरू हुई। उसी समय शाहजहाँपुर में रेलवे डकैती के तीन नोट मिले। चोरी गये नोटों की संख्या सौ से अधिक थी, जिनका मूल्य लगभग एक हजार रुपये के होगा। इनमें से लगभग सात सौ

या आठ सौ रुपये के मूल्य के नोट सीधे सरकार के खजाने में पहुँच गये। अतः सरकार नोटों के मामले को चुपचाप पी गई। ये नोट लिस्ट प्रकाशित होने से पूर्व ही सरकारी खजाने में पहुँच चुके थे। पुलिस का लिस्ट प्रकाशित करना व्यर्थ हुआ। सरकारी खजाने में से ही जनता के पास कुछ नोट लिस्ट प्रकाशित होने के पूर्व ही पहुँच गये थे, इस कारण वे जनता के पास निकल आये।

उन्हीं दिनों में जिला गुफिया पुलिस को मालूम हुआ कि मैं ८, ९ तथा १० अगस्त सन् १९२५ ई० को शाहजहाँपुर में नहीं था। अधिक जाँच होने लगी। इसी जाँच पड़ताल में पुलिस को मालूम हुआ कि गवर्मेण्ट स्कूल शाहजहाँपुर के इन्दुभूषण मित्र नामी एक विद्यार्थी के पास मेरे क्रान्तिकारी दल सम्बन्धी पत्र आते हैं, जो वह मुझे दे आता है। स्कूल के हेडमास्टर द्वारा इन्दुभूषण के पास आये हुए पत्रों की नकल करा के हार्टन साहब के पास भेजी जाती रही। इन्हीं पत्रों से हार्टन साहब को मालूम हुआ कि मेरठ में प्रान्त की क्रान्तिकारी समिति की बैठक होने वाली है। उन्होंने एक सब-इंस्पेक्टर को मेरठ अनाथालय में जहाँ पर मीटिंग होने का पता चला था, भेजा। उन्हीं दिनों हार्टन साहब को किसी विशेष सूत्र द्वारा मालूम हुआ कि शीघ्र ही कनसल में डाका डालने का प्रबन्ध क्रान्तिकारी समिति के सदस्य कर रहे हैं, और सम्भव है किसी बड़े शहर में डाकखाने की आमदनी भी लूटी जाय। हार्टन साहब को एक सूत्र से एक पत्र मिला, जो मेरे हाथ का लिखा था। इस पत्र में सितम्बर में होने वाले श्राद्ध का जिक्र था जिसकी १३ तारीख निश्चित की गई थी। पत्र में था कि दादा का श्राद्ध नं० १ पर

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तक हमारे यहां
है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर अजमेर

१३ सितम्बर को होगा, अवश्य पधारिये। मैं अनाथालय में मिलूंगा। पत्र पर 'रुद्र' के हस्ताक्षर थे।

आगामी डकैतियों को रोकने के लिये हार्टन साहब ने प्रान्त भर में २६ सितम्बर सन् १६२५ ई० को लगभग तीस मनुष्यों को गिरफ्तार किया। उन्हीं दिनों में इन्दुभूषण के पास आये हुए पत्र से पता लगा कि कुछ वस्तुएँ बनारस में किसी विद्यार्थी की कोठरी में बन्द हैं। अनुमान किया गया कि सम्भव है कि वे हथियार हों। अनुसंधान करने से हिन्दू विश्वविद्यालय के एक विद्यार्थी की कोठरी से दो राइफलें निकलीं। उस विद्यार्थी को कानपुर में गिरफ्तार किया गया। इन्दूभूषण ने मेरी गिरफ्तारी की सूचना एक पत्र द्वारा बनारस को भेजी। जिसके पास पत्र भेजा था, उसे पुलिस गिरफ्तार कर चुकी थी, क्योंकि उसी श्री रामनाथ पाण्डेय के पते का पत्र मेरी गिरफ्तारी के समय मेरे मकान से पाया गया था। रामनाथ पाण्डेय के पत्र पुलिस के पास पहुँचे थे। अतः इन्दुभूषण का पत्र देख, इन्दुभूषण को गिरफ्तार किया गया। इन्दुभूषण ने दूसरे दिन अपना बयान दे दिया। गिरफ्तार किये हुए व्यक्तियों में से कुछ से मिल मिलाकर बनारसीलाल ने भी जो शाहजहाँपुर के जेल में था, अपना बयान दे दिया और वह सरकारी गवाह बना लिया गया। यह कुछ अधिक जानता था। इसके बयान से क्रान्तिकारी पत्र के पार्सलों का पता चला। बनारस के डाकखाने से जिन जिन के पास पार्सल भेजे गये थे उनको पुलिस ने गिरफ्तार किया। कानपुर में गोपीनाथ ने जिसके नाम पार्सल गया था, गिरफ्तार होते ही पुलिस को बयान दे दिया और वह सरकारी गवाह बना लिया गया। इसी प्रकार रायबरेली में स्कूल के विद्यार्थी कुंवर बहादुर के पास पार्सल आया था, उसने

भी गिरफ्तार होते ही बयान दे दिया और सरकारी गवाह बना लिया गया। इसके पास मनीआर्डर भी आया करते थे, क्योंकि यह बनवारीलाल का पोस्ट बक्स (डाक पाने वाला) था। इसने बनवारीलाल के एक रिश्तेदार का पता बताया, जहाँ तक तलाशी लेने से बनवारीलाल का एक ट्रंक मिला। इस ट्रंक में एक कारतूसी पिस्तौल, एक कारतूसी फौजी रिवाल्वर तथा कुछ कारतूस पुलिस के हाथ लगे। श्री बनवारीलाल की खोज हुई। बनवारीलाल भी पकड़ लिये गये। गिरफ्तारी के थोड़े दिनों बाद ही पुलिस वाले मिले, उल्टा सीधा सुझाया और बनवारीलाल ने भी अपना बयान दे दिया तथा इकवाली मुलज़िम बनाये गये। श्रीयुत बनवारीलाल ने काकोरी डकैती मे अपना सम्मिलित होना बताया था। उधर कलकत्ते में दक्षिणेश्वर में एक मकान में बम बनाने का सामान, एक बना हुआ बम, ७ रिवाल्वर, पिस्तौल तथा कुछ राजद्रोही साहित्य पकड़ा गया। इसी मकान मे श्रीयुत राजेन्द्रनाथ लाहिरी बी० ए०, जो इस मुकदमे में फरार थे, गिरफ्तार हुए।

इन्दुभूषण के गिरफ्तार हो जाने के बाद उसके हेडमास्टर को एक पत्र मध्य प्रान्त से मिला, जिसे उसने हार्टन साहब के पास वैसा ही भेज दिया। इस पत्र से एक व्यक्ति 'मोहनलाल खत्री' का चान्दा में पता चला। वहाँ से पुलिस ने खोज लगाकर पूना में श्रीयुत रामकृष्ण खत्री को गिरफ्तार कर के लखनऊ भेजा। बनारस में भेजे हुए पार्सलों के सम्बन्ध में से जबलपुर में श्रीयुत प्रणवेशकुमार चटर्जी को गिरफ्तार करके भेजा गया। कलकत्ता से श्रीयुत शचीन्द्रनाथ सान्याल जिन्हें बनारस षड्यंत्र से आजन्म कालेपानी की सज़ा हुई थी और जिन्हें बाकुरा में 'क्रान्तिकारी' पर्चे

...मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तक हमारे यहां ...है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी ...

बाँटने के कारण दो वर्ष की सजा हुई थी, इस मुकदमे में लखनऊ भेजे गये। श्रीयुत योगेशचन्द्र चटर्जी बंगाल आर्डीनेंस के कैदी हजारी बाग जेल से भेजे गये। आप अक्टूबर सन् १९२४ ई० में कलकत्ते में गिरफ्तार हुए थे। आपके पास दो कागज पाये गए थे, जिनमें संयुक्त प्रान्त के सब जिलों का नाम था, और लिखा था कि बाईस जिलों में समिति का कार्य हो रहा है। ये कागज इस षड्यंत्र के सम्बन्ध के समझे गये। श्रीयुत राजेन्द्रनाथ लाहिरी दक्षिणेश्वर बम केस में दस वर्ष के दीपान्तर की सजा पाने के बाद इस मुकदमे में लखनऊ भेजे गये। अब लगभग छत्तीस मनुष्य गिरफ्तार हुए थे। अट्ठाईस पर मजिस्ट्रेट की अदालत में मुकदमा चला। तीन व्यक्ति श्रीयुत १—शचीन्द्रनाथ बख्शी, २—श्रीयुत चन्द्रशेखर आजाद ३—श्रीयुत अशफ़ाकउल्ला खाँ फरार रहे। बाकी सब मुकदमे अदालत में आने से पहले ही छोड़ दिये गये। अट्ठाईस में से दो पर से मजिस्ट्रेट की अदालत में मुकदमा उठा लिया गया। दो को सरकारी गवाह बनाकर उन्हें माफी दी गई। अन्त में मजिस्ट्रेट ने इक्कीस व्यक्तियों को सेशन सुपुर्द किया। सेशन में मुकदमा आने पर श्रीयुत दामोदरस्वरूप सेठ बहुत बीमार हो गये। अदालत न आ सकते थे, अतः अन्त में बीस व्यक्ति रह गये। बीस में से दो व्यक्ति श्रीयुत शचीन्द्रनाथ विश्वास तथा श्रीयुत हरगोविन्द सेशन की अदालत से मुक्त हुए। बाकी अट्ठारह को सजाएँ हुई।

श्री बनवारीलाल इकबाली मुलजिम हो गये। वे रायबरेली जिला काँग्रेस कमेटी के मन्त्री भी रह चुके हैं। उन्होंने असहयोग आन्दोलन में छः मास का कारावास भी भोगा था। इस पर भी पुलिस की धमकी से प्राण संकट में पड़ गये! आप ही हमारी

समिति के ऐसे सदस्य थे कि जिन पर समिति का सब से अधिक धन व्यय किया गया। प्रत्येक मास आपको पर्याप्त धन भेजा जाता था। मर्यादा की रक्षा के लिए हम लोग यथाशक्ति बनवारीलाल को मासिक शुल्क दिया करते थे। अपने पेट काटकर इनका मासिक व्यय दिया गया। फिर भी इन्होंने अपने सहायकों की गर्दन पर छुरी चलाई! अधिक से अधिक दस वर्ष की सजा हो जाती। जिस प्रकार सबूत इनके विरुद्ध था, वैसे ही, इसी प्रकार के दूसरे अभियुक्तों पर था, जिन्हें दस-दस वर्ष की सजा हुई। यही नहीं पुलिस के बहकाने से सेशन में बयान देते समय जो नई बातें इन्होंने जोड़ीं, उन में मेरे सम्बन्ध में कहा कि रामप्रसाद डकैतियों के रुपये से अपने परिवार का निर्वाह करता है। इस बात को सुनकर मुझे हँसी भी आई, पर हृदय पर बड़ा आघात लगा, कि जिनकी उदर-पूर्ति के लिये प्राणों को संकट में डाला, दिन को दिन और रात को रात न समझा, बुरी तरह से मार खाई, माता-पिता का कुछ भी ख्याल न किया, वही इस प्रकार आक्षेप करें!

समिति के सदस्यों ने इस प्रकार का व्यवहार किया। बाहर जो साधारण जीवन के सहयोगी थे, उन्होंने भी अद्भुत रूप धारण किया। एक ठाकुर साहब के पास काकोरी डकैती का नोट मिल गया था। वह कहीं शहर में आ गये थे। जब गिरफ्तारी हुई, मजिस्ट्रेट के यहाँ जमानत नामंजूर हुई, जज साहब ने चार हजार की जमानत माँगी। कोई जमानती न मिलता था। आपके वृद्ध भाई मेरे पास आये। पैरों पर सिर रखकर रोने लगे। मैंने जमानत कराने का प्रयत्न किया। मेरे माता-पिता कचहरी जाकर खुले रूप से पैरवी करने को मना करते रहे कि पुलिस खिलाफ है, रिपोर्ट

… व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहाँ हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य …

हो जायगी, पर मैंने एक न सुनी। कचहरी जाकर, कोशिश करके ज़मानत दाखिल कराई। जेल से उन्हें स्वयं जाकर छुड़ाया। पर जब मैंने उक्त महाशय का नाम उक्त घटना की गवाही देने के लिए सूचित किया, तब पुलिस ने उन्हें धमकाया और उन्होंने पुलिस को तीन बार लिख कर दे दिया कि हम रामप्रसाद को जानते भी नहीं! हिन्दू मुसलिम झगड़े में जिनके घरों की रक्षा की थी, जिनके बाल बच्चे मेरे सहारे मुहल्ले में निर्भयता से निवास करते रहे, उन्होंने ही मेरे खिलाफ झूठी गवाहियाँ बनवाकर भेजीं! कुछ मित्रों के भरोसे पर उनका नाम गवाही में दिया कि ज़रूर गवाही देंगे, संसार लौट जावे पर वे नहीं डिग सकते। पर वचन दे चुकने पर भी जब पुलिस का दबाव पड़ा, वे भी गवाही देने से इनकार कर गये! जिनको अपना हृदय, सहोदर तथा मित्र समझकर हर तरह की सेबा करने को तैयार रहता था, जिस प्रकार की आवश्यकता होती यथाशक्ति उसको पूर्ण करने की प्राणपण से चेष्टा करता था, उनसे इतना भी न हुआ कि कभी जेल पर आकर दर्शन दे जाते, फाँसी की कोठरी में ही आकर संतोषदायक दो बातें कर जाते! एक दो सज्जनों ने इतनी कृपा तथा साहस किया कि दस मिनट के लिये अदालत में दूर खड़े होकर दर्शन दे गये। यह सब इसलिए कि पुलिस का आतंक छाया हुआ था कि कहीं गिरफ्तार न कर लिये जायें। इस पर भी जिसने जो कुछ किया मैं उसी को अपना सौभाग्य समझता हूँ, और उनका आभारी हूँ—

वह फूल चढ़ाते हैं, तुर्बत भी दबी जाती।<br>
माशूक के थोड़े से भी एहसान बहुत हैं॥

परमात्मा से यही प्रार्थना है कि सब प्रसन्न तथा सुखी रहें। मैंने तो सब बातों को जानकर ही इस मार्ग में पैर रखा था। मुकदमे के पहले संसार का कोई अनुभव ही न था। न कभी जेल देखा, न किसी अदालत का कोई तजर्बा था। जेल में आकर मालूम हुआ कि किसी नई दुनिया में पहुँच गया। मुकदमे से पहले मैं यह भी न जानता था, कि कोई लेखन-कला-विज्ञान भी है, इसका भी कोई दक्ष (Hand-writing expert) भी होता है, जो लेखन शैली को देखकर लेखकों का निर्णय कर सकता है। यह भी नहीं पता था कि लेख किस प्रकार मिलाये जाते है, एक मनुष्य के लेख मे क्या भेद होता है, क्यों भेद होता है, लेखन-कला का दक्ष हस्ताक्षर को प्रमाणित कर सकता है, तथा लेखक के वास्तविक लेख मे तथा बनावटी लेख में भेद कर सकता है, इस प्रकार का कोई भी अनुभव तथा ज्ञान न रखते हुए भी एक प्रान्त की क्रान्तिकारी समिति का सम्पूर्ण भार लेकर उसका संचालन कर रहा था! बात्र यह है कि क्रान्तिकारी कार्य की शिक्षा देने के लिये कोई पाठशाला तो है ही नही। यही हो सकता था कि पुराने अनुभवी क्रान्तिकारियों से कुछ सीखा जाय। न जाने कितने व्यक्ति बंगाल तथा पंजाब के षड्यन्त्रों मे गिरफ्तार हुए, पर किसी ने भी यह उद्योग न किया कि एक इस प्रकार की पुस्तक लिखी जाय, जिससे नवागन्तुकों को कुछ अनुभव की बातें मालूम होती।

लोगों को इस बात की बड़ी उत्कण्ठा होगी कि क्या यह पुलिस का भाग्य ही था, जो सब बना बनाया मामला हाथ आ गया। क्या पुलिस वाले परोक्ष ज्ञानी होते हैं? कैसे गुप्त बातों का पता चला लेते हैं? कहना पड़ता है कि यह इस देश का दुर्भाग्य!

हृदय-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

सरकार का सौभाग्य !! बंगाल पुलिस के सम्बन्ध में तो अधिक कहा नहीं जा सकता, क्योंकि मेरा कुछ विशेषानुभव नहीं। इस प्रान्त की खुफ़िया पुलिस वाले तो महान भोंदू होते हैं, जिन्हें साधारण ज्ञान भी नहीं होता। साधारण पुलिस से खुफ़िया में आते हैं। साधारण पुलिस की दरोगाई करते हैं, मजे में लम्बी-लम्बी घूस खाकर बड़े-बड़े पेट बढ़ा आराम करते हैं। उनकी बला तकलीफ़ उठाय ! यदि कोई एक दो चालाक हुए भी तो थोड़े दिन बड़े ओहदे की फिराक में काम दिखाया, दौड़-धूप की, कुछ पद-वृद्धि हो गई और सब काम बन्द ! इस प्रान्त में कोई बाक़ायदा पुलिस का गुप्तचर विभाग नहीं, जिसको नियमित रूप से शिक्षा दी जाती हो। फिर काम करते-करते अनुभव हो ही जाता है। मैनपुरी षड्यंत्र तथा इस षड्यंत्र से इसका पूरा पता लग गया, कि थोड़ी सी कुशलता से कार्य करने पर पुलिस के लिए पता पाना बड़ा कठिन है। वास्तव में उनके कुछ भाग्य ही अच्छे होते हैं। जब से इस मुकदमे की जाँच शुरू हुई, पुलिस ने इस प्रान्त के संदिग्ध क्रान्तिकारी व्यक्तियों पर दृष्टि डाली, उनसे मिली, बातचीत की। एक दो को कुछ धमकी दी। 'चोर की दाढ़ी में तिनका', वाली जनश्रुति के अनुसार एक महाशय से पुलिस को सारा भेद मालूम हो गया। हम सबके सब चक्कर में थे कि इतनी जल्दी पुलिस ने मामले का पता कैसे-लगा लिया ! उक्त महाशय की ओर तो ध्यान भी न जा सकता था। पर गिरफ्तारी के समय मुझ से तथा पुलिस के अफसर से जो बातें हुईं, उनमें पुलिस अफसर ने वे सब बातें मुझसे कहीं जिनको मेरे तथा उक्त महाशय के अतिरिक्त कोई भी दूसरा जान ही न सकता था। और भी बड़े पक्के तथा बुद्धिगम्य प्रमाण मिल

गये, कि जिन बातों को उक्त महाशय जान सके थे, वे ही पुलिस जान सकी। जो बातें आप को मालूम न थीं, वे पुलिस को किसी प्रकार न मालूम हो सकी। उन बातों से यह निश्चय हो गया कि यह काम उन्हीं महाशय का है। यदि वे महाशय पुलिस के हाथ न आते और भेद न खोल देते, तो पुलिस सिर पटक कर रह जाती, कुछ भी पता न चलता। बिना दृढ़ प्रमाणों के भयंकर से भयंकर व्यक्ति पर भी राय रखने का साहस नहीं होता, क्योंकि जनता में आन्दोलन फैलने से बदनामी हो जाती है। सरकार पर जवाबदेही आती है। अधिक से अधिक दो चार मनुष्य पकड़े जाते, और अन्त में उन्हें भी छोड़ना पड़ता। परन्तु जब पुलिस को वास्तविक सूत्र हाथ आ गया, उसने अपनी सत्यता को प्रमाणित करने के लिए लिखा हुआ प्रमाण पुलिस को दे दिया, उस अवस्था में यदि पुलिस गिरफ्तारियाँ न करती, तो फिर कब करती? जो भी हुआ, परमात्मा उनका भी भला करे। अपना तो जीवन भर यही उसूल रहा—

बताये तुझ को जो कोई बेवफ़ा 'बिस्मिल'।
तो मुंह से कुछ न कहना आह ! कर लेना॥
हम शहीदाने वफ़ा का दीनों ईमां और है।
सिज्दे करते हैं हमेशा पांव पर जल्लाद के॥

मैंने इस अभियोग में जो भाग लिया अथवा जिनकी जिन्दगी जिम्मेदारी मेरे सिर पर थी, उनमें से ज्यादा हिस्सा श्रीयुत अशफ़ाकउल्ला खाँ वारसी का है। मैं अपनी कलम से उनके लिए भी अन्तिम समय में दो शब्द लिख देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

सस्ता-साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर ...

## अशफ़ाक

मुझे भली भाँति याद है, जब कि मैं बादशाही एलान के बाद शाहजहाँपुर आया था, तो तुमसे स्कूल में भेंट हुई थी। तुम्हारी मुझ से मिलने की बड़ी हार्दिक इच्छा थी। तुमने मुझसे मैनपुरी षड्यन्त्र के सम्बन्ध में कुछ बातचीत करनी चाही थी। मैंने यह समझकर कि एक स्कूल का मुसलमान विद्यार्थी मुझसे इस प्रकार की बातचीत क्यों करता है, तुम्हारी बातों का उत्तर उपेक्षा की दृष्टि से दे दिया था। तुम्हें उस समय बड़ा खेद हुआ था। तुम्हारे मुख से हार्दिक भावों का प्रकाश हो रहा था। तुमने अपने इरादे को यों ही नहीं छोड़ दिया, अपने निश्चय पर डटे रहे। जिस प्रकार हो सका काँग्रेस में बातचीत की। अपने इष्ट मित्रों द्वारा इस बात का विश्वास दिलाने की कोशिश की कि तुम बनावटी आदमी नहीं, तुम्हारे दिल में मुल्क की ख़िदमत करने की ख्वाहिश थी। अन्त में तुम्हारी विजय हुई। तुम्हारी कोशिशों ने मेरे दिल में जगह पैदा कर ली। तुम्हारे बड़े भाई मेरे उर्दू मिडिल के सहपाठी तथा मित्र थे, यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। थोड़े दिनों में ही तुम मेरे छोटे भाई के समान हो गये थे, किन्तु छोटे भाई बनकर तुम्हें सन्तोष न हुआ। तुम समानता के अधिकार चाहते थे, तुम मित्र की श्रेणी में अपनी गणना चाहते थे। वही हुआ। तुम सच्चे मित्र बन गये। सबको आश्चर्य था कि एक कट्टर आर्य-समाजी और मुसलमान का मेल कैसा? मैं मुसलमानों की शुद्धि करता था। आर्य-समाज मन्दिर में मेरा निवास था, किन्तु तुम इन बातों की किंचितमात्र चिन्ता न करते थे। मेरे कुछ साथी तुम्हारे मुसलमान होने के कारण कुछ

घृणा की दृष्टि से देखते थे, किन्तु तुम अपने निश्चय में दृढ़ थे। मेरे पास आर्य-समाज मन्दिर में आते-जाते थे। हिन्दू-मुसलिम झगड़ा होने पर, तुम्हारे मुहल्ले के सब कोई तुम्हें खुल्लमखुल्ला गालियाँ देते थे, काफ़िर के नाम से पुकारते थे, पर तुम कभी भी उनके विचारों से सहमत न हुए। सदैव हिन्दू-मुसलिम ऐक्य के पक्षपाती रहे। तुम एक सच्चे मुसलमान तथा सच्चे स्वदेश-भक्त थे। तुम्हें यदि जीवन में कोई विचार था, तो यही कि मुसलमानों को खुदा अक्ल देता, कि वे हिन्दुओं के साथ मिलकर के हिन्दोस्तान की भलाई करते। जब मैं हिन्दी में कोई लेख या पुस्तक लिखता तो तुम सदैव यही अनुरोध करते कि उर्दू में क्यों नहीं लिखते, जो मुसलमान भी पढ़ सकें? तुमने स्वदेशभक्ति के भावों को भली भाँति समझने के लिए ही हिन्दी का अच्छा अध्ययन किया। अपने घर पर जब माता जी तथा भ्राता जी से बातचीत करते थे, तो तुम्हारे मुँह से हिन्दी शब्द निकल जाते थे, जिससे सबको बड़ा आश्चर्य होता था।

तुम्हारी इस प्रकार की प्रवृत्ति देखकर बहुतों को सन्देह होता था, कि कहीं इस्लाम-धर्म त्याग कर शुद्धि न करा लो। पर तुम्हारा हृदय तो किसी प्रकार अशुद्ध न था, फिर तुम शुद्धि किस वस्तु की कराते? तुम्हारी इस प्रकार की प्रगति ने मेरे हृदय पर पूर्ण विजय पा ली। बहुधा मित्र मण्डली में बात छिड़ती कि कहीं मुसलमान पर विश्वास करके धोखा न खाना। तुम्हारी जीत हुई, मुझ में तुम में कोई भेद न था। बहुधा मैंने तुमने एक थाली में भोजन किए। मेरे हृदय से यह विचार ही जाता रहा कि हिन्दू-मुसलमान में कोई भेद है। तुम मुझ पर अटल विश्वास तथा अगाध प्रीति रखते थे। हाँ! तुम

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहाँ
है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर अ…

मेरा नाम लेकर नहीं पुकार सकते थे। तुम तो मुझे सदैव 'राम' कहा करते थे। एक समय जब तुम्हें हृदय-कम्प (Palpitation of heart) का दौरा हुआ, तुम अचेत थे, तुम्हारे मुँह से बारम्बार 'राम' 'हाय राम'। शब्द निकल रहे थे। पास खड़े हुए भाई बांधवों को आश्चर्य था कि 'राम' 'राम' कहता है। कहते कि 'अल्लाह' 'अल्लाह' कहो, पर तुम्हारी 'राम-राम' की रट थी! उसी समय किसी मित्र का आगमन हुआ, जो 'राम' के भेद को जानते थे। तुरन्त मैं बुलाया गया। मुझ से मिलने पर तुम्हें शान्ति हुई, तब सब लोग 'राम! राम!' के भेद को समझे!

अन्त में इस प्रेम, प्रीति तथा मित्रता का परिणाम क्या हुआ? मेरे विचारों के रंग में तुम भी रंग गये। तुम भी एक कट्टर क्रान्तिकारी बन गए। अब तो तुम्हारा दिन रात प्रयत्न यही था, कि जिस प्रकार हो मुसलमान नवयुवकों में भी क्रान्तिकारी भावों का प्रवेश हो। वे भी क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग दें। जितने तुम्हारे बन्धु तथा मित्र थे सब पर तुमने अपने विचारों का प्रभाव डालने का प्रयत्न किया। बहुधा क्रान्तिकारी सदस्यों को भी बड़ा आश्चर्य होता कि मैंने कैसे एक मुसलमान को क्रान्तिकारी दल का प्रतिष्ठित सदस्य बना लिया। मेरे साथ तुमने जो कार्य किये, वे सराहनीय हैं। तुमने कभी भी मेरी आज्ञा की अवहेलना न की। एक आज्ञाकारी भक्त के समान मेरी आज्ञा पालन में तत्पर रहते थे। तुम्हारा हृदय बड़ा विशाल था। तुम्हारे भाव बड़े उच्च थे।

मुझे यदि शान्ति है तो यही कि तुमने संसार में मेरा मुख उज्ज्वल कर दिया। भारत के इतिहास में यह घटना भी उल्लेखनीय हो गई, कि अशफ़ाकउल्ला ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग

दिया। अपने भाई बन्धु तथा सम्बन्धियों के समझाने पर कुछ भी ध्यान न दिया। गिरफ्तार हो जाने पर भी अपने विचारों में दृढ़ रहे! जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर तथा आत्मा से उच्च सिद्ध हुए। इन सबके परिणामस्वरूप अदालत में तुमको मेरा सहकारी (लेफ्टीनेण्ट) ठहराया गया, और जज ने मुकदमे का फ़ैसला लिखते समय तुम्हारे गले में जयमाल (फांसी की रस्सी) पहना दी। प्यारे भाई, तुम्हें यह समझ कर सन्तोष होगा कि जिसने अपने माता-पिता की धन-सम्पत्ति को देश-सेवा मे अर्पण करके उन्हें भिखारी बना दिया, जिसने अपने सहोदर के भावी भाग्य को भी देश सेवा की भेंट कर दिया, जिसने अपना तन-मन-धन-सर्वस्व मातृ-सेवा मे अर्पण करके अपना अन्तिम बलिदान भी दे दिया, उसने अपने प्रिय सखा अशफाक को भी उसी मातृ-भूमि की भेंट चढ़ा दिया।

'मसरुर' हरीम इश्क में हस्ती ही जुर्म है।
रखना कभी न पांव यहां सर लिये हुए॥

### फांसी की कोठरी

अन्तिम समय निकट है। दो फांसी सजाएँ सिर पर झूल रही हैं। पुलिस को साधारण जीवन मे और समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं मे खूब जी भर के कोसा है। खुली अदालत में जज साहब, खुफ़िया पुलिस के अफ़सर, मजिस्ट्रेट, सरकारी वकील तथा सरकार को खूब आड़े हाथों लिया है। हर एक के दिल में मेरी बातें चुभ रही हैं। कोई दोस्त आशना, अथवा यार-मददगार नहीं, जिसका सहारा हो। एक परम पिता परमात्मा की याद है। गीता पाठ करते हुए संतोष है कि—

सस्ता-साहित्य-महल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर ...

जो कुछ किया सो तैं किया, मैं कुछ कीन्हा नाहिं।
जहाँ कहीं कुछ मैं किया, तुम ही थे मुझ माँहि॥
ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संगं त्यक्त्वा करोति यः।
लिप्यते न स पापेभ्योः पद्मपत्रमिवाम्भसः॥

भगवद्गीता। ५।१०

'जो फल की इच्छा को त्याग करके कर्मों को ब्रह्म में अर्पण करके कर्म करता है, वह पाप से लिप्त नहीं होता। जिस प्रकार जल में रहकर भी कमल-पत्र जल में नहीं होता।' जीवन पर्यन्त जो कुछ किया, स्वदेश की भलाई समझ कर किया। यदि शरीर की पालना की तो इसी विचार से, कि सुदृढ़ शरीर से भले प्रकार स्वदेश-सेवा हो सके। बड़े प्रयत्नों से यह शुभ दिन प्राप्त हुआ। संयुक्त प्रान्त में इस तुच्छ शरीर का ही सौभाग्य होगा, जो सन् १८५७ ई० के गदर की घटनाओं के पश्चात् क्रान्तिकारी आन्दोलन के सम्बन्ध में इस प्रान्त के निवासी का पहला वलिदान मातृ-वेदी पर होगा।

सर्कार की इच्छा है कि मुझे घोट-घोट कर मारे। इसी कारण इस गरमी की ऋतु में साढ़े तीन महीने वाद अपील की तारीख नियत की गई। साढ़े तीन महीने तक फाँसी की कोठरी में भूँजा गया। यह कोठरी पक्षी के पिंजरे से भी ख़राव है। गोरखपुर जेल की फाँसी की कोठरी मैदान में वनी है। किसी प्रकार की छाया निकट नहीं। प्रातःकाल आठ वजे से रात्रि के आठ वजे तक सूर्य देवता की कृपा से तथा चारों ओर रेतीली ज़मीन होने से अग्नि-वर्षण होता रहता है। नौ फीट लम्वी तथा नौ फीट चौड़ी कोठरी में केवल छः फीट लम्वा और दो फीट चौड़ा द्वार है। पीछे

की ओर ज़मीन के आठ या नौ फीट की ऊँचाई पर, एक-दो फीट लम्बी एक फीट चौड़ी खिड़की है। इसी कोठरी में भोजन, स्नान, मल-मूत्र त्याग तथा शयनादि होता है। मच्छर अपनी मधुर ध्वनि रात भर सुनाया करते हैं। बड़े प्रयत्न से रात्रि में तीन या चार घंटे निद्रा आती है, किसी-किसी दिन एक दो घंटे ही सोकर निर्वाह करना पड़ता है। मिट्टी के पात्रों में भोजन दिया जाता है। ओढ़ने बिछाने के दो कम्बल मिले हैं। बड़े त्याग का जीवन है। साधना के सब साधन एकत्रित हैं। प्रत्येक क्षण शिक्षा दे रहा है—अन्तिम समय के लिए तैयार हो जाओ, परमात्मा का भजन करो।

मुझे तो इस कोठरी में बड़ा आनन्द आ रहा है। मेरी इच्छा थी कि किसी साधु की गुफा पर कुछ दिन निवास करके योगाभ्यास किया जाता। अन्तिम समय वह इच्छा भी पूर्ण हो गई। साधु की गुफा न मिली तो क्या, साधना की गुफा तो मिल ही गई। इसी कोठरी में यह सुयोग प्राप्त हो गया, कि अपनी कुछ अन्तिम बात लिखकर देशवासियों को अर्पण कर दूँ। सम्भव है कि मेरे जीवन के अध्ययन से किसी आत्मा का भला हो जाय। बड़ी कठिनता से यह शुभ अवसर प्राप्त हुआ।

महसूस हो रहे हैं बादे फ़ना के झोंके।  
खुलने लगे हैं मुझ पर इसरार जिन्दगी के॥  
बारे अलम उठाया रंगे निशात देखा।  
आये नहीं हैं यूं ही अन्दाज़ बेहिसी के॥  
वफ़ा पर दिल को सदके जान को नज़रे जफ़ा कर दे।  
मुहब्बत में यह लाज़िम है कि जो कुछ हो फ़िदा कर दे॥

अब तो यही इच्छा है—

साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां ... होगा। है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर अजमेर

वहे बहरे फ़ना में जल्द यारब लाश 'बिस्मिल' की।
कि भूखी मछलियाँ हैं किन्तु जौहरे शमशीर कातिल की॥
समझकर फूँकना इसको ज़रा ऐ दागे नाकामी।
बहुत से घर भी हैं आबाद इस उजड़े हुए दिल से॥

## परिणाम

ग्यारह वर्ष पर्यन्त यथाशक्ति प्राणपण से चेष्टा करने पर भी हम अपने उद्देश्य में कहाँ तक सफल हुए ? क्या लाभ हुआ ? इसका विचार करने से कुछ अधिक प्रयोजन सिद्ध न होगा, क्योंकि हमने लाभ-हानि अथवा जय-पराजय के विचार से क्रान्तिकारी दल में योग नहीं दिया था। हमने जो कुछ किया वह अपना कर्त्तव्य समझ कर किया। कर्त्तव्य-निर्णय में हमने कहाँ तक बुद्धिमत्ता से काम लिया, इसका विवेचन करना उचित जान पड़ता है। राजनैतिक दृष्टि से हमारे कार्यों का इतना ही मूल्य है कि कतिपय होनहार नवयुवकों के जीवन को कष्टमय बनाकर नीरस कर दिया, और उन्हीं में से कुछ ने व्यर्थ में जानें गँवाईं। कुछ धन भी खर्च किया। हिन्दू-शास्त्र के अनुसार किसी की अकाल मृत्यु नहीं होती, जिसका जिस विधि से जो काल होता है, वह उसी विधि समय पर ही प्राण त्याग करता है। केवल निमित्त मात्र कारण उपस्थित हो जाते हैं। लाखों भारतवासी महामारी, हैज़ा, ताऊन इत्यादि अनेक प्रकार के रोगों में मर जाते हैं। करोड़ों दुर्भिक्ष में अन्न बिना प्राण त्यागते हैं, तो उसका उत्तरदायित्व किस पर है ? रह गया धन का व्यय, सो इतना धन तो भले आदमियों के विवाहोत्सवों में व्यय हो जाता है। गण्यमान व्यक्तियों की तो केवल विलासिता की सामग्री का मासिक व्यय इतना होगा, जितना कि हमने एक षड्यन्त्र के निर्माण में व्यय

किया। हम लोगों को डाकू बता कर फांसी और काले पानी की सज़ायें दी गई हैं। किन्तु हम समझते हैं कि वकील और डाक्टर हमसे कहीं बड़े डाकू हैं। वकील डाक्टर दिन दहाड़े बड़े-बड़े तालुकेदारों की जायदादें लूट कर खा गए। वकीलों के चाटे हुए अवध के ताल्लुकेदारों को ढूंढे रास्ता भी नहीं दिखाई देता, और वकीलों की ऊँची अट्टालिकायें उन पर खिलखिला कर हँस रही हैं! इसी प्रकार लखनऊ में डाक्टरों के भी ऊँचे-ऊँचे महल बन गये। किन्तु राज्य में दिन के डाकुओं की प्रतिष्ठा है। अन्यथा रात के साधारण डाकुओं में और दिन के इन डाकुओं (वकीलों तथा डाक्टरों) में कोई भेद नहीं। दोनों अपने-अपने मतलब के लिए बुद्धि की कुशलता से प्रजा का धन लूटते हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से हम लोगों के कार्य का बहुत बड़ा मूल्य है। जिस प्रकार भी हो, यह तो मानना ही पड़ेगा कि इस गिरी हुई अवस्था मे भी, भारतवासी युवकों के हृदय मे स्वाधीन होने के भाव विराजमान हैं। वे स्वतन्त्र होने की यथाशक्ति चेष्टा भी करते हैं। यदि परिस्थितियाँ अनुकूल होती तो यही इनेगिने नवयुवक अपने प्रयत्नों से संसार को चकित कर देते। उस समय भारत-वासियों को भी फ्रांसीसियों की भाँति कहने का सौभाग्य प्राप्त होता जो कि उस जाति के नवयुवकों ने फांसीसी प्रजातन्त्र की स्थापना करते हुए कहा था : (The monument so raised, may serve as a lesson to the oppressors and an instance to the oppressed.) 'स्वाधीनता का जो स्मारक निर्माण किया गया है वह अत्याचारियों के लिए शिक्षा का कार्य करे और अत्याचार पीड़ितों के लिए उदाहरण बने।'

सस्ता-साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर प्रज

गाज़ी मुस्तफा कमालपाशा जिस समय तुर्की से भागे थे उस समय केवल इक्कीस युवक आपके साथ थे। कोई साज़ो-सामान न था, मौत का वारंट पीछे-पीछे घूम रहा था। पर समय ने ऐसा पलटा खाया कि उसी कमाल ने अपने कमाल से संसार को आश्चर्यान्वित कर दिया। वही कातिल कमालपाशा टर्की का भाग्य निर्माता बन गया। महामना लेनिन को एक दिन शराब के पीपों में छिपकर भागना पड़ा था, नहीं तो मृत्यु में कुछ देर न थी। वही महात्मा लेनिन रूस के भाग्य-विधाता बने। श्री शिवाजी डाकू और लुटेरे समझे जाते थे, पर समय आया जब कि हिन्दू जाति ने उन्हें अपना शिरमौर बना, गौ ब्राह्मण-रक्षक छत्रपति शिवाजी बना दिया! भारत सरकार को भी अपने स्वार्थ के लिए छत्रपति के स्मारक निर्माण कराने पड़े। क्लाइव एक उद्दण्ड विद्यार्थी था, जो अपने जीवन से निराश हो चुका था। समय के फेर ने उसी उद्दण्ड विद्यार्थी को अँग्रेज जाति का राज्य-स्थापनकर्त्ता लार्ड क्लाइव बना दिया। श्री सनयात सेन चीन के अराजकवादी पलातक (भागे हुए) थे। समय ने ही उसी पलातक को चीनी प्रजातन्त्र का सभापति बना दिया। सफलता ही मनुष्य के भाग्य का निर्माण करती है। असफल होने पर उसी को बर्बर, डाकू, अराजक, राजद्रोही तथा हत्यारे के नामों से विभूषित किया जाता है। सफलता उन्हीं सब नामों को बदल कर दयालु, प्रजापालक, न्यायकारी, प्रजातन्त्रवादी तथा महात्मा बना देती है!

भारतवर्ष के इतिहास में हमारे प्रयत्नों का उल्लेख करना ही पड़ेगा, किन्तु इसमें भी कोई सन्देह नहीं है कि भारतवर्ष की राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक किसी प्रकार की परिस्थिति

इस समय क्रान्तिकारी आन्दोलन के पक्ष में नहीं है। इसका कारण यही है कि भारतवासियों में शिक्षा का अभाव है। वे साधारण से साधारण सामाजिक उन्नति करने में भी असमर्थ हैं। फिर राजनैतिक क्रान्ति की बात कौन कहे? राजनैतिक क्रान्ति के लिए सर्वप्रथम क्रान्तिकारियों का संगठन ऐसा होना चाहिए कि अनेक विघ्न तथा बाधाओं के उपस्थित होने पर भी संगठन में किसी प्रकार त्रुटि न आये। सब कार्य यथावत् चलते रहें। कार्यकर्त्ता इतने योग्य तथा पर्याप्त सख्या मे होने चाहियें कि एक की अनुपस्थिति मे दूसरा स्थान-पूर्ति के लिए सदा उद्यत रहे। भारतवर्ष में कई बार कितने ही षड्यन्त्रों का भण्डा फूट गया और सब किया कराया काम चौपट हो गया। जब क्रान्तिकारी दलों की यह अवस्था है तो फिर क्रान्ति के लिए उद्योग कौन करे? देशवासी इतने शिक्षित हो कि वे वर्तमान सरकार की नीति को समझ कर अपने हानि-लाभ को जानने में समर्थ हो सकें। वे यह भी पूर्णतया समझते हो कि वर्तमान सरकार को हटाना आवश्यक है या नहीं। साथ ही साथ उनमे इतनी बुद्धि भी होनी चाहिए कि किस रीति से सरकार को हटाया जा सकता है। क्रान्तिकारी दल क्या है? वह क्या करना चाहता है? क्यों करना चाहता है? इन सारी बातो को जनता की अधिक संख्या समझ सके, क्रान्तिकारियों के साथ जनता की पूर्ण सहानुभूति हो, तब कहीं क्रान्तिकारी दल को देश में पैर रखने का स्थान मिल सकता है। यह तो क्रान्तिकारी दल की स्थापना की प्रारम्भिक बातें हैं। रह गई क्रान्ति, सो वह तो बहुत दूर की बात है।

क्रान्ति का नाम ही बड़ा भयंकर है। प्रत्येक प्रकार की क्रान्ति विपक्षियों को भयभीत कर देती है। जहाँ पर रात्रि होती है तो

साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां ... अच्छा प्रचार होगा।
है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

दिन का आगमन जान निशिचरों को दुख होता है। ठंडे जलवायु में रहने वाले पशु-पक्षी गरमी के आने पर उस देश को भी त्याग देते हैं। फिर राजनैतिक क्रान्ति तो बड़ी भयावनी होती है। मनुष्य अभ्यासों का समूह है। अभ्यासों के अनुसार ही उसकी प्रकृति भी बन जाती है। उसके विपरीत जिस समय कोई बाधा उपस्थित होती है, तो उनको भय प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक सरकार के सहायक अमीर और ज़मींदार होते हैं। ये लोग कभी नहीं चाहते कि उनके ऐशो-आराम में किसी प्रकार की बाधा पड़े। इसलिए वे हमेशा क्रान्तिकारी आन्दोलन को नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। यदि किसी प्रकार दूसरे देशों की सहायता लेकर समय पाकर क्रान्तिकारी दल क्रान्ति के उद्योग में सफल हो जाय, देश में क्रान्ति हो जाय, तो भी योग्य नेता न होने से अराजकता फैल कर व्यर्थ की नर-हत्या होती है, और उस प्रयत्न में अनेकों सुयोग्य वीरों तथा विद्वानों का नाश हो जाता है। इसका ज्वलन्त उदाहरण सन् १८५७ ई० का ग़दर है। यदि फ्रांस तथा अमेरिका की भाँति क्रान्ति द्वारा राजतन्त्र को पलट कर प्रजातन्त्र स्थापित भी कर लिया जाय तो बड़े-बड़े धनी पुरुष अपने धन-बल से सब प्रकारों के अधिकारों को दबा बैठते हैं। कार्यकारिणी समितियों में बड़े-बड़े अधिकार धनियों को प्राप्त हो जाते हैं। देश के शासन में धनियों का मत ही उच्च आदर पाता है। धन-बल से देश के समाचार पत्रों, कल-कारखानों तथा खानों पर उनका ही अधिकार हो जाता है। मजबूरन जनता की अधिक संख्या धनियों का समर्थन करने को वाध्य हो जाती है। जो दिमाग वाले होते हैं, वे भी समय पाकर बुद्धिबल से जनता की खरी कमाई से प्राप्त किये अधिकारों को हड़प कर बैठते हैं। स्वार्थ

के वशीभूत होकर वे श्रमजीवियों तथा कृषकों को उन्नति का अवसर नहीं देते। अन्त में वे लोग भी धनियों के पक्षपाती होकर राजतन्त्र के स्थान में धनिकतन्त्र की ही स्थापना करते हैं। रूसी क्रान्ति के पश्चात् यही हुआ था। रूस के क्रान्तिकारी इस बात को पहले से ही जानते थे। अतएव उन्होंने राज्य-सत्ता के विरुद्ध युद्ध करके राजतन्त्र की समाप्ति की। इसके बाद जैसे ही धनी तथा बुद्धि जीवियों ने रोड़ा अटकाना चाहा कि उसी समय उनसे भी युद्ध करके उन्होंने वास्तविक प्रजातन्त्र की स्थापना की।

अब विचारने की बात यह है कि भारतवर्ष में क्रान्तिकारी आन्दोलन के समर्थक कौन कौन से साधन मौजूद हैं? गत पृष्ठों में मैंने अपने अनुभवों का उल्लेख करके दिखला दिया है कि समिति के सदस्यों की उदर-पूर्ति तक के लिए कितना कष्ट उठाना पड़ा। प्राणपण से चेष्टा करने पर भी असहयोग आन्दोलन के पश्चात् कुछ थोड़े से ही गिने-चुने युवक युक्त-प्रान्त में ऐसे मिल सके, जो क्रान्तिकारी आन्दोलन का समर्थन करके सहायता देने को उद्यत हुए। इन गिने-चुने व्यक्तियों में भी हार्दिक सहानुभूति रखने वाले, अपनी जान पर खेल जाने वाले कितने थे, उसका कहना ही क्या है! कैसी बड़ी बड़ी आशायें बँधा कर इन व्यक्तियों को क्रान्तिकारी समिति का सदस्य बनाया गया था, और इस अवस्था में, जब कि असहयोगियों ने सरकार की ओर से घृणा उत्पन्न कराने में कोई कसर न छोड़ी थी, खुले रूप में राज्यद्रोही बातों का पूर्ण प्रचार किया गया था। इस पर भी बोलशेविक सहायता की आशाएँ बँधा-बँधा कर तथा क्रान्तिकारियों के ऊँचे-ऊँचे आदर्शों तथा बलिदानों का उदाहरण दे देकर प्रोत्साहन दिया जाता था। नवयुवकों के हृदय

... अच्छा प्रचार होगा।
... व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य ...

में क्रान्तिकारियों के प्रति बड़ा प्रेम तथा श्रद्धा होती है। उनकी अस्त्र-शस्त्र रखने की स्वाभाविक इच्छा तथा रिवाल्वर या पिस्तौल से प्राकृतिक प्रेम उन्हें क्रान्तिकारी दल से सहानुभूति उत्पन्न करा देता है। मैंने अपने क्रान्तिकारी जीवन में एक भी युवक ऐसा न देखा, जो एक रिवाल्वर या पिस्तौल अपने पास रखने की इच्छा न रखता हो। जिस समय उन्हें रिवाल्वर के दर्शन होते हैं, वे समझते हैं कि इष्टदेव के दर्शन प्राप्त हुए, आधा जीवन सफल हो गया! उसी समय से वे समझते हैं कि क्रान्तिकारी दल के पास इस प्रकार के सहस्रों अस्त्र होंगे, तभी तो इतनी बड़ी सरकार से युद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं! सोचते हैं कि धन की भी कोई कमी न होगी! अब क्या, अब समिति के व्यय से देश-भ्रमण का अवसर भी प्राप्त होगा, बड़े-बड़े त्यागी महात्माओं के दर्शन होंगे, सरकारी गुप्तचर विभाग का भी हाल मालूम हो सकेगा, सरकार द्वारा जब्त किताबें कुछ तो पहले ही पढ़ा दी जाती हैं, रही सही की भी आशा रहती है कि बड़ा उच्च साहित्य देखने को मिलेगा, जो यों कभी प्राप्त नहीं हो सकता। साथ ही साथ खयाल होता है कि क्रान्तिकारियों ने देश के राजा-महाराजाओं को तो अपने पक्ष में कर ही लिया होगा। अब क्या, थोड़े दिन की ही कसर है, लौट दिया सरकार का राज्य! बम बनाना सीख ही जाएंगे। अमर बूटी प्राप्त हो जायेगी, इत्यादि। परन्तु जैसे ही एक युवक क्रान्तिकारी दल का सदस्य बनकर हार्दिक प्रेम से समिति के कार्यों में योग देता है, थोड़े दिनों में ही उसे विशेष सदस्य होने के अधिकार प्राप्त होते हैं, वह ऐक्टिव (कार्यशील) मेम्बर बनता है, उसे संस्था का कुछ असली भेद मालूम होता है, तब समझ में आता है कि कैसे भीषण कार्य में उसने हाथ डाला है। फिर

तो वही दशा हो जाती है, जो 'नकटा पंथ' के सदस्यों की थी। जब चारों ओर से असफलता तथा अविश्वास की घटायें दिखाई देती हैं, तब यही विचार होता है कि ऐसे दुर्गम पथ में ये परिणाम तो होते ही हैं। दूसरे देश के क्रान्तिकारियों के मार्ग में भी ऐसी ही बाधायें उपस्थित हुई होंगी। वीर वही कहलाता है, जो अपने लक्ष्य को नहीं छोड़ता, इसी प्रकार की बातों से मन को शान्त किया जाता है। भारत के जनसाधारण की तो कोई बात ही नही। अधिकांश शिक्षित समुदाय भी यह नही जानता कि क्रान्तिकारी दल क्या चीज़ है, फिर उनसे सहानुभूति कौन रखे? बिना देशवासियों की सहानुभूति के अथवा बिना जनता की आवाज के सरकार भी किसी बात की कुछ चिन्ता नहीं करती। दो चार पढ़े लिखे एक दो अँग्रेजी अखबार मे दवे हुए शब्दों में यदि दो एक लेख लिख दें, तो वे अरण्य रोदन के समान निष्फल सिद्ध होते हैं। उनकी ध्वनि व्यर्थ में ही आकाश में विलीन हो जाती है। तमाम बातों को देखकर अब तो मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूं कि अच्छा हुआ जो मैं गिरफ्तार हो गया, और भागा नही। भागने की मुझे सुविधाएँ थीं। गिरफ्तारी से पहले ही मुझे अपनी गिरफ्तारी का पूरा पता चल गया था। गिरफ्तारी के पूर्व भी यदि इच्छा करता तो पुलिस वालों को मेरी हवा भी न मिलती, किन्तु मुझे तो अपनी शक्ति की परीक्षा करनी थी। गिरफ्तारी के बाद सड़क पर आध घण्टे तक बिना किसी बंधन के घूमता रहा। पुलिस वाले शान्तिपूर्वक बैठे हुए थे। जब पुलिस कोतवाली में पहुँचा, दोपहर के समय पुलिस कोतवाली के दफ्तर में बिना किसी बन्धन के खुला हुआ बैठा था। केवल एक सिपाही निगरानी के लिये पास बैठा हुआ था, जो रात भर का जागा था।

इसका अच्छा प्रचार होगा।
व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

सब पुलिस अफसर भी रात भर के जगे हुए थे, क्योंकि गिरफ्तारियों में लगे रहे थे। सब आराम करने चले गये थे। निगरानी वाला सिपाही भी घोर निद्रा में सो गया ! दफ्तर में केवल एक मुन्शी लिखा पढ़ी कर रहे थे। यह भी श्रीयुत रोशनसिंह अभियुक्त के फूफीजात भाई थे। यदि मैं चाहता तो धीरे से उठकर चल देता। पर मैंने विचारा कि मुन्शी जी महाशय बुरे फँसेंगे। मैंने मुन्शी जी को बुलाकर कहा कि यदि भावी आपत्ति के लिए तैयार हो तो मैं जाऊँ। वे मुझे पहले से जानते थे। पैरों पड़ गये कि गिरफ्तार हो जाऊँगा, बाल-बच्चे भूखों मर जायेंगे। मुझे दया आ गई। एक घण्टे बाद श्री अशफ़ाकउल्ला खाँ के मकान की तलाशी लेकर पुलिस वाले लौटे। श्री अशफ़ाकउल्ला खाँ के भाई की कारतूसी बन्दूक और कारतूसों की भरी हुई पेटी लाकर उन्हीं मुन्शी जी के पास रख दी गई, और मैं पास ही कुर्सी पर खुला हुआ बैठा था। केवल एक सिपाही खाली हाथ पास में खड़ा था। इच्छा हुई कि बन्दूक उठाकर कारतूसों की पेटी गले में डाल लूं, फिर कौन सामने आता है ! पर फिर सोचा कि मुन्शी जी पर आपत्ति आयेगी, विश्वासघात करना ठीक नहीं। उसी समय खुफ़िया पुलिस के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट सामने छत पर आये। उन्होंने देखा कि मेरे एक ओर कारतूस तथा बन्दूक पड़ी है, दूसरी ओर श्रीयुत प्रेमकृष्ण का माउज़र पिस्तौल तथा कारतूस रखे हैं, क्योंकि सब चीजें मुन्शी जी के पास आकर जमा होती थीं और मैं बिना किसी बंधन के बीच में खुला हुआ बैठा हूं। डि० सु० को तुरन्त सन्देह हुआ, उन्होंने बन्दूक तथा पिस्तौल को वहाँ से हटवा कर मालखाने में बंद करवाया। निश्चय किया कि अब भाग चलूं। पाखानें के बहाने से

बाहर निकाला गया। एक सिपाही कोतवाली से बाहर दूसरे स्थान में शौच के निमित्त लिवा गया। दूसरे सिपाहियों ने उससे बहुत कुछ कहा कि रस्सी डाल लो। उसने कहा मुझे विश्वास है यह भागेंगे नहीं। पाखाना नितान्त निर्जन स्थान में था। मुझे पाखाने भेजकर वह सिपाही खड़े होकर सामने कुश्ती देखने लगा। मैंने दीवार पर पैर रखा और चढ़कर देखा कि सिपाही महोदय कुश्ती देखने में मस्त हैं! हाथ बढ़ाते ही दीवार के ऊपर और एक क्षण में बाहर हो जाता, फिर मुझे कौन पाता? किन्तु तुरन्त विचार आया कि जिस सिपाही ने विश्वास करके तुम्हें इतनी स्वतन्त्रता दी, उसके साथ विश्वासघात करके भाग कर उसको जेल में डालोगे? क्या यह अच्छा होगा? उसके बाल बच्चे क्या कहेंगे? इस भाव ने हृदय पर एक ठोकर लगाई। एक ठंडी साँस भरी, दीवार से उतर कर बाहर आया, सिपाही महोदय को साथ लेकर कोतवाली की हवालात में आकर बन्द हो गया।

लखनऊ जेल में काकोरी के अभियुक्तों को बड़ी भारी आजादी थी। राय साहब पं० चम्पालाल जेलर की कृपा से हम कभी भी न समझ सके कि जेल में हैं या किसी रिश्तेदार के यहाँ मेहमानी कर रहे हैं। जैसे माता-पिता से छोटे-छोटे लड़के बात-बात पर बिगड़ जाते हैं, यही हमारा हाल था। हम लोग जेल वालों से बात-बात पर ऐंठ जाते। पं० चम्पालाल जी का ऐसा हृदय था कि वे हम लोगों से अपनी सन्तान से भी अधिक प्रेम करते थे। हम में से किसी को ज़रा सा कष्ट होता था, तो उन्हें बड़ा दुख होता था। हमारे तनिक से कष्ट को भी वह स्वयं न देख सकते थे। और हम लोग ही क्यों, उनके जेल में किसी कैदी या सिपाही, जमादार या

य हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां है। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर प्रय...

मुन्शी—किसी को भी कोई कष्ट नहीं। सब बड़े प्रसन्न रहते हैं। इसके अतिरिक्त मेरी दिनचर्या तथा नियमों का पालन देखकर पहरे के सिपाही अपने गुरु से भी अधिक मेरा सम्मान करते थे। मैं यथा नियम जाड़े, गर्मी तथा बरसात में प्रातःकाल तीन बजे से उठकर संध्यादि से निवृत्त हो नित्य हवन भी करता था। प्रत्येक पहरे का सिपाही देवता के समान मेरा पूजन करता था। यदि किसी के बाल बच्चे को कष्ट होता था, तो वह हवन की भभूत ले जाता था! कोई जंत्र माँगता था। उनके विश्वास के कारण उन्हें आराम भी होता था तथा उनकी श्रद्धा और भी बढ़ जाती थी। परिणामस्वरूप जेल से निकल जाने का पूरा प्रबन्ध कर लिया। जिस समय चाहता चुपचाप निकल जाता। एक रात्रि को तैयार होकर उठ खड़ा हुआ। बैरेक के नम्बरदार तो मेरे सहारे पहरा देते थे। जब जी में आता सोते, जब इच्छा होती बैठ जाते, क्योंकि वे जानते थे कि यदि सिपाही या जमादार सुपरिन्टेण्डेण्ट जेल के सामने पेश करना चाहेंगे, तो मैं बचा लूँगा। सिपाही तो कोई चिन्ता ही न करते थे। चारों ओर शान्ति थी। केवल इतना प्रयत्न करना था कि लोहे की कटी हुई सलाखों को उठाकर बाहर हो जाऊँ। चार महीने पहले से लोहे की सलाखें काट ली थीं। काटकर उन्हें ऐसे ढंग से जमा दी थीं कि सलाखें धोई गईं, रंगत लगवाई गई, तीसरे दिन झाड़ी जातीं, आठवें दिन हथोड़े से ठोंकी जातीं और जेल के अधिकारी नित्य प्रति सायँकाल घूमकर सब ओर दृष्टि डाल जाते थे, पर किसी को कोई पता न चला! जैसे ही मैं जेल से भागने का विचार कर के उठा था, ध्यान आया कि जिन पं० चम्पालाल की कृपा से सब प्रकार के आनन्द भोगने की स्वतन्त्रता जेल में प्राप्त हुई, उनके

बुढ़ापे में, जब कि थोड़ा सा समय ही उनकी पेंशन के लिए बाकी है, क्या उन्हीं के साथ विश्वासघात करके निकल भागूँ ? सोचा जीवन भर किसी के साथ विश्वासघात न किया, अब भी विश्वासघात न करूँगा। उस समय मुझे यह भली भांति मालूम हो चुका था कि मुझे फांसी की सजा होगी, पर उपरोक्त बात सोचकर भागना स्थगित ही कर दिया। ये सब बातें चाहे प्रलाप ही क्यों न मालूम हों, किन्तु सब अक्षरशः सत्य हैं, सबके प्रमाण विद्यमान हैं।

मैं इस समय इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि यदि हम लोगों ने प्राणपण से जनता को शिक्षित बनाने में पूर्ण प्रयत्न किया होता, तो हमारा उद्योग क्रान्तिकारी आन्दोलन से कहीं अधिक लाभदायक होता, जिसका परिणाम स्थायी होता। अति उत्तम होगा यदि भारत की भावी संतान तथा नवयुवक-वृन्द क्रान्तिकारी संगठन करने की अपेक्षा जनता की प्रवृत्ति को देश सेवा की ओर लगाने का प्रयत्न करें, और श्रमजीवी तथा कृषकों का संगठन करके उनको जमींदारों तथा रईसों के अत्याचारों से बचावें। भारतवर्ष के रईस तथा जमींदार सरकार के पक्षपाती हैं। मध्य श्रेणी के लोग किसी न किसी प्रकार इन्हीं तीनों के आश्रित हैं। कोई तो नौकर पेशा हैं और जो कोई व्यवसाय भी करते हैं, उन्हें भी इन्हीं के मुँह की ओर ताकना पड़ता है। रह गये श्रमजीवी तथा कृषक—सो उनको उदर-पूर्ति के उद्योग से ही समय नहीं मिलता, जो धर्म, समाज तथा राजनीति की ओर कुछ ध्यान दे सकें। मद्यपानादि दुर्व्यसनों के कारण उनका आचरण भी ठीक नहीं रह सकता। व्यभिचार, सन्तान-वृद्धि, अल्पायु में मृत्यु तथा अनेक प्रकार के रोगों से जीवन-भर उनको मुक्ति नहीं हो सकती। कृषकों में उद्योग का तो नाम

...करता हूं कि इसका अच्छा प्रचार होगा।
सस्ता-साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
मिलती हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर ...

भी नहीं पाया जाता। यदि एक किसान को जमींदार की मजदूरी करने या हल चलाने की नौकरी करने पर ग्राम में आज से बीस वर्ष पूर्व दो आने रोज या चार रुपये मासिक मिलते थे, तो आज भी वही वेतन बँधा चला आ रहा है! बीस वर्ष पूर्व वह अकेला था, अब उसकी स्त्री तथा चार सन्तान भी हैं। पर उसी वेतन में उसे निर्वाह करना पड़ता है। उसे उसी पर सन्तोष करना पड़ता है। सारे दिन जेठ की लू तथा धूप में गन्ने के खेत में पानी देते देते उसको रतौंधी आने लगती है। अंधेरा होते ही आँख से दिखाई नहीं देता, पर उसके बदले में आधा सेर सड़े हुए शीरे का शरबत या आधा सेर चना तथा छः पैसे रोज मजदूरी मिलती है, जिसमें ही उसे अपने परिवार का पेट पालना पड़ता है।

जिसके हृदय में भारतवर्ष की सेवा के भाव उपस्थित हों, या जो भारतभूमि को स्वतन्त्र देखने या स्वाधीन बनाने की इच्छा रखता हो, उसे उचित है कि ग्रामीण संगठन करके कृषकों की दशा सुधारकर, उनके हृदय से भाग्य-निर्भरता को हटाकर उद्योगी बनने की शिक्षा दे। कल, कारखाने, रेलवे, जहाज़ तथा खानों में जहाँ कहीं श्रमजीवी हों, उनकी दशा को सुधारने के लिये श्रमजीवियों के संघ की स्थापना की जाय, ताकि उनको अपनी अवस्था का ज्ञान हो सके और कारखानों के मालिक मन-माने अत्याचार न कर सकें और अछूतों को, जिनकी संख्या इस देश में लगभग छः करोड़ है, पर्याप्त शिक्षा प्राप्त कराने का प्रबन्ध हो, तथा उनको सामाजिक अधिकारों में समानता हो। जिस देश में छः करोड़ मनुष्य अछूत समझे जाते हों, उस देशवासियों को स्वाधीन बनने का अधिकार ही क्या है? इसी के साथ ही साथ स्त्रियों की दशा भी इतनी सुधारी

जाय कि वे अपने आप को मनुष्य जाति का अंग समझने लगें। वे पैर की जूती तथा घर की गुड़िया न समझी जायें। इतने कार्य हो जाने के बाद जब भारत की जनता का अधिकांश शिक्षित हो जायगा, वे अपनी भलाई-बुराई समझने के योग्य हो जायेंगे, उस समय प्रत्येक आन्दोलन, जिसका शिक्षित जनता समर्थन करेगी, अवश्य सफल होगा। संसार की बड़ी से बड़ी शक्ति भी उसके दबाने में समर्थ न हो सकेगी। रूस में जब तक किसान संगठन नहीं हुआ, रूस सरकार की ओर से देश-सेवकों पर मनमाने अत्याचार होते रहे। जिस समय से 'कैथोराइन' ने ग्रामीण-संगठन का कार्य अपने हाथ में लिया, स्थान स्थान पर कृषक-सुधारक संघों की स्थापना की, घूम घूम कर रूस के युवक तथा युवतियों ने ज़ारशाही के विरुद्ध प्रचार आरम्भ किया। फिर किसानों को अपनी वास्तविक अवस्था का ज्ञान होने लगा। वे अपने मित्र तथा शत्रु को समझने लगे, उसी समय से ज़ारशाही की नीव हिलने लगी। श्रमजीवियों के संघ भी स्थापित हुए। रूस में हड़तालों का आरम्भ हुआ। उसी समय से जनता की प्रवृत्ति को देखकर मदान्धों के नेत्र खुल गये।

भारतवर्ष मे सबसे बड़ी कमी यही है कि इस देश के युवकों में शहरी जीवन व्यतीत करने की बान पड़ गई है। युवक-वृन्द साफ-सुथरे कपड़े पहनने, पक्की सड़कों पर चलने, मीठा, खट्टा तथा चटपटा भोजन करने, विदेशी सामग्री से सुसज्जित बाजारों में घूमने, मेज-कुर्सी पर बैठने तथा विलासिता मे फँसे रहने के आदी हो गये हैं। ग्रामीण-जीवन को वे नितान्त नीरस तथा शुष्क समझते हैं। उनकी समझ मे ग्रामो में अर्धसभ्य या जंगली लोग निवास करते हैं। यदि कभी किसी अंग्रेज़ी स्कूल या कालेज में पढ़ने वाला

...साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

विद्यार्थी किसी कार्यवश अपने किसी सम्बन्धी के यहाँ ग्राम में पहुँच जाता है, तो उसे वहाँ दो-चार दिन काटना बड़ा कठिन हो जाता है। वे या तो कोई उपन्यास साथ ले जाते हैं, जिसे अलग बैठे पढ़ा करते हैं, या पड़े पड़े सोया करते हैं! किसी ग्राम-वासी से बातचीत करने से उनका दिमाग थक जाता है, या उनसे बातचीत करना वे अपनी शान के खिलाफ समझते हैं। ग्रामवासी जमींदार या रईस जो अपने लड़कों को अंग्रेज़ी पढ़ाते हैं, उनकी भी यही इच्छा रहती है कि जिस प्रकार हो सके उनके लड़के कोई सरकारी नौकरी पा जायँ। ग्रामीण बालक जिस समय शहर में पहुँचकर शहरी शान को देखते हैं, इतनी बुरी तरह से उन पर फैशन का भूत सवार हो जाता है कि उनके मुक़ाब्ले फैशन बनाने की चिन्ता किसी को भी नहीं! थोड़े दिनों में उनके आचरण पर भी इसका प्रभाव पड़ता है और वे स्कूल के गन्दे लड़कों के हाथ में पड़ कर बड़ी बुरी-बुरी कुटेवों के घर बन जाते हैं। उनसे जीवन पर्यन्त अपना ही सुधार नहीं हो पाता, फिर वे ग्रामवासियों का सुधार क्या खाक कर सकेंगे?

असहयोग आन्दोलन में कार्यकर्त्ताओं की इतनी अधिक संख्या होने पर भी सबके सब शहर के प्लेटफार्मों पर लेक्चरबाजी करना ही अपना कर्त्तव्य समझते थे। ऐसे बहुत थोड़े कार्यकर्त्ता थे, जिन्होंने ग्रामों में कुछ कार्य किया। उनमें भी अधिकतर ऐसे थे, जो केवल हुल्लड़ कराने में ही देशोद्धार समझते थे! परिणाम यह हुआ कि आन्दोलन में थोड़ी सी शिथिलता आते ही सब कार्य अस्त-व्यस्त हो गया। इसी कारण महामना देशबन्धु चितरंजनदास ने अन्तिम समय में ग्राम-संगठन ही अपने जीवन का ध्येय बनाया था। मेरे विचार से -संगठन की सबसे सुगम रीति यही हो सकती है कि युवकों में

शहरी जीवन छोड़कर ग्रामीण-जीवन से प्रीति उत्पन्न हो। जो युवक मिडिल, एण्ट्रेन्स, एफ० ए०, बी० ए० पास करने में हजारों रुपये नष्ट करके दस, पन्द्रह, बीस या तीस रुपये की नौकरी के लिए ठोकरें खाते फिरते हैं, उन्हें नौकरी का आसरा छोड़कर कोई उद्योग जैसे—बढ़ईगीरी, लुहारगीरी, दर्जी का काम, धोबी का काम, जूते बनाना, कपड़ा बुनना, मकान बनाना, राजगीरी इत्यादि सीख लेना चाहिए। यदि ज़रा साफ सुथरे रहना हो तो वैद्यक सीखें। किसी बड़े ग्राम या कस्बे में जाकर काम शुरू करे। उपरोक्त कामों में से कोई काम भी ऐसा नहीं है, जिसमें चार या पाँच घण्टा मेहनत करके तीस रुपये मासिक की आय न हो जाय। ग्राम में तीस रुपये मासिक शहर के साठ रुपये से अधिक हैं, क्योंकि ग्राम में लकड़ी या कण्डों का मूल्य बहुत कम होता है और यदि किसी जमींदार की कृपा हो गई और एक सूखा हुआ वृक्ष कटवा दिया तो छः महीने के लिए ईंधन की छुट्टी हो गई। शुद्ध घी, दूध सस्ते दामों में मिल जाता है और स्वयं एक या दो गाय या भैंस पाल ली, तब तो ग्राम के आम गुठलियों के दाम ही मिल गये। चारा सस्ता मिलता है। घी दूध बाल बच्चे खाते हैं। कण्डों का ईंधन होता है और यदि किसी की कृपा हो गई तो फ़सल पर एक या दो भुस की गाड़ी बिना मूल्य ही मिल जाती है। अधिकतर काम-काजियों को गाँव में चारा लकड़ी के लिये पैसा खर्च नहीं करना पड़ता। हजारों अच्छे-अच्छे ग्राम हैं, जिनमें वैद्य, दर्जी, धोबी निवास ही नहीं करते। उन ग्रामों के लोगों को दस, बीस कोस दूर दौड़ना पड़ता है। वे इतने दुखी होते हैं कि जिसका अनुमान करना कठिन है। विवाह आदि अवसरों पर यथासमय कपड़े नहीं मिलते।

ये हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर [illegible]

काष्टादिक औषधियाँ बड़े-बड़े कस्बों में नहीं मिलतीं। यदि मामूली अत्तार वन कर ही कस्बे में बैठ जाये, और दो चार किताबें देखकर ही औषधि दिया करे तो भी तीस-चालीस रुपये मासिक की आय तो कहीं गई हो नहीं। इस प्रकार उदर-निर्वाह तथा परिवार का प्रबन्ध हो जाता है। ग्रामों की अधिक जन-संख्या से परिचय हो जाता है। परिचय ही नहीं, जिसका एक समय ज़रूरत पर काम निकल गया, वह आभारी हो जाता है। उसकी आँख नीची रहती है। आवश्यकता पड़ने पर वह तुरन्त सहायक होता है। ग्राम में कौन ऐसा पुरुष है जिसका लुहार, बढ़ई, धोबी, दर्जी, कुम्हार या वैद्य से काम नहीं पड़ता? मेरा पूर्ण अनुभव है कि इन लोगों की भले-भले ग्रामवासी खुशामद करते रहते हैं।

रोजाना काम पड़ते रहने से और सम्बन्ध होने से यदि थोड़ी सी चेष्टा की जाय और ग्रामवासियों को थोड़ा-सा उपदेश देकर उनकी दशा सुधारने का प्रयत्न किया जाय तो बड़ी जल्दी काम बने। अल्प समय में ही वे सच्चे स्वदेश भक्त खद्दरधारी वन जायें। यदि उनमें एक दो शिक्षित हो तो उत्साहित करके उसके पास एक समाचार-पत्र मँगाने का प्रवन्ध कर दिया जाय। देश की दशा का भी उन्हें कुछ ज्ञान होता रहे। इसी तरह सरल-सरल पुस्तकों की कथायें सुनाकर उनमें से कुप्रथाओं को भी छुड़ाया जा सकता है। कभी-कभी स्वयं रामायण या भागवत की कथा भी सुनाया करे। यदि नियमित रूप से भागवत की कथा कहे तो पर्याप्त धन भी चढ़ावे में आ सकता है, जिससे एक पुस्तकालय स्थापित कर दे। कथा कहने के अवसर पर वीच-वीच में चाहे कितनी राजनीति का समावेश कर जाय, कोई खुफ़िया पुलिस का रिपोर्टर नहीं बैठा

जो रिपोर्ट करे। वैसे यदि कोई खद्दरधारी ग्राम में उपदेश करना चाहे तो तुरन्त ही जमींदार पुलिस में खबर कर दे और यदि कस्बे के वैद्य, लड़के पढ़ाने वाले अथवा कथा कहने वाले पण्डित कोई बात कहें तो सब चुपचाप सुनकर उस पर अमल करने की कोशिश करते हैं और उन्हें कोई पूछता भी नहीं। इसी प्रकार अनेक सुविधाएँ मिल सकती हैं, जिनके सहारे ग्रामीणों की सामाजिक दशा सुधारी जा सकती है। रात्रि-पाठशालायें खोलकर निर्धन तथा अछूत जातियों के बालकों को शिक्षा दे सकते हैं। श्रमजीवी-संघ स्थापित करने में शहरी जीवन तो व्यतीत हो सकता है, किन्तु इसके लिये उनके साथ अधिक समय खर्च करना पड़ेगा। जिस समय वे अपने-अपने काम से छुट्टी पाकर आराम करते हैं, उस समय उनके साथ वार्तालाप करके मनोहर उपदेशों द्वारा उनको उनकी दशा का दिग्दर्शन कराने का अवसर मिल सकता है। इन लोगों के पास वक्त बहुत कम होता है, इस लिये बेहतर यही होगा कि चित्ताकर्षक साधनों द्वारा किसी उपदेश करने की रीति से, जैसे लालटेन द्वारा तसवीरें दिखाकर या किसी दूसरे उपाय से उनको एक स्थान पर एकत्रित किया जा सके, तथा रात्रि-पाठशालायें खोलकर उन्हें तथा उनके बच्चों को शिक्षा देने का भी प्रबन्ध किया जाय। जितने युवक उच्च शिक्षा प्राप्त करके व्यर्थ में धन व्यय करने की इच्छा रखते हैं, उनको उचित है कि अधिक से अधिक अंग्रेज़ी के दसवें दर्जे तक की योग्यता प्राप्त करके किसी कला-कौशल के सीखने का प्रयत्न करें और उस कला-कौशल द्वारा ही अपना जीवन निर्वाह करें।

व हिन्दी को ... प्रचार होगा। अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

जो धनी मानी स्वदेश-सेवार्थ बड़े-बड़े विद्यालयों तथा पाठशालाओं की स्थापना करते हैं, उनको उचित है कि विद्यापीठों के साथ-साथ उद्योगपीठ, शिल्पविद्यालय तथा कलाकौशल भवनों की स्थापना भी करें। इन विद्यालयों के विद्यार्थियों को नेतागीरी के लोभ से बचाया जाय। विद्यार्थियों का जीवन सादा हो और विचार उच्च हों। इन्हीं विद्यालयों में एक-एक उपदेशक विभाग भी हो, जिसमें विद्यार्थी प्रचार करने का ढंग सीख सकें। जिन युवकों के हृदय में स्वदेश सेवा के भाव हों, उनको कष्ट सहन करने की आदत डालकर सुसंगठित रूप से ऐसा कार्य करना चाहिए, जिसका परिणाम स्थायी हो। केथोराइन ने इसी प्रकार कार्य किया था। उदर-पूर्ति के निमित्त केथोराइन के अनुयायी ग्रामों में जाकर कपड़े सीते या जूते बनाते और रात्रि के समय किसानों को उपदेश देते थे। जिस समय से मैंने केथोराइन की जीवनी (The grand mother of the Russian Revolution) का अंग्रेजी भाषा में अध्ययन किया, मुझ पर उसका बहुत प्रभाव हुआ। मैंने तुरन्त उसकी जीवनी 'केथोराइन' नाम से हिन्दी में प्रकाशित कराई। मैं भी उसी प्रकार काम करना चाहता था, पर बीच में ही क्रान्तिकारी दल में फँस गया। मेरा तो अब यह दृढ़ निश्चय हो गया है कि अभी पचास वर्ष तक क्रान्तिकारी दल को भारतवर्ष में सफलता नहीं हो सकती, क्योंकि यहाँ की स्थिति उसके उपयुक्त नहीं। अतएव क्रान्तिकारी दल का संगठन करके व्यर्थ में नवयुवकों के जीवन को नष्ट करना और शक्ति का दुरुपयोग करना बड़ी भारी भूल हैं। इससे लाभ के स्थान में हानि की संभावना बहुत अधिक है। नवयुवकों को मेरा अन्तिम सन्देश यही है कि वे रिवाल्वर या पिस्तौल को अपने पास रखने की इच्छा

को त्याग कर सच्चे देशसेवक बनें । पूर्ण स्वाधीनता उनका ध्येय हो और वे वास्तविक साम्यवादी बनने का प्रयत्न करते रहें । फल की इच्छा छोड़कर सच्चे प्रेम से कार्य करें, परमात्मा सदैव उनका भला ही करेगा ।

यदि देश हित मरना पड़े मुझ को सहस्रों बार भी,
तो भी न मैं इस कष्ट को निज ध्यान में लाऊँ कभी ।
हे ईश भारतवर्ष में शत बार मेरा जन्म हो,
कारण सदा ही मृत्यु का देशोपकारक कर्म हो ।

## अन्तिम समय की बातें

आज १६ दिसम्बर १९२७ ई० को निम्नलिखित पंक्तियों का उल्लेख कर रहा हूँ, जबकि १९ दिसम्बर १९२७ ई० सोमवार (पौष कृष्ण ११ सम्वत् १९८४ वि०) को ६॥ बजे प्रातःकाल इस शरीर को फांसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है । अतएव नियत समय पर इह्-लीला संवरण करनी ही होगी । यह सर्वशक्तिमान प्रभु की लीला है । सब कार्य उसकी इच्छानुसार ही होते हैं । यह परम पिता परमात्मा के नियमों का परिणाम है कि किस प्रकार किस को शरीर त्यागना होता है । मृत्यु के सकल उपक्रम निमित्त मात्र हैं । जब तक कर्म क्षय नहीं होता, आत्मा को जन्म-मरण के बन्धन मे पड़ना ही होता है, यह शास्त्रों का निश्चय है । यद्यपि यह बात वह परब्रह्म ही जानता है कि किन कर्मों के परिणामस्वरूप कौन सा शरीर इस आत्मा को ग्रहण करना होगा, किन्तु अपने लिए यह मेरा दृढ़ निश्चय है कि मैं उत्तम शरीर धारण कर नवीन शक्तियों सहित अति शीघ्र ही पुनः भारतवर्ष में ही किसी निकटवर्ती सम्बन्धी या इष्ट मित्र के गृह में जन्म ग्रहण

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
। हैं । बड़ा सूचीपत्र मंगावें । पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर अ—

करूँगा, क्योंकि मेरा जन्म-जन्मान्तर यही उद्देश्य रहेगा कि मनुष्य मात्र को सभी प्राकृतिक पदार्थों पर समानाधिकार प्राप्त हो। कोई किसी पर हुकूमत न करे। सारे संसार में जनतन्त्र की स्थापना हो। वर्तमान समय में भारतवर्ष की अवस्था बड़ी शोचनीय है। अतएव लगातार कई जन्म इसी देश में ग्रहण करने होंगे और जब तक कि भारतवर्ष के नर-नारी पूर्णतया सर्वरूपेण स्वतन्त्र न हो जायें, परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना होगी कि वह मुझे इसी देश में जन्म दे, ताकि मैं उसकी पवित्र वाणी—'वेद वाणी' का अनुपम घोष मनुष्य मात्र के कानों तक पहुँचाने में समर्थ हो सकूँ। सम्भव है कि मैं मार्ग-निर्धारण में भूल करूँ, पर इसमें मेरा कोई विशेष दोष नहीं, क्योंकि मैं भी तो अल्पज्ञ जीव मात्र ही हूँ। भूल न करना केवल सर्वज्ञ से ही सम्भव है। हमें परिस्थितियों के अनुसार ही सब कार्य करने पड़े और करने होंगे। परमात्मा अगले जन्म में सुबुद्धि प्रदान करे ताकि मैं जिस मार्ग का अनुसरण करूँ, वह त्रुटि-रहित ही हो।

अब मैं उन बातों का भी उल्लेख कर देना उचित समझता हूँ जो काकोरी षड्यंत्र के अभियुक्तों के सम्बन्ध में सेशन जज के फैसला सुनाने के पश्चात् घटित हुईं। ६ अप्रैल सन् २७ ई० को सेशन जज ने फैसला सुनाया था। १८ जुलाई सन् २७ ई० को अवध चीफ कोर्ट में अपील हुई। इसमें कुछ की सजायें बढ़ी और एकाध की कम भी हुई। अपील होने की तारीख से पहले मैंने संयुक्त प्रान्त के गवर्नर की सेवा में एक मेमोरियल भेजा था, जिसमें प्रतिज्ञा की थी कि अब भविष्य में क्रान्तिकारी दल से कोई सम्बन्ध न रखूँगा। इस मेमोरियल का ज़िक्र मैंने अपनी अन्तिम दया-प्रार्थना पत्र में, जो मैंने चीफ़ कोर्ट के जजों को दिया था, कर दिया

था, किन्तु चीफ़ कोर्ट के जजों ने मेरी किसी प्रकार की प्रार्थना स्वीकार न की। मैंने स्वयं ही जेल से अपने मुकदमे की बहस लिखकर भेजी, जो छापी गई। जब यह बहस चीफ़ कोर्ट के जजों ने सुनी, तो उन्हें बड़ा सन्देह हुआ कि बहस मेरी लिखी हुई न थी। इन तमाम बातों का नतीजा यह निकला कि चीफ़ कोर्ट अवध द्वारा मुझे महाभयंकर षड्यंत्रकारी की पदवी दी गई। मेरे पश्चाताप पर जजों को विश्वास न हुआ और उन्होंने अपनी धारणा को इस प्रकार प्रगट किया कि यदि यह (रामप्रसाद) छूट गया तो फिर वही कार्य करेगा। बुद्धि की प्रखरता तथा समझ पर कुछ प्रकाश डालते हुए मुझे 'निर्दयी हत्यारे' के नाम से विभूषित किया गया। लेखनी उनके हाथ में थी, जो चाहे सो लिखते, किन्तु काकोरी षड्यंत्र का चीफ़ कोर्ट का आद्योपान्त फ़ैसला पढ़ने से भली भाँति विदित होता है कि मुझे मृत्यु-दण्ड किस ख्याल से दिया गया। यह निश्चय किया गया कि रामप्रसाद ने सेशन जज के विरुद्ध अपशब्द कहे हैं, खुफिया विभाग के कार्यकर्त्ताओं पर लांछन लगाये हैं अर्थात् अभियोग के समय जो अन्याय होता था, उसके विरुद्ध आवाज उठाई है, अतएव रामप्रसाद सब से बड़ा गुस्ताख़ मुलजिम है। अब माफी चाहे वह किसी रूप में माँगे, नहीं दी जा सकती।

चीफ कोर्ट से अपील खारिज हो जाने के बाद यथा नियम प्रान्तीय गवर्नर तथा फिर वाइसराय के पास दया-प्रार्थना की गई। रामप्रसाद 'बिस्मिल', राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी, रोशनसिंह तथा अशफ़ाक़ उल्ला खाँ के मृत्यु-दण्ड को बदलकर अन्य दूसरी सजा देने की सिफारिश करते हुए संयुक्त प्रान्त की कौंसिल के लगभग सभी निर्वाचित हुए मेम्बरों ने हस्ताक्षर करके निवेदन-पत्र दिया। मेरे

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

पिता ने ढाई सौ रईस, आनरेरी मजिस्ट्रेट तथा जमींदारों के हस्ताक्षर से एक अलग प्रार्थना-पत्र भेजा, किन्तु श्रीमान सर विलियम मेरिस की सरकार ने एक न सुनी ! उसी समय लेजिसलेटिव एसेम्बली तथा कौंसिल ऑफ स्टेट के ७८ सदस्यों ने हस्ताक्षर करके वाइसराय के पास प्रार्थनापत्र भेजा कि 'काकोरी षड्यंत्र के मृत्यु-दण्ड पाये हुओं को मृत्यु-दण्ड की सजा बदल कर दूसरी सजा कर दी जाये, क्योंकि दौरा जज ने सिफारिश की है कि यदि ये लोग पश्चात्ताप करें तो सरकार दण्ड कम दे। चारों अभियुक्तों ने पश्चाताप प्रकट कर दिया है।' किन्तु वाइसराय महोदय ने भी एक न सुनी !

इस विषय में माननीय पं० मदनमोहन मालवीय जी ने तथा एसेम्बली के कुछ अन्य सदस्यों ने वाइसराय से मिलकर भी प्रयत्न किया था कि मृत्यु-दण्ड न दिया जाय। इतना होने पर सबको आशा थी कि वाइसराय महोदय अवश्यमेव मृत्यु-दण्ड की आज्ञा रद कर देंगे। इसी हालत में चुपचाप विजयादशमी से दो दिन पहले जेलों को तार भेज दिये गये कि दया नहीं होगी। सबकी फाँसी की तारीख मुकर्र हो गई। जब मुझे सुपरिन्टेण्डेण्ट जेल ने तार सुनाया, तो मैंने भी कह दिया कि आप अपना काम कीजिये। किन्तु सुपरिन्टेण्डेण्ट जेलर के अधिक कहने पर कि एक तार दया-प्रार्थना का सम्राट् के पास भेज दो, क्योंकि यह उन्होंने एक नियम सा बना रखा है कि प्रत्येक फाँसी के कैदी की ओर से जिसकी दया-भिक्षा की अर्जी वाइसराय के यहाँ से खारिज हो जाती है, वह एक तार सम्राट् के नाम से प्रान्तीय सरकार के पास अवश्य भेजते हैं। कोई दूसरा जेल सुपरिन्टेण्डेण्ट ऐसा नहीं करता। उपरोक्त तार लिखते समय मेरा

कुछ विचार हुआ कि प्रिवि कौंसिल इंग्लैण्ड में अपील की जाय। मैंने श्रीयुत मोहनलाल सक्सेना वकील लखनऊ को सूचना दी। बाहर किसी को बादशाह की अपील खारिज होने की बात पर विश्वास भी न हुआ। जैसे तैसे करके श्रीयुत मोहनलाल द्वारा प्रिवि कौन्सिल में अपील कराई गई। नतीजा तो पहले से ही मालूम था। वहाँ से भी अपील खारिज हुई। यह जानते हुए कि अंग्रेज सरकार कुछ भी न सुनेगी, मैंने सरकार को प्रतिज्ञा-पत्र क्यों लिखा? क्यों अपीलों पर अपीलें तथा दया-प्रर्थनायें की? इस प्रकार के प्रश्न उठ सकते है। मेरी समझ में सदैव यही आया है कि राजनीति एक शतरंज के खेल के समान है। शतरंज के खेलने वाले भली भाँति जानते हैं कि आवश्यकता होने पर किस प्रकार अपने मोहरे मरवा देने पड़ते हैं। *बंगाल आर्डिनेन्स के कैदियों के छोड़ने या उन पर खुली अदालत* में मुकदमा चलाने के प्रस्ताव जब एसेम्बली में पेश किये गये, तो सरकार की ओर से बडे जोरदार शब्दों में कहा गया कि, सरकार के पास पूरा सबूत मौजूद है। खुली अदालत में अभियोग चलाने से गवाहों पर आपत्ति आ सकती है। यदि आर्डिनेन्स के कैदी लेखबद्ध प्रतिज्ञा-पत्र दाखिल कर दें कि वे भविष्य में क्रान्तिकारी आन्दोलन से कोई सम्बन्ध न रखेंगे, तो सरकार उन्हें रिहाई देने के विषय में विचार कर सकती है। बंगाल में दक्षिणेश्वर तथा शोभा बाजार बम-केस आर्डिनेन्स के बाद चले। खुफिया विभाग के डिप्टी सुपरिन्टेण्डेण्ट के क़त्ल का मुकदमा भी खुली अदालत में हुआ, और भी कुछ हथियारों के मुकदमें खुली अदालत में चलाये गये, किन्तु कोई एक भी दुर्घटना या हत्या की सूचना पुलिस न दे सकी। काकोरी षड्यन्त्र केस पूरे डेढ़ साल तक खुली अदालतों में चलता रहा। सबूत

. . . व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

की ओर से लगभग तीन सौ गवाह पेश किये गये। कई मुखबिर तथा इकवाली खुले तौर से घूमते रहे, पर कहीं कोई दुर्घटना या किसी को धमकी देने की कोई सूचना पुलिस ने न दी। सरकार की इन वातों की पोल खोलने की गरज से ही मैंने लेखबद्ध बंधेज सरकार को दिया। सरकार के कथनानुसार जिस प्रकार बंगाल आर्डिनेन्स के कैदियों के सम्बन्ध में सरकार के पास पूरा सबूत था और सरकार उनमें से अनेकों को भयंकर षड्यन्त्रकारी दल का सदस्य तथा हत्याओं का जिम्मेदार समझती तथा कहती थी, तो इसी प्रकार काकोरी के षड्यन्त्रकारियों के लेखबद्ध प्रतिज्ञा करने पर कोई गौर क्यों न किया ? वात यह है कि जबरा मारे रोने न देय। मुझे तो भली भाँति मालूम था कि संयुक्त प्रान्त में जितने राजनैतिक अभियोग चलाये जाते हैं, उनके फैसले खुफ़िया पुलिस के इच्छानुसार लिखे जाते हैं। बरेली पुलिस कानस्टेबलों की हत्या के अभियोग में नितान्त निर्दोष नवयुवकों को फँसाया गया और सी० आई० डी० वालों ने अपनी डायरी दिखलाकर फैसला लिखाया। काकोरी षड्यन्त्र में भी अन्त में ऐसा ही हुआ। सरकार की सब चालों को जानते हुए भी मैंने सब कार्य उसकी लम्बी-लम्बी वातों को पोल खोलने के लिए ही किये। काकोरी के मृत्युदण्ड पाये हुओं की दया-प्रार्थना न स्वीकार करने का कोई विशेष कारण सरकार के पास नहीं। सरकार ने बंगाल आर्डिनेन्स के कैदियों के सम्बन्ध में जो कुछ कहा था, सो काकोरी वालों ने किया। मृत्यु-दण्ड को रद कर देने से देश में किसी प्रकार की शान्ति भंग होने अथवा किसी विप्लव हो जाने की सम्भावना न थी। विशेषतया जब कि देश भर के सब प्रकार के हिन्दू मुसलमान एसेम्बली के सदस्यों ने इसकी

सिफारिश की थी। षड्यन्त्रकारियों की इतनी बड़ी सिफारिश इससे पहले कभी नहीं हुई। किन्तु सरकार तो अपना पासा सीधा रखना चाहती है। उसे अपने बल पर विश्वास है। सर विलियम मेरिस ने ही स्वयं शाहजहाँपुर तथा इलाहाबाद के हिन्दू-मुसलिम दंगे के अभियुक्तों के मृत्यु-दण्ड रद किये हैं, जिनको कि इलाहाबाद हाईकोर्ट से मृत्यु-दण्ड ही देना उचित समझा गया था और उन लोगों पर दिन दहाडे हत्या करने के सीधे सबूत मौजूद थे। ये सजायें ऐसे समय माफ़ की गई थीं, जब कि नित्य नये हिन्दू-मुसलिम दंगे बढ़ते ही जाते थे। यदि काकोरी के कैदियों को मृत्यु-दण्ड माफ करके, दूसरी सजा देने से दूसरों का उत्साह बढ़ता तो क्या इसी प्रकार मजहबी दगों के सम्बन्ध में भी नहीं हो सकता था? मगर वहाँ तो मामला कुछ और ही है, जो अब भारतवासियों के नरम से नरम दल के नेताओं के भी शाही कमीशन के मुकर्रर होने और उसमें एक भी भारतवासी के न चुने जाने, पार्लीमेंट में भारत सचिव लार्ड बर्कनहेड के तथा अन्य मजदूर दल के नेताओं के भाषणों से भली भाँति समझ में आया है कि किस प्रकार भारतवर्ष को गुलामी की जंजीरों में जकड़े रहने की चालें चली जा रही हैं।

मैं प्राण त्यागते समय निराश नहीं हूँ कि हम लोगों के बलिदान व्यर्थ गये। मेरा तो विश्वास है कि हम लोगों की छिपी हुई आहों का ही यह नतीजा हुआ कि लार्ड बर्कनहेड के दिमाग में परमात्मा ने एक विचार उपस्थित किया कि हिन्दुस्तान के हिन्दू-मुसलिम झगड़ों का लाभ उठाओ और भारतवर्ष जंजीरें और कस दो। गये थे रोजा छोड़ने नमाज गले पड़ गई! भारतवर्ष के प्रत्येक विख्यात राजनैतिक दल ने और हिन्दुओं के तो लगभग सभी

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर अजमेर

तथा मुसलमानों के भी अधिकतर नेताओं ने एक स्वर होकर रायल कमीशन की नियुक्ति तथा उसके सदस्यों के विरुद्ध घोर विरोध किया है, और अगली कांग्रेस (मद्रास) पर सब राजनैतिक दल के नेता तथा हिन्दू-मुसलमान एक होने जा रहे हैं। वाइसराय ने जब हमें काकोरी के मृत्युदण्ड वालों की दया-प्रर्थना अस्वीकार की थी, उसी समय मैंने श्रीयुत मोहनलाल जी को पत्र लिखा था कि हिन्दुस्तानी नेताओं को तथा हिन्दू-मुसलमानों को अगली कांग्रेस पर एकत्रित हो हम लोगों की याद मनानी चाहिए। सरकार ने अशफ़ाक उल्ला को रामप्रसाद का दाहिने हाथ करार दिया। अशफ़ाकउल्ला कट्टर मुसलमान होकर पक्के आर्यसमाजी रामप्रसाद का क्रान्तिकारी दल के सम्बन्ध में यदि दाहना हाथ बन सकते हैं, तब क्या भारतवर्ष की स्वतन्त्रता के नाम पर हिन्दू मुसलमान अपने निजी छोटे-छोटे फायदों का खयाल न करके आपस में एक नहीं हो सकते?

परमात्मा ने मेरी पुकार सुन ली और मेरी इच्छा पूरी होती दिखाई देती है। मैं तो अपना कार्य कर चुका। मैंने मुसलमानों में से एक नवयुवक निकाल कर भारतवासियों को दिखला दिया, जो सब परीक्षाओं में पूर्णतया उत्तीर्ण हुआ। अब किसी को यह कहने का साहस न होना चाहिए कि मुसलमानों पर विश्वास न करना चाहिए। पहला तजर्वा था, जो पूरी तौर से कामयाब हुआ। अब देशवासियों से यही प्रार्थना है कि यदि वे हम लोगों के फाँसी पर चढ़ने से ज़रा भी दुखित हुए हों, तो उन्हें यही शिक्षा लेनी चाहिए कि हिन्दू-मुसलमान तथा सब राजनैतिक दल एक होकर कांग्रेस को अपना प्रतिनिधि मानें। जो कांग्रेस तय करे, उसे सब पूरी तौर से मानें और उस पर अमल करें। ऐसा करने के बाद वह दिन बहुत

दूर न होगा जब कि अंग्रेजी सरकार को भारतवासियों की माँग के सामने सिर झुकाना पड़े, और यदि ऐसा करेंगे तब तो स्वराज्य कुछ दूर नहीं। क्योंकि फिर तो भारतवासियों को काम करने का पूरा मौका मिल जायगा। हिन्दू-मुसलिम एकता ही हम लोगों की यादगार तथा अन्तिम इच्छा है, चाहे वह कितनी कठिनता से क्यों न प्राप्त हो। जो मैं कह रहा हूँ वही श्री अशफ़ाकउल्ला खाँ वारसी का भी मत है, क्योंकि अपील के समय हम दोनों लखनऊ जेल में फाँसी की कोठरियों में आमने सामने कई दिन तक रहे थे। आपस में हर तरह की बातें हुई थी। गिरफ्तारी के बाद से हम लोगों की सज़ा पढ़ने तक श्री अशफ़ाकउल्ला खाँ की बड़ी भारी उत्कट इच्छा यही थी, कि वह एक बार मुझसे मिल लेते, जो परमात्मा ने पूरी कर दी।

श्री अशफ़ाकउल्ला खाँ तो अंग्रेज़ी सरकार से दया-प्रार्थना करने पर राज़ी ही न थे। उनका तो अटल विश्वास यही था कि खुदावंद करीम के अलावा किसी दूसरे से दया की प्रार्थना न करनी चाहिए, परन्तु मेरे विशेष आग्रह से ही उन्होंने सरकार से दया-प्रार्थना की थी। इसका दोषी मैं ही हूँ, जो मैंने अपने प्रेम के पवित्र अधिकारों का उपयोग करके श्री अशफ़ाकउल्ला खाँ को उनके दृढ़ निश्चय से विचलित किया। मैंने एक पत्र द्वारा अपनी भूल स्वीकार करते हुए भ्रातृ-द्वितीया के अवसर पर गोरखपुर जेल से श्री अशफ़ाक को पत्र लिखकर क्षमा-प्रार्थना की थी। परमात्मा जाने कि वह पत्र उनके हाथों तक पहुँचा भी या नहीं। खैर! परमात्मा की ऐसी ही इच्छा थी कि हम लोगों को फाँसी दी जाय, भारतवासियों के जले हुए दिलों पर नमक पड़े, वे बिलबिला उठें और हमारी आत्माएँ उनके कार्य को देखकर सुखी

हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

हों। जब हम नवीन शरीर धारण करके देश-सेवा में योग देने को उद्यत हों, उस समय तक भारतवर्ष की राजनैतिक स्थिति पूर्णतया सुधरी हुई हो। जनसाधारण का अधिक भाग सुशिक्षित हो जाय। ग्रामीण लोग भी अपने कर्त्तव्य समझने लग जायँ।

प्रिवि कौंसिल में अपील भिजवा कर मैंने जो व्यर्थ का अपव्यय करवाया, उसका भी एक विशेष अर्थ था। सब अपीलों का तात्पर्य यह था कि मृत्यु-दण्ड उपयुक्त दण्ड नहीं। क्योंकि न जानें किस की गोली से आदमी मारा गया। अगर डकैती डालने की ज़िम्मेदारी के खयाल से मृत्यु-दण्ड दिया गया तो चीफ़ कोर्ट के फैसले के अनुसार भी मैं ही डकैतियों का ज़िम्मेदार तथा नेता था, और प्रान्त का नेता भी मैं ही था। अतएव मृत्यु-दण्ड तो अकेला मुझे ही मिलना चाहिए था। अन्य तीन को फाँसी नहीं देनी चाहिए थी। इसके अतिरिक्त दूसरी सज़ाएँ सब स्वीकार होतीं। पर ऐसा क्यों होने लगा? मैं विलायती न्यायालय की भी परीक्षा करके स्वदेश वासियों के लिए उदाहरण छोड़ना चाहता था, कि यदि कोई राज-नैतिक अभियोग चले तो वे कभी भूलकर के भी किसी अँग्रेज़ी अदालत का विश्वास न करें। तबियत आये तो ज़ोरदार बयान दें। अन्यथा मेरी तो यही राय है कि अँग्रेज़ी अदालत के सामने न तो कभी कोई बयान दें और न कोई सफ़ाई पेश करें। काकोरी षड्यन्त्र के अभियोग से शिक्षा प्राप्त कर लें। इस अभियोग में सब प्रकार के उदाहरण मौजूद हैं। प्रिवि कौन्सिल में अपील दाखिल कराने का एक विशेष अर्थ यह भी था कि मैं कुछ समय तक फाँसी की तारीख टलवा कर यह परीक्षा करना चाहता था कि नवयुवकों में कितना दम है, और देशवासी कितनी सहायता दे सकते हैं। इसमें मुझे बड़ी

निराशापूर्ण असफलता हुई। अन्त में मैंने निश्चय किया था कि यदि हो सके, तो जेल से निकल भागूं। ऐसा हो जाने से सरकार को अन्य तीनों फांसी वालों की फांसी की सजा माफ़ कर देनी पड़ेगी, और यदि न करते तो मैं करा लेता। मैंने जेल से भागने के अनेकों प्रयत्न किये, किन्तु बाहर से कोई सहायता न मिल सकी। यहीं तो हृदय पर आघात लगता है कि जिस देश मे मैंने इतना बड़ा क्रान्तिकारी आन्दोलन तथा षड्यन्त्रकारी दल खड़ा किया था, वहाँ से मुझे प्राण-रक्षा के लिए एक रिवाल्वर तक न मिल सका! एक नवयुवक भी सहायता को न आ सका! अन्त में फांसी पा रहा हूँ। फांसी पाने का मुझे कोई भी शोक नहीं, क्योंकि मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ, कि परमात्मा को यही मंजूर था। मगर मैं नवयुवको से फिर भी नम्र निवेदन करता हूँ कि जब तक भारतवासियों की अधिक संख्या सुशिक्षित न हो जाय, जब तक उन्हें कर्तव्य-अकर्तव्य का ज्ञान न हो जाय, तब तक वें भूल कर भी किसी प्रकार के क्रान्तिकारी षड्यन्त्रों में भाग न लें। यदि देश सेवा की इच्छा हो तो खुले आन्दोलनों द्वारा यथाशक्ति कार्य करें, अन्यथा उनका बलिदान उपयोगी न होगा। दूसरे प्रकार से इससे अधिक देश सेवा हो सकती है, जो ज्यादा उपयोगी सिद्ध होगी। परिस्थिति अनुकूल न होने से ऐसे आन्दोलनों मे परिश्रम प्रायः व्यर्थ जाता है। जिनकी भलाई के लिए करो, वही बुरे-बुरे नाम धरते हैं, और अन्त में मन-ही-मन कुढ़ कुढ़ कर प्राण त्यागने पड़ते हैं।

देशवासियों से यही अन्तिम विनय है कि जो कुछ करें, सब मिलकर करें, और सब देश की भलाई के लिए करें। इसी से सबका भला होगा।

मरते, 'बिस्मिल' 'रोशन' 'लहरी' 'अशफ़ाक' अत्याचार से।
होंगे पैदा सैकड़ों इनके रुधिर की धार से॥

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
। सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर अ...

## चन्द राष्ट्रीय अशआर और कवितायें

मेरी यह इच्छा हो रही है कि मैं उन कविताओं में से भी चन्द का यहाँ उल्लेख कर दूं, जो कि मुझे प्रिय मालूम होती हैं और मैं ने यथा समय कंठस्थ की थीं।

—रामप्रसाद 'बिस्मिल'

(१)

भूखे प्राण तजें भले, केहरि खरु नहिं खाहिं।
चातक प्यासे ही रहें, विन स्वांती न अघाहिं॥
विन स्वांती न अघाहिं, हंस मोती ही खावे।
सती नारि पतिव्रता नेक नहिं चित्त डिगावे॥
तिमि 'प्रताप' नहिं डिगे, होहिं चह सब फिन रूखे।
अरि सन्मुख नहिं नवें, फिरें चहें वन बन भूखे॥

(२)

चाह नहीं है सुर बाला के गहनों में गूंथा जाऊँ।
चाह नहीं है प्यारी के गल पड़ूं हार में ललचाऊँ॥
चाह नहीं है राजाओं के शव पर मैं डाला जाऊँ।
चाह नहीं है देवों के सिर चढ़ूं भाग्य पर इतराऊँ॥
मुझे तोड़कर हे वनमाली उस पथ में तू देना फेंक।
मातृभूमि हित शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक॥

(३)

भारत जननि तेरी जय हो, विजय हो!
तू शुद्ध और ज्ञान की आगार,
तेरो विजय सूर्य माता उदय हो॥

हों ज्ञान सम्पन्न जीवन सुफल होवे,
संतान तेरी अखिल प्रेममय हो ॥
आवें पुनः कृष्ण देखें दशा तेरी,
सरिता सरों में भी बहता प्रणय हो ॥
सावर के संकल्प पूरण करें ईश,
विघ्न और बाधा सभी का प्रलय हो ॥
गांधी रहें और तिलक फिर यहां आवें,
अरविंद, लाला, महेन्द्र की जय हो ॥
तेरे लिये जेल हो स्वर्ग का द्वार,
बेड़ी की झनझन में वीणा की लय हो ॥
कहता खलिल आज हिन्दू—मुसलमान,
सब मिल के गावो जननि तेरी जय हो ॥

(४)

कोउ न सुख सोया कर के प्रीति ।
सुन्दर कली सेमर की देखो, सुगनाने मन मोहा । कर के प्रीति० ॥
मारी चोंच भुआ जब देखा पटक पटक सिर रोया । कर के प्रीति० ॥
सुन्दर कली कमल की देखो, भँवरा का मन मोहा । कर के प्रीति० ॥
सारी रैन सम्पुट में बीती, तड़प तड़प जी खोया । कर के प्रीति० ॥

(५)

दूँ यह मये खूबी है, ऐ जलवये जानाना ।
हर गुल है तेरा बुलबुल, हर शमा है परवाना ॥
मस्ती में भी सर अपना साक़ी के कदम पर हो ।
इतना तो करम करना, ऐ लग़जिशे मस्ताना ॥
यारब इन्हीं हाथों से पीते रहें मस्ताना ।
यारब वही साक़ी हो, यारब वही पैमाना ॥

आखें हैं तो उसकी हैं, किसमत है तो उसकी है ।
जिस ने तुझे देखा है, ऐ जलवा-ऐ जानानां ॥
छेड़ो न फ़रिश्तो तुम ज़िक्रे ग़मे जानानां ।
क्यों याद दिलाते हो भूला हुआ अफ़साना ॥
ये चश्मे हकीकी भी, क्या तेरे सिवा देखें ।
सिजदे से हमें मतलब काबा हो या बुतखाना ॥
साक़ी को दिखा देंगे अंदाज फ़कीराना ।
टूटी हुई बोतल है टूटा हुआ पैमाना ॥

(६)

मुर्गे दिल मत रो यहां आँसू बहाना है मना ।
अंदलीबों को कफ़स में चहचहाना है मना ॥
हाय जल्लादी तो देखो कह रहा सय्याद यह ।
वक्ते जिबहा बुलबुलों को फड़फड़ाना है मना ॥
वक्ते जिबहा जानवर को देते हैं पानी पिला ।
हजरते इन्सान को पानी पिलाना है मना ॥
मेरे खूं से हाथ रंग कर बोले क्या अच्छा है रंग ।
अब हमें तो उम्र भर मरहम लगाना है मना ॥
ऐ मेरे जख्मे जिगर नासूर बनना है तो बन ।
क्या करूँ इस जखम पर मरहम लगाना है मना ॥
खूने दिल पीते हैं असगर खाते हैं लख्ते जिगर ।
इस कफ़स में कैदियों को आबोदाना है मना ॥

(७)

वतन की आबरू का पास देखें कौन करता है ।
सुना है आज मक़तल में हमारा इम्तहां होगा ॥
जुदा मत हो मेरे पहलू से ऐ दर्दे वतन हरगिज ।
न जाने बादे मुर्दन मैं कहां और तू कहां होगा ॥

शहीदों की चिताओं पर लुड़ेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मरने वालों का यही बाक़ी निशाँ होगा॥
इलाही वह भी दिन होगा जब अपना राज देखेंगे।
जब अपनी ही ज़मीं होगी और अपना आसमाँ होगा॥

(८)

इन्तहा सब का कर लिया हम ने,
सारे आलम को आज़मा देखा।
नज़र आया न कोई अपना अज़ीज़,
आँख जिस की तरफ़ उठा देखा।
कोई अपना न निकला महरमे राज़,
जिसको देखा सो बेवफ़ा देखा।
अलग़रज़ सब को इस ज़माने में,
अपने मतलब का आशना देखा।

(९)

हैफ़ हम जिस पै कि तैयार थे मर जाने को।
यकबयक हम से छुड़ाया उसी काशाने को॥
आसमाँ क्या यही बाक़ी था ग़ज़ब ढाने को।
क्या कोई और बहाना न था तरसाने को॥
ताके गुरबत में जो रक्खा हमें तड़पाने को॥१॥
फिर न गुलशन में हमें लायेगा सय्याद कभी।
क्यों सुनेगा तू हमारी कोई फ़रियाद कभी॥
याद आयेगा किसे यह दिले नाशाद कभी।
हम भी इस बाग़ में थे क़ैद से आज़ाद कभी॥
अब तो काहे को मिलेगी यह हवा खाने को।
दिल फ़िदा करते हैं क़ुरबान [
पास जो

खाना-वीरान कहाँ देखिये घर करते हैं।
खुश रहो अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं॥
जाके आबाद करेंगे किसी वीराने को॥३॥
देखिये कब यह असीराने मुसीबत छूटें।
मादरे-हिन्द के अब भाग खुले या फूटें॥
देश सेवक सभी अब जेल में मूजें कूटें।
हम यहाँ ऐश से दिन-रात बहारें लूटें॥
क्यों न तरजीह दें इस जीने पे मर जाने को॥४॥
कोई माता की उमीदों पे न डाले पानी।
ज़िंदगी भर को हमें भेज के काले पानी॥
मुँह में जल्लाद हुए जाते हैं छाले पानी।
आब खंजर का पिला कर के दुआ ले पानी॥
भरने क्यों जायँ हम इस उम्र के पैमाने को॥५॥
हम भी आराम उठा सकते थे घर पर रहकर।
हम को भी पाला था माँ-बाप ने दुख सह-सहकर॥
वक्ते रुखसत उन्हें इतना भी न आये कहकर।
गोद में आँसू जो टपकें कभी रुख से बहकर॥
तिफ़्ल उनको ही समझ लेना जी बहलाने को॥६॥
देश-सेवा ही का बहता है लहू नस-नस में।
अब तो खा बैठे हैं चित्तौर के गढ़ की कसमें॥
सर फ़रोशी की अदा होती हैं यूँ ही रसमें।
भाई खंजर से गले मिलते हैं सब आपस में॥
बहनें तैयार चिताओं पे हैं जल जाने को॥७॥
नौजवानों जो तबीयत में तुम्हारी खटके।
याद कर लेना कभी हम को भी भूले-भटके॥
आप के उजवे बदन होवें जुदा कट-कट के।
और सर चाक हो माता का कलेजा फटके॥
पर न माथे पे शिकन आये कसम खाने को॥८॥

अपनी किस्मत में अज़ल से ही सितम रक्खा था।
रंज रक्खा था मुहिन रक्खा था ग़म रक्खा था॥
किसको परवाह थी और किसमें यह दम रक्खा था।
हमने जब वादिये गुरबत में कदम रक्खा था॥
दूर तक यादे-वतन आई थी समझाने को॥९॥
अपना कुछ ग़म नहीं पर यह ख़याल आता है।
मादरे हिन्द पे कब तक यह ज़वाल आता है॥
हरदयाल आता है योरुप से न पाल आता है।
कौम अपनी पे तो रह-रह के मलाल आता है॥
मुंतज़िर रहते हैं हम ख़ाक में मिल जाने को॥१०॥
मैकदा किसका है यह जामे सबू किस का है।
वार किस का है मेरी जां यह गुलू किस का है॥
जो बहे कौम की ख़ातिर वह लहू किस का है।
आसमां साफ़ बता दे तू उदू किस का है॥
क्यों नये रंग बदलता है ये तड़पाने को॥११॥
दर्दमंदों से मुसीबत की हलावत पूछो।
मरने वालों से ज़रा लुत्फ़ शहादत पूछो॥
चश्म मुश्ताक से कुछ दीद की हसरत पूछो।
कुश्तये नाज़ से ठोकर की कयामत पूछो॥
सोज़ कहते हैं किसे पूछो तो परवाने को॥१२॥
बात तो जब है कि इस बात की ज़िद्दें ठानें।
देश के वास्ते कुरबान करें सब जानें॥
लाख समझाये कोई एक न उसकी मानें।
कहता है ख़ून से मत अपना गरेबां सानें॥
नासिहा आग लगे तेरे इस समझाने को॥१३॥
न मुयस्सर हुआ राहत में कभी मेल हमें।
जान पर खेल के भाया न कोई खेल हमें॥

...साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर ....

एक दिन को भी न मंजूर हुई 'वेल' हमें।
याद आयेगा बहुत लखनऊ का जेल हमें॥
लोग तो भूल ही जायेंगे इस अफ़साने को ॥१४॥
नौजवानों यही मौका है उठो खुल खेलो।
खिदमते कौम में जो बला आये खुशी से झेलो॥
देश के सदक़ में माता को जवानी दे दो।
फिर मिलेंगी न यह माता की दुआयें ले लो॥
देखें कौन आता है इरशाद बजा लाने को ॥१५॥

(१०)

न किसी की आंख का नूर हूँ न किसी के दिल का करार हूँ।
जो किसी के काम न आ सके, मैं वह एक मुश्तेगुबार हूँ॥
न दवाये दर्दे जिगर हूँ मैं न किसी की मीठी नजर हूँ मैं।
न इधर हूँ मैं न उधर हूँ मैं न शकेब हूँ न क़रार हूँ॥
मैं नहीं हूँ नग़माये जां फ़िज़ां, मुझे सुन के कोई करेगा क्या।
मैं बड़े वियोगी की हूँ सदा मैं बड़े दुखी की पुकार हूँ॥
न मैं किसी का हूँ दिलरुबा, न किसी के दिल में बसा हुआ।
मैं जमीन की पीठ का बोझ हूँ मैं फलक के दिल का गुबार हूँ॥
मेरा बखत मुझ से बिछड़ गया, मेरा रंग-रूप बिगड़ गया।
जो चमन खिज़ा से उजड़ गया मैं उसी की फ़सले बहार हूँ॥
कोई पढ़ने फ़ातिहा आये क्यों कोई आके शमा जलाये क्यों।
कोई चार फूल चढ़ाये क्यों कि मैं बेकसी का मज़ार हूँ॥
न 'ज़फ़र' मैं किसी का रक़ीब हूँ न मैं किसी का हबीब हूँ।
जो बिगड़ गया वह नसीब हूँ, जो उजड़ गया वह दयार हूँ॥

(११)

उरियानी न हैरानी न ये पांव में छाले।
हम भी थे कभी आह बड़े नाज़ों के पाले॥
जुल खाया मिटे उड़ गई आज़ादी औ राहत।
अल्लाह यह दिन अपने तो दुश्मन पै भी न डाले॥

मारा है मिटाया है हमें आह उन्हीं ने।
कर बैठे थे हम जानो जिगर जिन के हवाले॥
हम ने तो हमेशा तेरी खुशनूदी ही चाही।
खुद बिगड़े मगर काम तेरे सारे संभाले॥

उसका यह सिला हमको मिला उफ़ री मुहब्बत।
बरबाद किया डाल दिय जान के लाले॥
बेबस हुए ज़लील हुए मिट तो चुके हम।
अब और क़यामत भी जो ढाना हो सो ढाले॥

सौगन्द है तुझ को तेरे उस जोरो जफ़ा की।
जी भर के हमें जितना सताना हो सता ले॥
किसमत का कभी अपने भी चमकेगा सितारा।
हम भी कभी देखेंगे आज़ादी के उजाले॥

बदले की लहर तब तेरे सर चढ़ के कहेगी।
था ज़हर पै केचुल से था लाचार थे काले॥

(१२)

मानस हों तो वहीं रसखान बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हों तो कहा बस मेरो चरौं नित नन्द की धेनु मंझारन॥
पाहन हो तो वही गिरि को जो कियो ब्रज छत्र पुरन्दर धारन।
जो खग हों तो बसेरो करौं वहि कालिन्दी कूल कदम्ब की डारन॥

× × × ×

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूं पुर को तजि डारौं।
आठहूं सिद्धि नवौ निधि को सुख नन्द को धेनु चराय बिसारौं॥
रसखान सदा इन नैनन सों ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं।
कोटिन हूं कलधौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं॥

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहाँ
हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहि

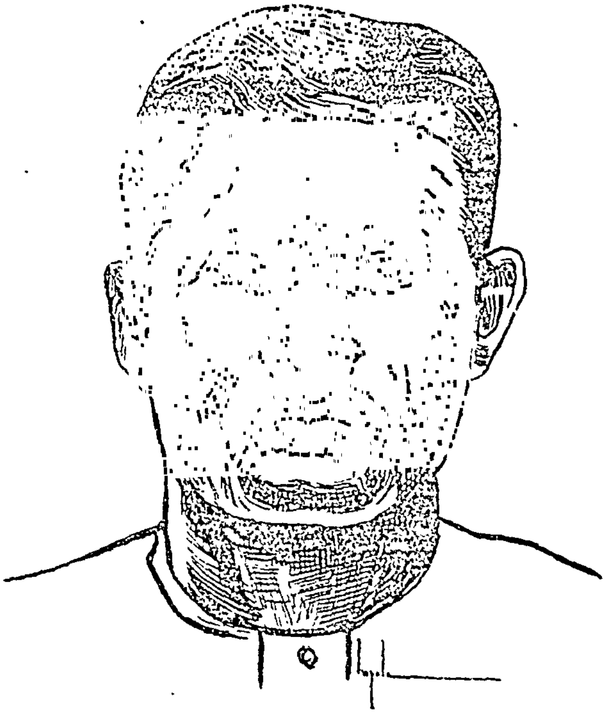

अमर शहीद श्री रोशनसिंह

# परिशिष्ट

## १

## पृष्ठभूमि

*श्री मन्मथनाथ गुप्त*

जब श्रद्धेय श्री बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने मुझे यह बताया कि वे पं० रामप्रसाद बिस्मिल की फांसीघर में लिखी हुई आत्मकथा पुन: प्रकाशित करने की बात सोच रहे हैं, तो साथ ही उन्होंने यह चिन्ता व्यक्त की कि उसे ज्यों-का-त्यों छापना उचित है या नहीं, क्योंकि इस सम्बन्ध में कुछ लोगों को सन्देह है। इस पर मैंने छूटते ही यह राय दी कि किसी को भी एक शहीद की अन्तिम धरोहर में अपनी इच्छानुसार काट-छांट करने का अधिकार नहीं है और वह ज्यों-की-त्यों छपनी चाहिए।

मुझे काकोरी षड्यन्त्र या भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के सम्बन्ध में इस अवसर पर कुछ नहीं कहना है, क्योंकि उस सम्बन्ध में मेरा वक्तव्य 'सशस्त्र क्रान्ति चेष्टा का रोमांचकारी इतिहास' तथा 'क्रान्तिकारी की आत्मकथा' में प्रकाशित हो चुका है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर मैंने कुछ अन्य पुस्तकें भी लिखी—जैसे 'चन्द्रशेखर आजाद', 'रामप्रसाद बिस्मिल', इत्यादि-इत्यादि, जिनमें से अधिकांश अब अप्राप्य हैं। समय-समय पर इस सम्बन्ध में बहुत से लेख भी लिखे है। 'राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास' नामक वृहत् पुस्तक में मैंने सम्पूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन के परिप्रेक्षित में पुराने क्रान्तिकारी आन्दोलन का स्थान और उसका हाल बताने की चेष्टा की है।

मेरा इस सम्बन्ध में जो सबसे महत्त्वपूर्ण वक्तव्य रहा, वह संक्षेप में यों है—क्रान्तिकारी आन्दोलन भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का एक अविभाज्य अंग है। यह एक सर्वसम्मत मत रहा कि जहां तक त्याग और तपस्या का सम्बन्ध है, भारत के क्रान्तिकारी स्वतन्त्रता आन्दोलन के शीर्षस्थान पर रहे। जब कांग्रेस केवल नौकरी मांगने वाले लोगों की एक संस्था मात्र रही, जो बड़े दिन के अवसर पर मिला करती थी, उस समय भी क्रान्तिकारी फांसी के तख्ते

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर

पर जा रहे थे। इस उपादान को तो सभी स्वीकार करते हैं, पर यह बहुत कम लोगों को मालूम है कि विचारधारा के क्षेत्र में भी क्रान्तिकारी सबसे आगे रहे। कांग्रेस ने तो लाहौर अधिवेशन (१९२९) में पूर्ण स्वतन्त्रता का नारा दिया, पर क्रान्तिकारी उस समय भी पूर्ण स्वतन्त्रता का जयघोष कर रहे थे, जब गांधी जी ने दक्षिण अफ्रीका में भारतियों के मामूली-मामूली अधिकारों के लिए लड़ना भी शुरू नहीं किया था। यहाँ तक कि जब १९२१ में असहयोग आन्दोलन छिड़ा, जिसने कांग्रेस के ढाँचे को बदल कर रख दिया, उस समय भी गांधी जी ने कांग्रेस के लक्ष्य की परिभाषा नहीं की, यद्यपि बाबू भगवानदास जैसे लोग बार-बार लक्ष्य की परिभाषा का आग्रह कर रहे थे। जब यह आन्दोलन बहुत जोरों पर था, उस समय होने वाले अहमदाबाद अधिवेशन में गांधी जी ने हसरत मोहानी द्वारा पेश किए हुए पूर्ण स्वतन्त्रता के प्रस्ताव का विरोध किया।

अब समाजवाद के लक्ष्य को लीजिए। कांग्रेस ने आवड़ी में समाजवादी ढाँचे के समाज को अपना लक्ष्य करार दिया, पर जब १९२१ के असहयोग आन्दोलन को चौरी-चौरा हत्याकाण्ड के बहाने से वापस ले लिया गया और पुराने क्रान्तिकारियों ने फिर से क्रान्तिकारी संगठन किया, तो उन्होंने अपने सामने एक ऐसे समाज को लक्ष्य के रूप में रखा, जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण असम्भव होगा। पण्डित रामप्रसाद जिस 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' के नेताओं में थे, उस दल के 'पीले कागज' नाम से उल्लिखित संविधान में यह लक्ष्य इन्हीं शब्दों में वर्णित था। जब काकोरी षड्यन्त्र चला और पुराने क्रान्तिकारी गिरफ्तार हो गए, और दल की बागडोर चन्द्रशेखर आज़ाद, भगतसिंह आदि लोगों के हाथ में आई तो उन्होंने दल का नाम बदल कर 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन या आर्मी' रख दिया। यह लगभग १९२७-२८ की बात है। स्मरण रहे कि उस समय तक भारत में सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना नहीं हुई थी और कम्युनिस्ट पार्टी की भी नाम मात्र कागजी रूप से ही स्थापना हुई थी। कांग्रेस ने तो इसके लगभग तीस साल बाद समाजवाद का नारा दिया, वह नारा कहाँ तक केवल नारेबाजी मात्र है और कहाँ तक ईमानदारी पूर्ण है, इसे तो भविष्य का इतिहास ही बतला सकता है।

दूसरे शब्दों में मैंने क्रान्तिकारी आन्दोलन पर जो कुछ लिखा, उसमें केवल कुछ व्यक्तियों के वीरतापूर्ण कृत्यों को ही महत्त्व नहीं दिया, बल्कि मैंने अकाट्य तथ्यों के आधार पर यह प्रमाणित किया है कि विचारों और चिन्तन की दृष्टि से भी यह पुराने क्रान्तिकारी अग्रणी रहे। स्मरण रहे कि यहाँ विचार तथा चिन्तन शब्द से मैं जबानी जमा-खर्च को नहीं लेता हूँ क्योंकि जबानी जमा-खर्च तो सभी कर सकते हैं और सच तो यह है कि विश्वविद्यालय के अध्यापक इस कार्य को अधिक सुचारु रूप से कर सकते हैं। पर मैं ऐसे चिन्तन को चिन्तन मानता ही नहीं और न ऐसे चिन्तन की इतिहास पर कोई छाप ही पड़ती है, जो गद्देदार कुर्सियों पर बैठकर ऊँचे-ऊँचे आदर्शों की बखान तक सीमित हो। चिन्तन के साथ-साथ कार्य भी होना चाहिए। उस कार्य में जोखिम उठाना और बलिदान करना ही चिन्तन की असलियत को प्रमाणित करता है। केवल यही नहीं जैसा कि अब लगभग विस्मृत इटैलियन क्रान्तिकारी मैज़िनी ने कहा था—"Ideas ripen quickly when nourished by the blood of martyrs." यानी शहीदों के रक्त से पुष्ट होकर ही विचार जल्दी परिपक्व होते हैं। सच तो यह है कि विचार या चिन्तन तब तक उस बिजली के तार की तरह हैं, जिसमें अभी करेण्ट नहीं है, जब तक कि उसके लिए जोखिम न उठाई जाए। जब विचार जनता की थाती का अंश बन जाता है, तभी उसमें इतिहास निर्माण की शक्ति आती है।

क्रान्तिकारी शहीद जनता से अपने ही ढंग से सम्पर्क बनाते थे। इस प्रक्रिया को भी बहुत कम लोगों ने समझा है। हम इस सम्बन्ध में केवल एक दो बात कह कर असली विषय पर आवेंगे।

जिस समय १९०८ के अलीपुर जेल में पिस्तौल मँगाकर मुखबिर नरेन्द्र गोस्वामी का काम तमाम करने वाले कन्हाईलाल दत्त को फाँसी दी गई और उनकी लाश चिता पर चढ़ाई गई, उस समय एक लाख आदमी उस चिता के इर्द-गिर्द खड़े होकर दाढ़ मार-मार कर रो रहे थे। जब शहीद का नश्वर शरीर जल गया तो यह विराट् जनता चिता की ओर लपकी और कुछ क्षण बाद वहाँ राख का एक कण भी नहीं दिखाई पड़ा। लोगों ने गण्डा तावीज बनाने के लिए राख लूट ली ... सन्तानें भी उसी तरह निर्भीक, वीर और देशभक्त हों।

पुस्तकें हमारे यहां
। साहित्य मंदिर अपने

इसी प्रकार उस घटना की याद की जाए, जब सरदार भगतसिंह ने केन्द्रीय असेम्बली में बम डाला था और साथ-ही-साथ कुछ पर्चे फेंके थे, जिनका प्रारम्भ एक फ्रेंच क्रान्तिकारी के इन शब्दों से होता था—'बहरों को सुनाने के लिए धड़ाके की जरूरत है।'

साथ ही उन्होंने 'इनक़लाब जिन्दाबाद' का नारा पहले-पहल भारत में बुलन्द किया, जो तब से भारत के हर प्रकार के क्रान्तिकारी आन्दोलन का प्रधान नारा बन चुका है। जब भगतसिंह तथा उनके साथी राजगुरु और सुखदेव को फाँसी हुई, तो उस समय भारत में कैसी उथल-पुथल मची, इसका विवरण उस समय की पत्र-पत्रिकाओं में मिल सकता है। स्वयं श्री जवाहरलाल नेहरू ने यह लिखा है कि उन दिनों भारत में भगतसिंह की जनप्रियता गाँधी जी से किसी प्रकार कम नहीं थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि क्रान्तिकारियों के कुछ अपने विचार थे, वे उन विचारों के लिए लड़ने-मरने को तैयार थे, साथ ही उनके अपने तरीके थे, जिनसे वे जनता को प्रभावित करते थे। उन क्रान्तिकारियों ने भारत के मानस-पटल पर कितनी गहरी छाप डाली है, इसका प्रमाण हमें गत दस वर्षों में प्रकाशित होने वाले हिन्दी उपन्यासों और कहानियों में भी एक हद तक मिल सकता है, जिनमें जब भी पात्र-पात्रियों में कोई बौद्धिक तर्क-वितर्क होता है तो क्रान्तिकारी ज़रूर आ जाते हैं।

सूत्र रूप में इस प्रकार एक पृष्ठभूमि तैयार कर लेने के बाद अब मैं असली विषय पर आता हूँ। क्रान्तिकारी सामूहिक रूप से बहुत ऊँचे लोग थे। बात यह है कि जो उस उच्चता से उतरता था और कई लोग उतर कर मुखबिर तक हो जाते थे, वे क्रान्तिकारी रहते ही नहीं थे, यानी उनका नाम फौरन उस सूची से कट जाता था। इसीलिए क्रान्तिकारी शब्द अपने शुद्ध रूप में ही रहता था।

पर जब हम वैयक्तिक सतह पर उतरते हैं तो हम देखते हैं कि केवल भारत के ही नहीं सभी देशों के क्रान्तिकारी राग-द्वेषपूर्ण होते हैं, उनमें भलाई और बुराई दोनों पाई जाती है। पण्डित रामप्रसाद की आत्मकथा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जिस समय संघर्ष की लौ धीमी पड़ जाती है, उस समय कई तरह की छोटाइयाँ सामने आती हैं। ठीक भी है क्योंकि क्रान्तिकारी तो तभी तक महान् है, जब तक कि वह अपने युग का वाहन है। जब उसका

यह वाहनत्व कमजोर पड़ जाता है और वैयक्तिक बातें उभर कर सामने आती हैं तो आप उसकी आँतों को उधेड़ कर देख सकते हैं कि उनमें भी उसी प्रकार से तमाम तरह की चीजें भरी होती हैं, जो दूसरे लोगों में पाई जाती हैं।

अब मैं ऐसी बातें लिखने जा रहा हूँ जो मैंने क्रान्तिकारी आन्दोलन सम्बन्धी अपनी किसी भी पुस्तक मे पहले नही लिखी, क्योंकि उसकी जरूरत नही थी। अब जब कि यह आत्मकथा जनता के हाथों में जाएगी तो कई तरह के प्रश्न उठेंगे। पण्डित रामप्रसाद ने जो बातें लिखी हैं, उनमे सबसे अधिक प्रश्न इस बात पर उठेंगे कि क्या पण्डित जी ने अपने दल के बंगाली नेताओं के सम्बन्ध मे जो बातें लिखी हैं, वे सच हैं ? अब देखिए कि काकोरी षड्यन्त्र मे कौन-कौन बंगाली नेता थे। सर्वोपरि श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल थे, जो दल के प्रधान नेता थे। वे रास बिहारी बोस के दाहिने हाथ समझे जाते थे और स्वदेशी या बंग-भंग युग से क्रान्तिकारी आन्दोलन में थे। प्रथम महायुद्ध के समय बनारस षड्यन्त्र मे उन्हे नेता करार दिया गया था और उन्हें आजीवन काले पानी की सजा दी गई थी। युद्ध में अंग्रेजो की जीत हो जाने पर आम माफी मे सैंकड़ों दूसरे क्रान्तिकारियो के साथ अण्डमन से वे भी रिहा कर दिए गए। असहयोग के जमाने में वे चुपचाप रहे और ज्यों ही असहयोग आन्दोलन समाप्त हुआ, त्यों ही क्रान्तिकारी संगठन करने के लिए मैदान में कूद पड़े। वे बहुत ऊँचे दर्जे के विद्वान् थे और उन्हें काकोरी षड्यन्त्र में बाद को चलकर आजीवन कालेपानी की सजा हुई थी। उससे रिहा होने के बाद वे दूसरे महायुद्ध के समय नजरबन्द कर लिए गए। उसी अवस्था में उन्हें तपेदिक हो गई और सन् १९४२ में जब उनके लगभग सभी पुराने साथी जेल में थे वे रोग के कारण छोड़ दिए गए और थोड़े ही दिनों में उनका देहान्त हो गया। उनकी लिखी हुई कई पुस्तकें हैं, जिनमें 'बन्दी जीवन' क्रान्तिकारियों का क्लासिक बन गया था।

उस समय के दूसरे बंगाली नेता श्री योगेशचन्द्र चटर्जी थे। वे भी बहुत पुराने जमाने से क्रान्तिकारी आन्दोलन में थे और सन् १९१६ से १९१९ तक रेगुलेशन '३' के अनुसार नजरबन्द रहे। उसके बाद वे अनुशीलन दल की ओर से उत्तर भारत में क्रान्तिकारी संगठन करने के लिए आए। बाद को इनका संगठन शचीन्द्रनाथ सान्याल के संगठन के साथ एक हो गया और इस संयुक्त

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां मंगावें। पता:-हिन्दी साहित्य मंदिर ...

दल का काम 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' रखा गया, जिसके प्रधान नेता शचीन्द्रनाथ सान्याल बने।

शचीन्द्रनाथ सान्याल संगठनकर्त्ता और बम बनाने के विशेषज्ञ थे। वे अच्छे लेखक भी थे और दल की ओर से समय-समय पर गुप्त रूप से बाँटे गए परचों के लेखक भी वे ही थे। पर योगेशचन्द्र चटर्जी बहुत अच्छे संगठन-कर्त्ता होने के साथ ही डकैती आदि कार्य में भी प्रवीण थे। वे इस लेख के लिखते समय संसद्-सदस्य हैं।

योगेशचन्द्र को काकोरी षड्यन्त्र में आजन्म कालेपानी की सजा मिली और १२ साल तक जेल में रहने के बाद वे जब छूटे तो थोड़े दिन बाहर रहने के बाद दूसरे महायुद्ध में फिर जेल भेज दिए गए और इस बार १९४६ तक जेल में रहे।

तीसरे बंगाली नेता श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य थे। वे भी प्रथम महायुद्ध के समय नजरबन्द थे और इसके बाद काकोरी षड्यन्त्र में उनको दस साल की सजा हुई। वे इस समय शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा प्रवर्तित कानपुर के 'दैनिक प्रताप' के मुख्य सम्पादक हैं।

चौथे बंगाली नेता श्री गोविन्दचरण कार थे, जो प्रथम महायुद्ध के समय पुलिस से सन्मुख युद्ध कर गोली लगी हुई हालत में पकड़े गए थे और अण्डमन भेज दिए गए थे। बाद को वे काकोरी षड्यन्त्र में शामिल हुए। अभी-अभी साल भर हुआ उनका देहान्त हो गया।

ये ही चार बंगाली नेता थे। बाकी शचीन्द्रनाथ बख्शी, राजकुमारसिंह, शचीन्द्रनाथ विश्वास, भूपेन्द्र सान्याल और मैं दल के नेताओं में नहीं, बल्कि नौजवान कार्यकर्त्ताओं में थे। काकोरी षड्यन्त्र में गिरफ्तार होते समय मेरी उम्र १७ साल की थी। राजेन्द्र लाहिड़ी को इसमें मैं इसलिए नहीं गिन रहा हूँ कि उन्हें तो पण्डित रामप्रसाद के साथ ही फाँसी की सजा मिली।

यह स्पष्ट है कि पण्डित रामप्रसाद ने जिन बंगाली नेताओं का जिक्र किया है उनमें शचीन्द्रनाथ सान्याल, योगेशचन्द्र चटर्जी, गोविन्दचरण कार और सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य ही हो सकते हैं। बाकी बंगाली क्रान्तिकारी जैसा कि मैं कह चुका, कार्यकर्त्ता मात्र थे। स्वयं मुझे तो पण्डित रामप्रसाद के ही

नेतृत्व में अधिक काम करने का मौका मिला और कभी किसी प्रकार की बदमजगी हुई हो ऐसा याद नहीं आता।

फिर भी पण्डित रामप्रसाद जो बातें इस सम्बन्ध में लिख गए हैं, वे बिलकुल कार्य-कारण सम्बन्ध से बाहर नहीं हैं, जैसा कि आगे चलकर पाठक को मालूम हो जाएगा।

दल के अन्दर स्वाभाविक रूप से दो भाग थे, एक संगठन पर जोर देता था और दूसरा अस्त्र-शस्त्र संग्रह करता था, डकैतियों की योजना बनाता था और उन्हें कार्यान्वित करता था। शेषोक्त भाग के नेता पण्डित रामप्रसाद थे, क्योंकि मैनपुरी षड्यन्त्र के सिलसिले में उन्हें डकैतियाँ डालने तथा अस्त्र-शस्त्र संग्रह करने के सम्बन्ध में बहुत सुन्दर ज्ञान हो गया था। जैसा कि मैंने अपनी आत्मकथा में विस्तार के साथ लिखा है, आतंकवादी क्रान्तिकारी दलों में कई बार अफसरों की हत्या करना और डकैतियाँ डालने को मुख्यता देने की प्रवृत्ति होती है और उसमें जो लोग भाग लेते हैं, वे दल के नेता बन जाते हैं। पर दूसरे लोग ऐसे लोगों को बार-बार असली लक्ष्य की ओर सन्नद्ध करते रहते हैं। इस प्रकार कुछ तनातनी की सृष्टि हो सकती है।

हम लोग १९२५ के २६ सितम्बर को गिरफ्तार कर लिए गए, शचीन्द्र नाथ सान्याल और योगेशचन्द्र चटर्जी इसके पहले गिरफ्तार हो चुके थे, सान्याल को राजद्रोह में सजा हुई थी और योगेशचन्द्र चटर्जी नजरबन्द थे। ये दोनों नेता अपनी-अपनी जेलों से काकोरी षड्यन्त्र के मुकदमे में लाए गए।

यद्यपि बनवारीलाल, बनारसीदास और इन्दुभूषण मुखबिर बन गए थे, फिर भी पुलिस को काफी झूठी गवाहियों और सबूत एकत्र करने पड़े। मुकदमा डांवाडोल था, क्योंकि यदि इस्तगासे की तरफ से पण्डित जगतनारायण मुल्ला थे तो हमारी तरफ से एक डिफेन्स कमेटी थी, जिसमें पंडित मोतीलाल नेहरू, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, श्री गणेशशंकर विद्यार्थी, श्री जवाहरलाल नेहरू, बाबू श्रीप्रकाश आदि किसी-न-किसी रूप में संयुक्त थे और हमारे वकीलों में पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त, चन्द्रभानु गुप्त, मोहनलाल सक्सेना साथ ही कलकत्ता के प्रसिद्ध बैरिस्टर बी० के० चौधरी थे। इसलिए पुलिस को भरोसा नहीं था कि मुखबिरों और झूठी गवाहियों के बावजूद वह सब को सजा दिलवा सकेगी।

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी

अमर शहीद श्री राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी

इस कारण पुलिस की ओर से हमारे नेता यानी सर्वोपरि शचीन्द्रनाथ सान्याल से पुलिस वालों की बातचीत चली। बंगाल के क्रान्तिकारी इतिहास में ढाका षड्यन्त्र का एक उदाहरण मौजूद था, जिसमें पुलिस वालों में और गिरफ्तार क्रान्तिकारियों में एक समझौता हुआ था। इसके अनुसार क्रान्तिकारियों ने कुछ हद तक दूसरों को बिना फँसाए हुए अपना जुर्म स्वीकार कर लिया था और उसके फलस्वरूप पुलिस वालों ने दो एक आदमियों पर जो *फाँसी तथा कालेपानी का मुकदमा बनता था,* उसे इतना नरम कर दिया था कि वह साबित ही न हो। नतीजा यह हुआ कि सब लोगों को थोड़ी-थोड़ी सजा हो गई थी, पर किसी को बड़ी सजा नहीं हुई थी।

इसी तरीके पर यहाँ भी बातचीत चली और स्वाभाविक रूप से यह बातचीत शचीन्द्रनाथ सान्याल के साथ चली। अवश्य वे इसकी सूचना दूसरे नेताओं यानी पण्डित रामप्रसाद, योगेशचन्द्र, सुरेशचन्द्र, त्रिपुरारण दुबलिस, राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी आदि को देते थे। हम लोगों तक इसकी भनक ही आती थी। कभी कोई प्रामाणिक बात नहीं आई। हाँ, जब सजा आदि हो गई और हम लोग जेलों में तितर-बितर कर दिए गए, फाँसियाँ भी हो गईं, तब इसका ब्यौरेवार पता चला।

संक्षेप में इतना ही बताया जाय कि हमारे नेता समझौते में इस बात पर अड़ रहे थे कि किसी को फाँसी न हो जाए। इस बात से पण्डित रामप्रसाद को ही सबसे अधिक फायदा था। (अवश्य दल को फायदा उससे अधिक था) क्योंकि *यह तो सभी को मालूम था और हमारे वकील भी यही कहते थे कि यदि* काकोरी षड्यन्त्र में किसी एक व्यक्ति को फाँसी होती है, तो पण्डित रामप्रसाद को जरूर होगी, बाकी किसे फाँसी होगी या नहीं होगी, इस सम्बन्ध में मतभेद था। दूसरे शब्दों में शचीन्द्रनाथ सान्याल तथा उनके सलाहकार, पण्डित रामप्रसाद के साथ-साथ अन्य फाँसी वालों को बचाने के लिए ही यह वार्ता चला रहे थे।

पर पुलिस वालों ने शायद हिसाब लगा-लगा कर यह देखा कि समझौते के बिना ही उनकी कार्य-सिद्धि हो जायगी क्योंकि हमारा अंग्रेज जज हैमिल्टन बहुत ही सख्त आदमी था। उसकी शोहरत यह थी कि वह जहाँ गुंजाइश रहती थी वहाँ फाँसी जरूर देता था, बड़ी सजाओं की तो बात ही नहीं है। इसलिए

साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहाँ हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी सा...

एकाएक पुलिसवालों ने वार्ता चलानी बन्द कर दी, पर शचीन्द्रनाथ सान्याल ने एक सुयोग्य नेता की तरह किसी को भी कानों-कान इसकी खबर नहीं होने दी, क्योंकि जो आशा बँधी थी, उसे वे तोड़ना नहीं चाहते थे। अब तक वे पण्डित रामप्रसाद से तथा अन्य लोगों से इस मामले में सलाह लेते थे, पर अब उन्होंने इस सम्बन्ध में एकाएक चुप्पी साध ली और यह कहते रहे कि वार्ता चल रही है, पर उसका कोई ब्यौरा नहीं देते थे। विशेषकर उन लोगों को नहीं देते थे, जिनको फाँसी होने की जरा भी सम्भावना थी।

ऐसा मालूम होता है कि पण्डित रामप्रसाद ने इसका यह अर्थ लगाया कि भीतर-भीतर बातचीत जारी है और अब शचीन्द्रनाथ सान्याल फाँसी की सम्भावना युक्त लोगों को खुदा के भरोसे छोड़कर पुलिस से कोई ऐसा पेंच चल रहे हैं, जिससे कि वे स्वयं छूट जाएँ या उन्हें नाम मात्र की सजा हो, इत्यादि। इसी कारण उनके मन में उनके विरुद्ध भावनाएँ उत्पन्न हुईं और वे भीतर-भीतर बुद-बुदाती रहीं।

पण्डित रामप्रसाद की सारी पृष्ठभूमि का यदि हम अध्ययन करें तो हम देखेंगे कि उनका इस प्रकार सन्देह करना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। काकोरी षड्यन्त्र के पहले वे मैनपुरी षड्यन्त्र में फरार थे। उसमें ऐसा हुआ था कि जब सब को सजा हो गई और १९१९ में आम माफी का समय आया, उस समय जेल के अन्दर के सजायाफ़्ता क्रान्तिकारियों ने सरकार से कुछ समझौता कर लिया, जिसके फलस्वरूप वे आम माफी में शामिल कर लिए गए, पर इसमें भी मुकुन्दीलाल को शामिल नहीं किया गया, जो बेचारे आम-माफी में नहीं छूटे और पूरी सजा काटते रहे। यह मुकुन्दीलाल बाद को चलकर काकोरी षड्यन्त्र में आ गए और उन्हें आजन्म कालेपानी की सजा मिली। मैनपुरी षड्यन्त्र में भी जो लोग फरार थे, उनको भी उक्त समझौते का कोई लाभ नहीं हुआ। इसलिए मैनपुरी षड्यन्त्र के भूतपूर्व सदस्य होने के नाते पण्डित रामप्रसाद का यह सन्देह कुछ अनुचित नहीं था और चूंकि काकोरी षड्यन्त्र में परिस्थिति यह थी कि शचीन्द्रनाथ सान्याल ही नेता थे और योगेशचन्द्र चटर्जी से वह सलाह लेते थे, इसलिए यदि पण्डित रामप्रसाद का क्रोध सारे बंगाली नेताओं, यहाँ तक कि बंगालियों पर चला गया, तो इस पर हमें विशेष आश्चर्य नहीं है।

अब प्रश्न यह उठता है कि शचीन्द्रनाथ सान्याल ने रामप्रसाद बिस्मिल को समझौते की असफलता के सम्बन्ध में पूरी बात न बताकर वार्ता जारी है, ऐसा स्वांग रचा, यह कहाँ तक उचित था ? पण्डित रामप्रसाद तपे हुए पुराने क्रान्तिकारी थे, और उनसे यह आशा की जा सकती थी कि वे इस बुरी खबर को, जिसका अर्थ निश्चित फाँसी था, अच्छी तरह झेल लेते, जैसा कि उन्होंने बाद को बड़ी बहादुरी के साथ फाँसी चढ़कर प्रमाणित कर दिया। पर केवल पण्डित रामप्रसाद की बात ही नहीं थी, दूसरे ऐसे लोगों की भी बात थी, जिनको फाँसी की सम्भावना थी। पण्डित रामप्रसाद को तो पूरी बात बताना ठीक होता, इसमें कोई सन्देह नहीं, पर दूसरों का दिल पहले से दुखाने या निराश करने की कोई जरूरत नहीं थी।

मैंने सारी बात पाठकों के सामने रख दी, पाठक इस पर अपनी राय बना सकते हैं। इस सम्बन्ध में दोनों मत के लोग मिलेंगे। शचीन्द्रनाथ सान्याल ने ठीक किया हो या न किया हो, उसके लिए उन पर अधिक-से-अधिक यही दोष लग सकता है कि उन्होंने सही फैसला नहीं किया, उन पर कोई पक्षपात या नैतिक अपराध लागू नहीं हो सकता, पर केवल इतनी-सी बात पर पण्डित रामप्रसाद ने उन नेताओं की निन्दा ही नहीं की बल्कि उन पर प्रान्तीयता का जो आरोप लगाया, वह सम्पूर्ण रूप से अनुचित था, यद्यपि जैसा कि मैं पहले ही लिख चुका हूँ, यह दुर्भाग्यपूर्ण परिणति कार्य-कारण सम्बन्ध से बाहर नहीं थी।

यदि एक या चार या पाँच या दस बंगाली क्रान्तिकारियों ने गलती की भी, (मैं देख चुका हूँ कि उन्होंने कोई गलती नहीं की) तो भी इसको वह रूप देना, जो पण्डित जी ने दिया, सम्पूर्ण रूप से अप्रत्याशित और अनुचित था। इससे अच्छा तो यह था कि वे नाम लेकर उन्हें भविष्य-पीढ़ियों के सामने बुरा कह जाते और उन पर स्पष्ट अभियोग लगाते।

मैं इस अप्रिय और दुर्भाग्यपूर्ण विषय पर इससे अधिक नहीं कहना चाहता। कहीं मैं गलती न कर जाऊँ, इसलिए जो कुछ मैं लिख रहा हूँ, उसके सम्बन्ध में मैंने उस समय के अन्यतम नेता और इस समय संसद्-सदस्य अपने अग्रज तुल्य मित्र श्री विष्णुशरण दुबलिश से बातचीत कर ली है और उन्होंने मुझसे पूरी सहमति प्रकट की है। इस सम्बन्ध में मेरे विद्वान मित्र श्री भगवान

य हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यह
हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

दास माहौर के वे वक्तव्य भी विशेष रूप से ध्यान देने योग्य हैं, कि जब पण्डित रामप्रसाद की आत्मकथा प्रकाशित हुई, उसके बाद भी क्रान्तिकारी आन्दोलन बराबर चलता रहा और उसमें सभी प्रान्तों के लोग कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करते रहे, और किसी मौके पर किसी में कोई प्रान्तीयता देखने में नहीं आई। इसके अलावा मैं एक बात पर और ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि जिन दो व्यक्तियों पर पण्डित रामप्रसाद की बातें विशेषकर लागू होती हैं, उनमें से शचीन्द्रनाथ सान्याल बाद को भी बराबर एक हुतात्मा की तरह काम करते रहे और उसी में वे शहीद भी हो गए। सौभाग्य से योगेश दादा अभी तक जीवित हैं और वे एक जीवित शहीद ही कहे जा सकते हैं।

यहाँ यह बात और उल्लेखनीय है कि श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल, सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य, श्री चटर्जी और श्री कार को छोड़कर उस समय के सभी बंगाली कार्यकर्त्ता उत्तर-प्रदेश के ही निवासी थे और उनका सारा राजनैतिक जीवन इसी प्रदेश में गुज़रा है। श्री चटर्जी और श्री कार भी काकोरी षड्यन्त्र के बाद उत्तर-प्रदेश के ही निवासी हो गए और यहीं इनका राजनैतिक जीवन व्यतीत हुआ। श्री चटर्जी आज भी संसद् में उत्तर-प्रदेश का ही प्रतिनिधित्व करते हैं।

आशा है कि पाठक सारी बातों पर गहराई के साथ विचार करेंगे और शहीद की आत्मकथा को उसी रूप में पढ़ेंगे, जिस रूप में सभी साहित्य पढ़ना चाहिए यानी 'यान्यस्माकम् सुचरितानि तान्येव त्वयोपास्यानि नो इतराणि।'

-साहित्य-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां हैं। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

अमर शहीद श्री अशफ़ाकुल्ला

## २

# मेरी डायरी का एक पृष्ठ

### श्री शिव वर्मा

माँ फिर रो पड़ीं।

अशफ़ाक़ और बिस्मिल का यह शहर कालेज के दिनों में मेरी कल्पना का केन्द्र था। फिर क्रान्तिकारी पार्टी का सदस्य बनने के बाद काकोरी के मुख़बिर की तलाश में काफ़ी दिनों तक इसकी धूल छानता रहा था। अस्तु, यहाँ आने पर पहली इच्छा हुई बिस्मिल की माँ के पैर छूने की। काफ़ी पूछताछ के बाद उनके मकान का पता चला। छोटे से मकान की एक कोठरी में दुनिया की आँखों से अलग वीर-प्रसविनी अपने जीवन के अन्तिम दिन काट रही हैं—Unknown, unnoticed। पास जाकर मैंने पैर छुए। आँखों की रोशनी प्रायः समाप्त-सी हो चुकने के कारण पहचाने बिना ही उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया और पूछा, "तुम कौन हो ?" क्या उत्तर दूँ; कुछ समझ में नहीं आया। थोड़ी देर के बाद उन्होंने फिर पूछा, "कहाँ से आये हो बेटा ?" इस बार साहस कर मैंने परिचय दिया—"गोरखपुर जेल में अपने साथ किसी को ले गयीं थीं, अपना बेटा बनाकर ?" अपनी ओर खींचकर सिर पर हाथ फेरते हुए माँ ने पूछा, "तुम वही हो बेटा ? कहाँ थे अब तक ? मैं तो तुम्हें बहुत याद करती रही, पर जब तुम्हारा आना एकदम ही बन्द हो गया तो समझी कि तुम भी कहीं उसी रास्ते पर चले गये।" माँ का दिल भर आया। कितने ही पुराने घावों पर एक साथ ठेस लगी। अपने अच्छे दिनों की याद, बिस्मिल की याद, फाँसी, तख़्ता, रस्सी और जल्लाद की याद, जवान बेटे की जलती हुई चिता की याद और न जाने कितनी यादों से उनके ज्योतिहीन नेत्रों में पानी भर आया—वे रो पड़ीं। बात छेड़ने के लिए मैंने पूछा "रमेश (बिस्मिल का छोटा भाई) कहाँ है ?" मुझे क्या पता था कि मेरा प्रश्न उनकी आँखों में बरसात भर लायेगा। वे ज़ोर से रो पड़ीं। बरसों का रुका बाँध टूट पड़ा सैलाब बनकर। कुछ देर बाद अपने को सम्हालकर उन्होंने कहानी सुनानी शुरू की।

4-मंडल व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
2। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:—हिन्दी साहित्य मंदिर

आरम्भ में लोगों ने पुलिस के डर से उन के घर आना छोड़ दिया। वृद्ध पिता की कोई बँधी हुई आमदनी न थी। कुछ साल बाद रमेश बीमार पड़ा। दवा-इलाज के अभाव में बीमारी जड़ पकड़ती गई। घर का सब कुछ बिक जाने पर भी रमेश का इलाज न हो पाया। पथ्य और उपचार के अभाव में तपेदिक का शिकार बनकर एक दिन वह माँ को निपूती छोड़कर चला गया। पिता को कोरी हमदर्दी दिखाने वालों से चिढ़ हो गई। वे बेहद चिड़चिड़े हो गये। घर का सब कुछ तो बिक ही चुका था। अस्तु, फ़ाकों से तंग आकर एक दिन वे भी चले गये, माँ को संसार में अनाथ और अकेली छोड़कर! पेट में दो दाना अनाज तो डालना ही था। अस्तु, मकान का एक भाग किराये पर उठाने का निश्चय किया। पुलिस के डर से कोई किरायेदार भी नहीं आया और जब आया तब पुलिस का ही एक आदमी! लोगों ने बदनाम किया कि माँ का सम्पर्क तो पुलिस से हो गया है। उनकी दुनिया से बचा हुआ प्रकाश भी चला गया। पुत्र खोया, लाल खोया, अन्त में बचा था नाम, सो वह भी चला गया!

उनकी आंखों से पानी की धार बहते देखकर मेरे सामने गोरखपुर की फाँसी की कोठरी घूम गई। काकोरी के चारों अभियुक्तों के जीवन का फ़ैसला हो चुका था—To be hanged by the neck till they be dead. **(प्राण निकल जाने तक गले में फन्दा डालकर लटका दिया जाय।)** फाँसी के एक दिन पहले अंतिम मुलाक़ात का दिन था। समाचार पाकर पिता गोरखपुर आ गये। माँ का कोमल हृदय शायद इस आघात को सँभाल न सके, यही समझकर उन्हें वे साथ न लाये थे। प्रातः हम लोग जेल के फाटक पर पहुँचे तो देखा कि माँ वहाँ पहले से ही मौजूद है! अन्दर जाने के समय सवाल आया मेरा, मुझे कैसे अन्दर ले जाया जाय। उस समय माँ का साहस और पटुता देखकर सभी दंग रह गये। मुझे खामोश रहने का आदेश देकर उन्होंने मुझे अपने साथ ले लिया। पूछने पर यह कह दिया, "मेरी बहन का लड़का है।" हम लोग अन्दर पहुँचे। माँ को देखकर रामप्रसाद रो पड़े, किन्तु माँ की आंखों में आंसुओं का लेश भी न था। उन्होंने ऊँचे स्वर में कहा—"मैं तो समझती थी कि मेरा बेटा बहादुर है, जिसके नाम से अंग्रेज़ी सरकार भी कांपती है। मुझे नहीं पता था कि वह मौत से डरता है। तुम्हें यदि रो कर ही मरना था तो व्यर्थ इस

काम में आवे।" बिस्मिल ने आश्वासन दिया। आंसू मौत से डर के नहीं वरन् मां के प्रति मोह के थे। "मौत से मैं नहीं डरता मां, तुम विश्वास करो।" मां ने मेरा हाथ पकड़कर आगे कर दिया। यह तुम्हारे आदमी हैं। पार्टी के बारे में जो चाहो इनसे कह सकते हो। उस समय मां का स्वरूप देखकर जेल के अधिकारी तक कहने को बाध्य हुए कि बहादुर मां का बेटा ही बहादुर हो सकता है।

उस दिन समय पर विजय हुई थी मां की और आज मां पर विजय पाई है समय ने। आघात पर आघात देकर उसने उनके बहादुर हृदय को भी कातर बना दिया है। जिस मां की आंखों के दोनों ही तारे विलीन हो चुके हों उसकी आंखों की ज्योति यदि चली जाय तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? वहां तो रोज ही अंधेरे बादलों से बरसात उमड़ती रहेगी।

कैसी है यह दुनिया, मैंने सोचा। एक ओर 'बिस्मिल जिन्दाबाद' के नारे और चुनाव में वोट लेने के लिए बिस्मिल द्वार का निर्माण और दूसरी ओर उनके घरवालों की परछाई तक से भागना और उनकी निपूती बेवा मां पर बदनामी की मार! एक ओर शहीद परिवार सहायक फण्ड के नाम पर हजारों का चन्दा और दूसरी ओर पथ्य और दवादारू तक के लिए पैसों के अभाव में बिस्मिल के भाई का टी० बी० से घुटकर मरना! क्या यही है शहीदों का आदर और उनकी पूजा?

फिर आऊंगा मां, कहकर मैं चला आया, मन पर न जाने कितना बड़ा भार लिए।

शाहजहांपुर
२३, फरवरी १९४६

व हिन्दी की अन्य उत्तम पुस्तकें हमारे यहां
। बड़ा सूचीपत्र मंगावें। पता:-हिन्दी ... मंदिर